इस्लाही खुतबात

14

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी उस्मानी

जिल्द - 14

तक़रीरें

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

हिन्दी अनुवादः मुहम्मद इमरान क़ासमी

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो (प्रा. लि.)

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज

नई दिल्ली-110002

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	इस्लाही ख़ुतबात जिल्द– 14
तक़रीरें	मौलाना मुहम्मद तक़ी उस्मानी
हिन्दी अनुवाद	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	2100
प्रकाशन वर्ष	सितम्बर 2005
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (0131-2442408)

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

2158, एम. पी. स्ट्रीट, पटौदी हाऊस, दरिया गंज, नई देहली-110002

फ़ोन आफ़िस, 23289786, 23289159 आवास, 23280786

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

क्र.सं.	क्या?	कहाँ?
	शबे क़द्र की फ़ज़ीलत	
1.	रमज़ान के आख़िरी दशक की अहमियत	18
2.	आख़िरी दशक में हुज़ूरे पाक सल्ल० की कैफ़ियत	19
3.	आम दिनों में तहज्जुद के लिये जागने का अन्दाज़	19
4.	आख़िरी दशक में घर वालों को जगाना	20
5.	पिछली उम्मतों के इबादत-गुज़ारों की उम्रें	20
6.	सहाबा-ए-किराम रज़ि० को हसरत	21
7.	शबे-क़द्र ख़ैर ही ख़ैर है	21
8.	हज़ार महीनों से कहीं ज़्यादा बेहतर है	22
9.	इस नेमत को तलाश करो	22
10.	यह रात इस तरह गुज़ारो	23
11.	यह रात जलसे और तक़रीरों के लिये नहीं है	24
12.	यह तन्हाई में गुज़ारने की रात है	25
13.	हर काम को उसके दर्जे पर रखो	25
14.	ये माँगने की रातें हैं	26
15.	रमज़ान सलामती से गुज़ार दो	26
	हज एक आशिक़ाना इबादत	
1.	हज के महीने	27
2.	शव्वाल के महीने की फ़ज़ीलत	28
3.	शव्वाल का महीना और ख़ैर की चीज़ें	28
4.	ज़ीक़ादा के महीने की फ़ज़ीलत	29
5.	ज़ीक़ादा का महीना मन्हूस नहीं	29
6.	हज इस्लाम का अहम रुक्न है	29

हज में देरी क्यों?

कलिमा-ए-तय्यिबा के तकाज़े और अल्लाह वालों का साथ

क्र.सं.	क्या?	कहाँ?
	मुसलमानों पर हमले की सूरत में हमारा कर्तव्य	

दर्स ख़त्मे बुख़ारी शरीफ़

कामयाब मोमिन कौन?

नमाज़ की अहमियत और उसका सही तरीक़ा

नमाज़ का सुन्नत तरीक़ा

क्र.सं.	क्या?	कहाँ?
	खुशू के तीन दर्जे	
1.	तम्हीद	173
2.	रुकूअ़ और सज्दे में हाथों की उंगलियाँ	174
3.	अत्तहिय्यात में बैठने का तरीक़ा	174
4.	सलाम फैरने का तरीक़ा	174
5.	खुशू की हक़ीक़त	175
6.	वजूद के यक़ीन के लिये नज़र आना ज़रूरी नहीं	175
7.	हवाई जहाज़ में इनसान मौजूद हैं	176
8.	रोशनी सूरज का पता देती है	177
9.	हर चीज़ अल्लाह तआ़ला के वजूद पर दलालत कर रही है	177
10.	अलफ़ाज़ की तरफ़ ध्यान पहली सीढ़ी	178
11.	खुशू की पहली सीढ़ी	178
12.	मायने की तरफ़ ध्यान दूसरी सीढ़ी	179
13.	नमाज़ में ख़्यालात आने की बड़ी वजह	180
14.	अगर ध्यान भटक जाये तो वापस आ जाओ	180
15.	खुशू हांसिल करने के लिये मश्क़ और मेहनत	181
16.	तीसरी सीढ़ी अल्लाह तआ़ला का ध्यान	181
	नमाज़ में आने वाले ख़्यालात से बचने का तरीक़ा	
1.	तम्हीद	183
2.	खुशू के तीन दर्जे	184
3.	ख़्यालात आने की शिकायत	184
4.	नमाज़ के मुक़द्दमात	185
5.	नमाज़ का पहला मुक़द्दमा "तहारत"	185

बुराई का बदला अच्छाई से दो

ज़िन्दगी के ये लम्हात बहुत क़ीमती हैं

ज़कात की अहमियत और उसका निसाब

क्र.सं.	क्या?	कहाँ?
	ज़कात के चन्द अहम मसाइल	
1.	तम्हीद	230
2.	निसाब के मालिक पर ज़कात वाजिब है	231
3.	बाप की ज़कात बेटे के लिए काफ़ी नहीं	231
4.	माल पर साल गुज़रने का मसला	232
5.	दो दिन पहले आने वाले माल में ज़कात	232
6.	ज़कात किन चीज़ों में फ़र्ज़ होती है?	233
7.	ज़ेवर किसकी मिल्कियत होगा?	233
8.	ज़ेवर की ज़कात अदा करने का तरीक़ा	234
9.	तिजारत के माल में ज़कात	235
10.	कम्पनी के शेयरों में ज़कात	235
11.	मकान या प्लाट में ज़कात	236
12.	कच्चे माल में ज़कात	236
13.	बेटे की तरफ़ से बाप का ज़कात अदा करना	236
14.	बीवी की तरफ़ से शौहर का ज़कात अदा करना	237
15.	ज़ेवर की ज़कात न निकालने पर वईद	237

प्रकाशक की ओर से

अल्हम्दु लिल्लाह "इस्लाही ख़ुतबात" की चौदहवीं जिल्द आप तक पहँचाने की हम सआदत हासिल कर रहे हैं। तेरहवीं जिल्द की मक़बूलियत और उसके लाभकारी होने के बाद मुख़्तलिफ़ हज़रात की तरफ़ से चौदहवीं जिल्द को जल्द से जल्द शाया करने का शदीद तक़ाज़ा हुआ, और अब अल्हम्दु लिल्लाह, दिन रात की मेहनत और कोशिश के नतीजे में सिर्फ़ एक साल के अन्दर यह जिल्द तैयार होकर सामने आ गयी। इस जिल्द की तैयारी में बिरादरे मुकर्रम मौलाना अ़ब्दुल्लाह मेमन साहिब ने अपनी दूसरी व्यस्तताओं के साथ-साथ इस काम के लिए अपना क़ीमती वक़्त निकाला, और दिन रात की मेहनत और कोशिश करके चौदहवीं जिल्द के लिए मैटर तैयार किया। अल्लाह तआ़ला उनकी सेहत और उम्र में बरकत अ़ता फ़रमाए और मज़ीद आगे काम जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए। आमीन।

तमाम पढ़ने वालों से दुआ़ की दरख़्वास्त है कि अल्लाह तआ़ला इस सिलसिले को और आगे जारी रखने की हिम्मत और तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, और इसके लिए साधनों और असबाब में आसानी पैदा फ़रमाए। और इस काम को इख़्लास के साथ जारी रखने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए।

दुआ़ओं का तालिब

प्रकाशक

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

शबे-क़द्र की फ़ज़ीलत

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِينُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِo بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ o اِنَّآ اَنْزَلْنٰهُ فِيْ لَيْلَةِ الْقَدْرِ o وَمَآ اَدْرٰكَ مَا لَيْلَةُ الْقَدْرِ o لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِّنْ اَلْفِ شَهْرٍ o تَنَزَّلُ الْمَلٰٓئِكَةُ وَالرُّوْحُ فِيْهَا بِاِذْنِ رَبِّهِمْ مِنْ كُلِّ اَمْرٍ o سَلٰمٌ هِيَ حَتّٰى مَطْلَعِ الْفَجْرِ o (سورة القدر)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين o

रमज़ान के आख़िरी दशक की अहमियत

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! अल्लाह तआ़ला का बेहद करम है कि उसने हमें और आपको अपनी ज़िन्दगी में एक और रमज़ान मुबारक अ़ता फ़रमाया। अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से इस रमज़ान के बीस दिन गुज़र गये और अब रमज़ान मुबारक का आख़िरी अ़श्रा (आख़िरी दशक) शुरू हो रहा है। यह आख़िरी दशक (यानी आख़िरी दस दिन) पूरे रमज़ान का निचोड़ है। अल्लाह तआ़ला ने इस आख़िरी दशक को ऐसी ख़ुसूसियात और फ़ज़ाइल से नवाज़ा है

कि सारे साल फिर ऐसे दिन दोबारा आने वाले नहीं।

आख़िरी दशक में हुज़ूरे पाक सल्ल० की कैफ़ियत

यूँ तो रमज़ान मुबारक का पूरा महीना ही मुक़द्दस, पाकीज़ा और मुबारक है, इसकी एक-एक घड़ी और इसका एक-एक लम्हा क़ाबिले-क़द्र है, लेकिन ख़ास तौर पर यह आख़िरी दशक (आख़िरी दस दिन) नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात के मुताबिक़ अल्लाह तआ़ला की इबादत के लिये ख़ास कैफ़ियतें रखता है। हदीस में आता है कि जब यह आख़िरी दशक दाख़िल होता तो हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की यह हालत होती किः

شَدَّ مئزره وَاَحيٰی لیله و أیقظ أهله (صحیح بخاری، فضل لیلة القدر)

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम अपनी कमर कस लेते, यानी रात भर इबादत में मेहनत करने के लिये तैयार हो जाते और अपनी रात जाग कर गुज़ारते, और अपने घर वालों को भी जगाते।

आ़म दिनों में भी हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तहज्जुद की नमाज़ रोज़ाना पढ़ा करते थे जिसकी रक्अ़तें लम्बी-लम्बी होती थीं। कभी आप तहज्जुद में आधी रात गुज़ार देते थे और कभी एक तिहाई रात गुज़ार देते थे। लेकिन रमज़ान मुबारक के आख़िरी दस दिनों के बारे में हज़रत आ़यशा रज़ियल्लाहु अ़न्हा फ़रमाती हैं कि इन रातों में इबादत के लिये आप अपनी कमर कस लेते थे।

आ़म दिनों में तहज्जुद के लिये जागने का अन्दाज़

आ़म दिनों में आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मामूल यह था कि जब आप तहज्जुद के लिये जागते तो इस तरह उठते किः

اِنْتَعَلَ رُوَيْدًا وَاَخَذَ رِدَآءَهٗ رُوَيْدًا ثُمَّ فَتَحَ الْبَابَ رُوَيْدًا.

(نسائی، کتاب عشرة النساء باب الغیرة)

आहिस्ता से जूते पहनते और धीरे से अपनी चादर उठाते। फिर

आहिस्ता से दरवाज़ा खोलते, ताकि कहीं ऐसा न हो कि मेरे उठने की आवाज़ और दरवाज़ा खोलने की आवाज़ से आयशा सिद्दीक़ा की आँख खुल जाये। क्योंकि तहज्जुद पढ़ने के आदाब में यह बात दाख़िल है कि अगर कोई शख़्स ख़ुद उठ गया है और अल्लाह तआला ने अपने फ़ज़्ल से उसको उठने और तहज्जुद पढ़ने की तौफ़ीक़ दे दी है, तो उसके लिये यह मुनासिब नहीं कि जब वह उठे तो पूरे मौहल्ले वालों को भी जगाये, या अपने घर वालों को भी जगाये। बल्कि उसको इस बात का ख़्याल रखना चाहिये कि उसके किसी अमल से किसी सोने वाले की आँख न खुले, ताकि सोने वाले को तकलीफ़ न हो। क्योंकि तहज्जुद पढ़ना फ़र्ज़ व वाजिब नहीं, लिहाज़ा अपने तहज्जुद की वजह से किसी दूसरे को तकलीफ़ पहुँचाना और उसकी नींद में ख़लल डालना जायज़ नहीं। इसलिये हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जब तहज्जुद पढ़ने के लिये उठते तो इस तरह उठते कि हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की आँख न खुले।

आख़िरी दशक में घर वालों को जगाना

लेकिन रमज़ान मुबारक के आख़िरी दस दिनों के बारे में आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का मामूल था कि अपने सब घर वालों को भी जगाते और उनसे फ़रमाते कि उठ जाओ, यह आख़िरी दशक है। यह अल्लाह तआला की रहमतों का मौसमे बहार है। अल्लाह तआला की रहमतों की घटायें बरस रही हैं, ऐसे वक़्त में सोते रहना मेहरूमी की बात है। इसलिये जाग कर अल्लाह तआला की उन रहमतों को अपने दामन में भर लो।

पिछली उम्मतों के इबादत-गुज़ारों की उम्रें

इसी आख़िरी दशक (आख़िरी दस दिनों) में अल्लाह तआला ने एक रात "शबे-क़द्र" रखी है जो एक हज़ार महीनों से बेहतर है।

अल्लाह तआला ने यह क्यों फ़रमाया कि यह एक हज़ार महीनों से बेहतर है? इसलिये कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम के सामने पिछली उम्मतों के इबादत करने वालों का ज़िक्र फ़रमाया कि उनकी उम्रें बड़ी लम्बी-लम्बी होती थीं। ख़ुद क़ुरआन करीम में हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम के बारे में इरशाद है:

فَلَبِثَ فِيهِمْ أَلْفَ سَنَةٍ إِلَّا خَمْسِينَ عَامًا.

यानी हज़रत नूह अ़लैहिस्सलाम की उम्र नौ सौ पचास साल हुई। उनके अ़लावा और उम्मतों के लोगों की उम्रें भी लम्बी-लम्बी होती थीं। किसी की उम्र पाँच सौ साल हुई, किसी की उम्र सात सौ साल हुई, किसी की उम्र हज़ार साल हुई।

सहाबा-ए-किराम रज़ि० को हसरत

जब सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के सामने उनकी उम्रों का ज़िक्र आया तो सहाबा-ए-किराम ने अपनी हसरत का इज़्हार फ़रमाया कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! ये लम्बी लम्बी उम्रों वाले लोग थे और जितनी उम्र लम्बी हुई उतनी ही उनको इबादत करने का और अल्लाह तआला की इताअ़त का ज़्यादा मौक़ा मिला, जिसके नतीजे में उन्होंने अल्लाह की रहमतों से अपने दामन भर लिये। क्योंकि सारी उम्र इबादत में गुज़ारी तो उनकी नमाज़ों की तादाद ज़्यादा हुई, रोज़ों की तादाद ज़्यादा हुई, ज़िक्र व तस्बीह की तादाद ज़्यादा हुई। और हमारी उम्रें तो कम हैं, हम कितनी ही इबादतें कर लें, फिर भी उनके बराबर नहीं पहुँच सकते जिनकी उम्रें लम्बी हुईं। क्या हम उनसे पीछे रह जायेंगे?

शबे-क़द्र ख़ैर ही ख़ैर है

इस पर अल्लाह तआ़ला ने यह सूरः क़द्र नाज़िल फ़रमाई जिसमें बता दिया कि ऐ उम्मते मुहम्मदिया! तुम घबराओ नहीं, बेशक तुम्हारी उम्रें उन लोगों के मुक़ाबले में कम हैं, लेकिन हम तुम्हें एक ऐसी रात

दे देते हैं कि अगर उस एक रात इबादत कर लोगे तो वह एक रात एक हज़ार महीनों से बेहतर होगी। यहाँ अल्लाह तआ़ला ने "ख़ैर" का लफ़्ज़ इस्तेमाल फ़रमाया है। अ़रबी जानने वाले जानते हैं कि ख़ैर के मायने हैं: "बहुत बेहतर"।

देखिये! दो चीज़ों के दरमियान एक उन्नीस बीस का फ़र्क़ होता है, उस मौक़े पर "ख़ैर" का लफ़्ज़ नहीं बोला जाता और यह नहीं कहा जायेगा कि "बीस" उन्नीस के मुक़ाबले में "बेहतर" है। लेकिन जब दो चीज़ों में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ हो तो उस वक़्त "बेहतर" का लफ़्ज़ बोला जाता है। जैसे यूँ बोला जा सकता है कि "आसमान" ज़मीन से ख़ैर "बेहतर" है।

हज़ार महीनों से कहीं ज़्यादा बेहतर है

इसलिये क़ुरआन करीम ने यह जो फ़रमाया है कि:

لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِّنْ اَلْفِ شَهْرٍ.

इसके मायने यह नहीं हैं कि शबे-क़द्र एक हज़ार महीने के बराबर है, न यह मायने हैं कि वह रात एक हज़ार एक महीने के बराबर है। बल्कि यह रात एक हज़ार महीने से कहीं ज़्यादा बेहतर है जिसका हिसाब हम नहीं कर सकते।

इस नेमत को तलाश करो

अलबत्ता यह अल्लाह तआ़ला की हिक्मत है कि इतनी बड़ी नेमत अगर वैसे ही दे दी जाती तो नाक़द्री होती। इसलिये फ़रमाया कि इस नेमत को हासिल करने के लिये थोड़ी सी तकलीफ़ भी उठाओ। वह यह कि हम तुम्हें यह नहीं बताते कि यह शबे-क़द्र कौनसी रात में है? अलबत्ता इतना बता देते हैं कि यह आख़िरी दशक (यानी रमज़ान शरीफ़ के आख़िरी दस दिनों) की ताक़ (बेजोड़) रातों में आती है, यानी इक्कीसवीं रात, तैईस्वीं रात, पच्चीसवीं रात, सत्ताईसवीं रात

और उनत्तीसवीं रात में से किसी एक रात में यह शबे-क़द्र आती है। और यह भी ज़रूरी नहीं कि अगर एक साल शबे-क़द्र पच्चीसवीं रात में आये तो अगले साल भी पच्चीसवीं रात में आयेगी, बल्कि यह हो सकता है कि एक साल यह रात इक्कीसवीं रात में आये और दूसरे साल पच्चीसवीं रात में आ जाये और तीसरे साल सत्ताईसवीं रात में आ जाये। मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) रातों में बदल सकती है। लिहाज़ा अगर शबे-क़द्र को पाना है और उसकी फ़ज़ीलत हासिल करनी है तो फिर इन पाँचों रातों में जागने की पाबन्दी करें। इतनी बड़ी फ़ज़ीलत हासिल करने के लिये इन पाँच रातों में जाग लेना कोई बड़ी बात नहीं।

यह रात इस तरह गुज़ारो

बाज़ लोग इस रात के लम्हों को फ़ुज़ूल गुज़ार देते हैं। बाज़ लोग इसकी कोशिश करते हैं कि वह रात नेक कामों में गुज़रे लेकिन हक़ीक़त में नेकी का फ़ायदा हासिल नहीं होता। यह रात तो अल्लाह तआ़ला ने इसलिये बनाई है कि बन्दा तन्हाई और ऐकान्त में अल्लाह तआ़ला की बारगाह में हाज़िर होकर अपने रब के सामने अपनी ज़रूरत पेश करे, इबादत करे, नमाज़ पढ़े, तिलावत करे, ज़िक्र करे, तस्बीहात पढ़े, दुआ़यें करे। इस रात में सब से अच्छी इबादत यह है कि आदमी लम्बी-लम्बी सूरतों के साथ नवाफ़िल पढ़े। उन नवाफ़िलों में लम्बा क़ियाम करे, लम्बा रुकूअ़ करे, लम्बा सज्दा करे और रुकूअ़ और सज्दे में मसनून (हुज़ूरे पाक से साबित) दुआ़यें माँगे।

दूसरे नम्बर पर तिलावत करे, तीसरे नम्बर पर ज़िक्र और तस्बीह पढ़े। जैसे:

سُبْحَانَ اللّٰهِ وَبِحَمْدِهٖ سُبْحَانَ اللّٰهِ الْعَظِيْمِ.

सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम

की तस्बीह पढ़े, तीसरा कलिमा पढ़े, दुरूद शरीफ़ पढ़े, इस्तिग़फ़ार की तस्बीह करे और चलते फिरते उठते बैठते ये तस्बीहें ज़बान पर

जारी रहें। अगर किसी काम में भी मशग़ूल हो तो उस वक़्त भी तुम्हारी ज़बान अल्लाह के ज़िक्र से तर रहे। और इस रात में दुआयें करें। क्योंकि इन रातों में ख़ास तौर से अल्लाह तआला को दुआयें बहुत पसन्द हैं। इसलिये अपनी तमाम हाजतें (ज़रूरतें) अल्लाह तआला से माँगो। अगर दुनिया की हाजत माँगोगे तो उस पर भी सवाब मिलेगा। जैसे आप यह दुआ कर रहे हैं कि या अल्लाह! मेरा क़र्ज़ अदा करवा दे। यह दुनिया की हाजत है, मगर अल्लाह तआला इस पर भी सवाब अता फ़रमाएँगे। या मिसाल के तौर पर आप दुआ कर रहे हैं कि ऐ अल्लाह! मुझे रिज़्क़ दे दे और हलाल रोज़गार दे दे। यह दुनिया की हाजत है, मगर अल्लाह तआला इस पर भी सवाब अता फ़रमाएँगे। बहरहाल! यह रात इन कामों के लिये है।

यह रात जलसे और तक़रीरों के लिये नहीं है

लेकिन बाज़ लोगों ने यह रात सामूहिक कामों के लिये बना दी और इसको मेले की तरह करने की रात बना दी कि आज फ़लाँ साहिब की तक़रीर होगी, जलसा होगा, दावत होगी और खाना खिलाया जाएगा। अब सारा वक़्त इन्हीं कामों की भेंट हो रहा है।

अरे भाई! इस रात की फ़ज़ीलत बयान करने के लिये और इस रात को गुज़ारने का तरीक़ा सिखाने के लिये जलसा और तक़रीर पहले कर लो और जब यह रात आ जाये तो फिर इबादत में लग जाओ। क्योंकि यह रात अमल करने की रात है, इस रात में जलसा व तक़रीर करना ऐसा है जैसे कोई शख़्स मैदान-ए-जंग में जाकर ट्रेनिंग हासिल करना शुरू कर दे। मैदान-ए-जंग में आने से पहले ट्रेनिंग हासिल कर लो, अगर यहाँ आकर तुम ट्रेनिंग हासिल करोगे तो मामला बिगड़ जायेगा। इसलिये कि यह वक़्त ट्रेनिंग हासिल करने का नहीं है बल्कि यह वक़्त तो लड़ने का है। इसी तरह यह रात तालीम हासिल करने और सीखने के लिये नहीं है बल्कि अमल करने की रात है। इसलिये इस रात को तक़रीरों में और जलसों और पार्टियों में ज़ाया

करना यह समय की नाक़द्री है।

यह तन्हाई में गुज़ारने की रात है

यह रात तो इस काम की है कि आदमी तन्हाई के एक कोने में बैठा हुआ हो और वह हो और उसका अल्लाह हो, और अल्लाह तआ़ला के साथ ताल्लुक़ क़ायम किया हुआ हो, और अल्लाह तआ़ला से दुआयें और दरख़्वास्त कर रहा हो। यह है इस रात का सही इस्तेमाल। इस रात में लोगों ने अपनी तरफ़ से मेले-ठेले बना दिये हैं, इससे परहेज़ करो और इसके एक-एक लम्हे को ग़नीमत समझो और तन्हाई में इबादत करने की कोशिश करो।

शरीअ़त में सामूहिक नफ़्ली इबादात भी पसन्दीदा नहीं, लिहाज़ा इस रात में जो शबीने होते हैं, ये भी पसन्दीदा नहीं। बेहतर यह है कि इबादत तन्हाई में हो, क्योंकि इन शबीनों में बहुत सी ख़राबियाँ हो जाती हैं। हाँ! अगर किसी शख़्स को यह अन्देशा है कि अगर मैं घर पर रहूँगा तो सो जाऊँगा, ऐसा शख़्स मस्जिद में आकर इबादत कर ले ताकि उसकी नींद भाग जाए। इस हद तक गुंजाइश है। लेकिन यह बात समझ लें कि जो फ़ज़ीलत घर के कोने में बैठकर इबादत करने में हासिल होगी, मस्जिद में आकर इबादत करने में वह फ़ज़ीलत हासिल नहीं होगी। हाँ अगर कोई मजबूरी हो तो दूसरी बात है।

हर काम को उसके दर्जे पर रखो

अल्लाह तआ़ला ने हर चीज़ को उसके दर्जे पर रखा है। जैसे जो नमाज़ें फ़र्ज़ हैं, उनके बारे में तो यह ताकीद है कि मस्जिद में आकर सब के साथ जमाअ़त से अदा करो। लेकिन नफ़्ली नमाज़ों के लिये ताकीद यह है कि उनको घर में अदा करो। तन्हाई में पढ़ो और इकट्ठे होने से परहेज़ करो। इसी वजह से नफ़्लों की जमाअ़त जायज़ ही नहीं। बहरहाल! जब शरीअ़त की तरफ़ आओ तो फिर शरीअ़त के अहकाम का लिहाज़ करो। यह न हो कि दीन पर अ़मल करने के जोश में आकर शरीअ़त के अहकाम ज़ाया करना शुरू कर दो।

ये माँगने की रातें हैं

बहरहाल! इस तरह ये बाक़ी रातें गुज़ारने की ज़रूरत है। अगर अल्लाह तआ़ला हमें इन रातों में इबादत की तौफ़ीक़ दे दे तो मालूम नहीं कि किस-किस का बेड़ा पार हो जाये। लिहाज़ा इन रातों में अपने दुनिया के उद्देश्यों, दीन के उद्देश्यों, रोज़गार के उद्देश्यों, मुल्क व मिल्लत और क़ौम के उद्देश्यों, सब को अल्लाह तआ़ला की बारगाह में पेश कर दो और दुआ़ करो कि या अल्लाह! अपने फ़ज़्ल व करम से हमारे हालात की इस्लाह (दुरुस्तगी) फ़रमा दे।

अगर इस तरह हम ने ये रातें गुज़ार लीं फिर इन्शा-अल्लाह यह रमज़ान भी मुबारक, ये रातें भी मुबारक, इसकी दुआ़यें भी मुबारक। अल्लाह तआ़ला इस रमज़ान का एक-एक लम्हा सही जगह ख़र्च करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन!

रमज़ान सलामती से गुज़ार दो

जैसा कि रमज़ान के शुरू में अ़र्ज़ किया था कि एक हदीस में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वायदा फ़रमाया है किः

من سلم له رمضان سلمت له السنة

यानी जिस शख़्स का रमज़ान सलामती के साथ गुज़र जाये, उसका साल भी सलामती के साथ गुज़रता है।

लिहाज़ा रमज़ान मुबारक के जितने दिन बाक़ी हैं उनमें इस बात की कोशिश कर लें कि ये सलामती के साथ गुज़र जायें। यानी इनमें कोई गुनाह न होने पाये। न कान का गुनाह हो, न ज़बान का गुनाह हो, न हाथ-पाँव का कोई गुनाह हो। और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ रुजू हो। अगर इस तरह सलामती के साथ रमज़ान गुज़ार दिया जाये तो इन्शा-अल्लाह बाक़ी के साल भर के लिये सलामती और ख़ैर का वायदा है। अल्लाह तआ़ला मुझे और आपको भी इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۝

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

हज एक आशिक़ाना इबादत

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ اِلَيْهِ سَبِيْلًا ○ (سورۂ آل عمران: آیت ۹۷)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين ○

हज के महीने

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! रमज़ान मुबारक गुज़र जाने के बाद शव्वाल का महीना शुरू हो चुका है। शव्वाल का महीना उन महीनों में शुमार होता है जिनको अल्लाह तआला ने "अश्हुरे हज" यानी हज के महीने कहा है। क्योंकि शव्वाल, ज़ीक़ादा और ज़िलहिज्जा के दस दिन को अल्लाह तआला ने हज के महीने क़रार दिये हैं।

रमज़ान मुबारक से लेकर ज़िलहिज्जा तक के दस दिनों को अल्लाह तआला ने ऐसी इबादतों के लिये ख़ास फ़रमाया है जो ख़ास इन्हीं दिनों में अन्जाम दी जा सकती हैं। चुनाँचे रमज़ान का महीना अल्लाह तआला ने रोज़े के लिये और तरावीह के लिये मुक़र्रर फ़रमाया

और शव्वाल, ज़ीक़ादा और ज़िलहिज्जा के महीने हज के लिये और क़ुरबानी के लिये मुक़र्रर फ़रमाये। हज और क़ुरबानी ऐसी इबादतें हैं जो इन दिनों के अलावा दूसरे दिनों में अन्जाम नहीं दी जा सकतीं। गोया कि इबादत का एक सिलसिला है जो रमज़ान मुबारक से शुरू होता है और ज़िलहिज्जा पर जाकर ख़त्म होता है। इसलिये इन महीनों को अल्लाह की तरफ़ से बड़ा तक़द्दुस (पवित्रता) हासिल है।

शव्वाल के महीने की फ़ज़ीलत

रमज़ान मुबारक तो तमाम महीनों में मुबारक महीना है। शव्वाल के बारे में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स शव्वाल के महीने में छह रोज़े रख ले तो अल्लाह तआ़ला उसको सारे साल रोज़े रखने का सवाब अ़ता फ़रमाते हैं। क्योंकि हर नेकी का सवाब अल्लाह तआ़ला दस गुना अ़ता फ़रमाते हैं। लिहाज़ा जब एक शख़्स ने रमज़ान मुबारक में तीस रोज़े रखे तो उसका दस गुना तीन सौ हो गया और छह रोज़े शव्वाल में रखे तो उसका दस गुना साठ हो गया। इस तरह तमाम रोज़ों का सवाब मिलकर तीन सौ साठ रोज़ों के बराबर हो गया, और साल के तीन सौ साठ दिन होते हैं।

इसलिये फ़रमाया कि अगर किसी शख़्स ने रमज़ान के साथ शव्वाल में छह रोज़े रख लिये तो गोया उसने पूरे साल के रोज़े रखे। शव्वाल के छह रोज़ों के ज़रिये अल्लाह तआ़ला यह सवाब अ़ता फ़रमाते हैं। बेहतर यह है कि ये छह रोज़े ईदुल-फ़ित्र के फ़ौरन बाद रख लिये जायें। लेकिन अगर पूरे न रखे जायें तो शव्वाल के महीने के अन्दर-अन्दर पूरे कर लें।

शव्वाल का महीना और ख़ैर की चीज़ें

इसी शव्वाल के महीने में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हा का हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से निकाह हुआ और इसी

महीने में हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की रुख़्सती हुई। लिहाज़ा इस महीने में बरकतों के बहुत सारे असबाब जमा हैं।

ज़ीक़ादा के महीने की फ़ज़ीलत

इसी तरह ज़ीक़ादा का अगला महीना भी "अश्हुरे हज" (हज के महीनों) में शामिल है। हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी ज़िन्दगी में मदीना तैयबा में ठहरने के दौरान हज के अलावा चार उमरे अदा फ़रमाये। ये चारों उमरे ज़ीक़ादा के महीने में अदा फ़रमाये। इस लिहाज़ से भी इस महीने को बरकत और बड़ाई हासिल है।

ज़ीक़ादा का महीना मन्हूस नहीं

हमारे समाज में "ज़ीक़ादा" के महीने को मन्हूस समझा जाता है और इसको "ख़ाली" महीना कहा जाता है। यानी यह महीना हर बरकत से ख़ाली है। चुनाँचे इस महीने में निकाह और शादी नहीं करते और कोई ख़ुशी की पार्टी नहीं करते। यह सब फ़ुज़ूल बातें और अंधविश्वास है। शरीअत में इसकी कोई असल नहीं। बहरहाल! ये महीने हज के महीने हैं, इसलिये ख़्याल हुआ कि आज हज के बारे में थोड़ा सा बयान हो जाये।

हज इस्लाम का अहम रुक्न है

यह हज इस्लाम के अर्कान में से एक अहम रुक्न है। इस्लाम के चार अर्कान हैं यानी नमाज़, रोज़ा, ज़कात, हज। इन चारों अर्कान पर इस्लाम की बुनियाद है।

अल्लाह तआला ने अपने बन्दों के लिये इबादत के जो मुख़्तलिफ़ (विभिन्न) तरीक़े तजवीज़ फ़रमाये हैं, उनमें से हर तरीक़ा निराली शान रखता है। जैसे नमाज़ की अलग शान है, रोज़े की अलग शान है, ज़कात की अलग शान है, हज की अलग शान है।

इबादत की तीन क़िस्में

आम तौर पर इबादतों को तीन हिस्सों पर तक़सीम किया जाता है- एक "बदनी इबादत" जो इनसान के बदन से ताल्लुक़ रखती हैं और बदन के ज़रिये उनकी अदायगी होती है। जैसे नमाज़ बदनी इबादत है। दूसरी इबादत है "माली इबादत" जिसमें बदन का दख़ल नहीं होता बल्कि उसमें पैसे ख़र्च होते हैं, जैसे ज़कात और क़ुरबानी।

तीसरी इबादतें वे हैं जो बदनी भी हैं और माली भी हैं। उनके अदा करने में इनसान के बदन को भी दख़ल होता है और माल को भी दख़ल होता है। जैसे हज की इबादत। हज की इबादत में इनसान का बदन भी ख़र्च होता है और उसका माल भी ख़र्च होता है। इसलिये यह इबादत बदन और माल दोनों से मुरक्कब है। और हज की इबादत में आशिक़ाना शान पाई जाती है, क्योंकि हज में अल्लाह तआ़ला ने ऐसे अर्कान .रखे हैं जिनके ज़रिये अल्लाह तआ़ला से इश्क़ व मुहब्बत का इज़हार होता है।

एहराम का मतलब

जब यह हज की इबादत शुरू होती है तो सब से पहले एहराम बाँधा जाता है। आम तौर पर लोग समझते हैं कि ये चादरें बाँधना एहराम है, हालांकि महज़ इन चादरों का नाम एहराम नहीं बल्कि "एहराम" के मायने हैं "बहुत सी चीज़ों को अपने ऊपर हराम कर लेना" जब इनसान हज या उमरे की नीयत करने के बाद तलबिया (हज की तस्बीह) पढ़ लेता है तो उसके ऊपर बहुत सी चीज़ें हराम हो जाती हैं। मिसाल के तौर पर सिला हुआ कपड़ा पहनना हराम, खुशबूयें लगाना हराम, जिस्म के किसी भी हिस्से के बाल काटना हराम, नाखुन काटना हराम और अपनी बीवी के साथ जायज़ नफ़्सानी इच्छाओं को पूरी करना हराम। इसी वजह से उसका नाम "एहराम" रखा गया है।

ऐ अल्लाह! मैं हाज़िर हूँ

और जब इनसान हज या उमरे की नीयत करके यह तलबिया पढ़ता है:

لَبَّيْكَ اَللّٰهُمَّ لَبَّيْكَ. لَبَّيْكَ لَاشَرِيْكَ لَكَ لَبَّيْكَ. اِنَّ الْحَمْدَ وَالنِّعْمَةَ لَكَ وَالْمُلْكَ. لَا شَرِيْكَ لَكَ.

लब्बैक अल्लाहुम्-म लब्बैक। ला शरी-क ल-क लब्बैक। इन्नल् हम्-द वन्निअ्म-त ल-क वल्मुल्-क, ला शरी-क ल-क।

जिसके मायने यह हैं कि ऐ अल्लाह! मैं हाज़िर हूँ। क्यों हाज़िर हूँ? इसलिये कि जब हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने बैतुल्लाह शरीफ़ की तामीर (निर्माण) फ़रमाई तो उस वक़्त अल्लाह तआ़ला ने उनको हुक्म फ़रमाया कि:

وَاَذِّنْ فِي النَّاسِ بِالْحَجِّ يَاْتُوْكَ رِجَالًا وَّعَلٰى كُلِّ ضَامِرٍ يَّاْتِيْنَ مِنْ كُلِّ فَجٍّ عَمِيْقٍo

ऐ इब्राहीम! लोगों में यह ऐलान फ़रमा दें कि वे इस बैतुल्लाह के हज के लिये आयें। पैदल आयें और सवार होकर आयें। दूर-दराज़ से और दुनिया के चप्पे-चप्पे से यहाँ पहुँचे।

चुनाँचे हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम ने एक पहाड़ पर चढ़कर यह ऐलान फ़रमाया था कि ऐ लोगो! यह अल्लाह का घर है। अल्लाह की इबादत के लिये यहाँ आओ। यह ऐलान आपने पाँच हज़ार साल पहले किया था। आज जब कोई उमरा करने वाला या हज करने वाला हज या उमरे का इरादा करता है तो वह दर हक़ीक़त हज़रत इब्राहीम अ़लैहिस्सलाम के ऐलान का जवाब देते हुए यह कहता है कि:

لَبَّيْكَ اَللّٰهُمَّ لَبَّيْكَ

लब्बैक अल्लाहुम्-म लब्बैक

ऐ अल्लाह! मैं हाज़िर हूँ और बार-बार हाज़िर हूँ। और जिस

वक़्त बन्दे ने यह कह दिया कि मैं हाज़िर हूँ बस उसी वक़्त से एहराम की पाबन्दियाँ शुरू हो गईं। चुनाँचे अब सिला हुआ कपड़ा नहीं पहन सकता, ख़ुशबू नहीं लगा सकता, बाल नहीं काट सकता, नाख़ुन नहीं काट सकता और अपनी जायज़ नफ़्सानी ख़्वाहिशें भी पूरी नहीं कर सकता।

एहराम कफ़न की याद दिलाता है

गोया अल्लाह तआ़ला की पुकार पर एक आ़शिक़ बन्दे ने अपने परवर्दिगार के इश्क़ में दुनिया के आराम और राहतें सब छोड़ दीं। अब तक वह सिले हुए कपड़े पहने हुए था, वे सब उतार दिये। अब वह दो चादरें पहने हुए है जो उसे उसके कफ़न की याद दिला रही हैं कि एक वक़्त ऐसा आने वाला है कि जब तू दुनिया से रुख़्सत हो रहा होगा तो उस वक़्त तेरा यही लिबास होगा, चाहे वह बादशाह हो, चाहे मालदार हो, चाहे फ़क़ीर हो, सब आज दो चादर पहने हुए हैं और इनसानी बराबरी का एक मन्ज़र पेश कर रहे हैं। जिस शख़्स को देखो वह आज दो चादरों में लिपटा हुआ नज़र आ रहा है।

"तवाफ़" एक मज़ेदार इबादत

फिर वहाँ बैतुल्लाह के पास पहुँचकर बैतुल्लाह का तवाफ़ कर रहे हैं। इस "तवाफ़" में एक आ़शिक़ाना शान है। जिस तरह एक आ़शिक़ अपने महबूब के घर के गिर्द चक्कर लगाता है, उसी तरह यह अल्लाह का बन्दा अल्लाह के घर के गिर्द चक्कर लगा रहा है। और यह चक्कर लगाना अल्लाह तआ़ला को इतना महबूब है कि इस तवाफ़ में एक-एक क़दम पर एक-एक गुनाह माफ़ हो रहा है और एक-एक दर्जा बुलन्द हो रहा है। जिन लोगों को अल्लाह तआ़ला ने तवाफ़ करने का मौक़ा अ़ता फ़रमाया है वे मेरी इस बात की तस्दीक़ करेंगे कि शायद रू-ए-ज़मीन पर तवाफ़ से ज़्यादा मज़ेदार इबादत कोई न हो।

इज़हारे मुहब्बत के मुख़्तलिफ़ अन्दाज़

इनसान की फ़ितरत यह चाहती है कि वह अपने मालिक के साथ इश्क़ व मुहब्बत का इज़हार करे। उसके घर का चक्कर लगाये, उसके दरवाज़े को चूमे और उससे लिपट जाये। अल्लाह तआ़ला ने इनसान की फ़ितरत के इस तक़ाज़े को पूरा करने के सारे असबाब इस बैतुल्लाह में जमा फ़रमा दिये हैं। जब आप किसी से मुहब्बत करते हैं तो आपका दिल चाहता है कि उसको गले लगाऊँ, उसके पास रहूँ। अब अल्लाह तआ़ला से मुहब्बत तो है लेकिन उसको गले से नहीं लगा सकते। अप्रत्यक्ष रूप से अल्लाह तआ़ला के क़दम नहीं चूम सकते। इसलिये तुम ऐसा करो कि यह मेरा घर है। तुम इस घर के चक्कर लगाओ और इसके अन्दर मैंने "हजूरे अस्वद" रख दिया है, तुम उस हजूरे अस्वद को चूमो। यह तुम्हारा हजूरे अस्वद को चूमना तुम्हारे इश्क़ व मुहब्बत का इज़हार होगा। और अगर मुझसे लिपटना चाहो तो मेरे इस घर के दरवाज़े और हजूरे अस्वद के दरमियान जो दीवार है, जिसको मुल्तज़म् कहते हैं, उस दीवार से लिपट जाओ और यहाँ लिपट कर तुम जो कुछ मुझसे माँगोगे मेरा वायदा है कि मैं तुम्हें दूँगा। यह आशिक़ाना शान अल्लाह तआ़ला ने इस हज की इबादत में रखी है। आदमी को अपने जज़्बात के इज़हार का इससे बेहतर मौक़ा कहीं नहीं मिल सकता जैसा वहाँ मौक़ा मिलता है।

इस्लाम धर्म में इनसानी फ़ितरत का ख़्याल

हमारे धर्म इस्लाम की भी अ़जीब शान है कि एक तरफ़ बुत परस्ती को मना कर दिया और उसको शिर्क और हराम क़रार दे दिया, और यह कह दिया कि जो शख़्स बुत-परस्ती करेगा वह इस्लाम के दायरे से ख़ारिज है। इसलिये कि ये बुत तो बेजान पत्थर हैं, न उनके अन्दर नफ़ा पहुँचाने की क्षमता है और न ही नुक़सान पहुँचाने

की सलाहियत है। लेकिन दूसरी तरफ़ चूँकि इनसान की फ़ितरत में यह बात दाखिल है कि वह अपने महबूब के साथ अपनी मुहब्बत का इज़हार करे, उस मुहब्बत के इज़हार के लिये अल्लाह तआला ने बैतुल्लाह को एक निशान बना दिया और साथ में यह बता दिया कि बैतुल्लाह की ज़ात में कुछ नहीं रखा, लेकिन चूँकि हमने उसको अपनी तरफ़ मन्सूब करके यह कह दिया है कि यह हमारा घर है और हमने ही उसके अन्दर पत्थर रख दिया है ताकि तुम्हारे जज़्बात की तस्कीन हो जाये। अब निस्बत के बाद इस घर के चक्कर लगाना और इस पत्थर को चूमना इबादत है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि. का हज्रे-अस्वद से ख़िताब

इसी वजह से हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु जब हज के लिये तशरीफ़ ले गये और हज्रे अस्वद के पास जाकर उसको बोसा देने लगे तो इस हज्रे-अस्वद को ख़िताब करते हुए फ़रमाया कि ऐ हज्रे अस्वद! मैं जानता हूँ कि तू एक पत्थर है। न तू नुक़सान पहुँचा सकता है और न फ़ायदा पहुँचा सकता है। अगर मैंने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को बोसा देते हुए न देखा होता तो मैं तुझे बोसा न देता। चूँकि अल्लाह तआला ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के ज़रिये यह सुन्नत जारी फ़रमा दी, इसलिये इस का चूमना और बोसा देना इबादत बन गया।

हरे सतूनों के दरमियान दौड़ना

तवाफ़ के बाद 'सफ़ा' और 'मर्वा' के दरमियान चक्कर लगाये जा रहे हैं और जब हरे सतून के पास पहुँचे तो दौड़ना शुरू कर दिया। जिसे देखो दौड़ा जा रहा है। भागा जा रहा है। अच्छे-ख़ासे सन्जीदा आदमी, पढ़े लिखे आदमी, तालीम-याफ़्ता आदमी, जिनको कभी भाग कर चलने की आदत नहीं, मगर हर एक दौड़ा जा रहा है। चाहे बूढ़ा हो, जवान हो, बच्चा हो।

यह क्या है? यह इसलिये दौड़ा जा रहा है कि अल्लाह तआ़ला ने और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको सुन्नत क़रार दिया है। हज़रत हाजरा अ़लैहस्सलाम ने यहाँ दौड़ लगायी थी। अल्लाह तआ़ला को उनकी यह अदा इतनी पसन्द आयी कि क़ियामत तक के लिये आने वाले तमाम मुसलमानों के लिये ज़रूरी क़रार दिया कि जो हज करने आयेगा वह सफ़ा-मर्वा के दरमियान चक्कर लगायेगा और दौड़ेगा।

अब मस्जिदे हराम को छोड़ दो

जब आठ ज़िलहिज्जा की तारीख़ आ गयी तो अब यह हुक्म आया कि मस्जिदे हराम को छोड़ दो और मिना में जाकर पाँच नमाज़ें अदा करो। हालाँकि इत्मीनान से मक्का में रह रहे थे और मस्जिदे हराम में नमाज़ें अदा कर रहे थे, जहाँ एक नमाज़ का सवाब एक लाख नमाज़ों के बराबर मिल रहा था। लेकिन यह हुक्म आ गया कि अब मक्का से निकल जाओ और मिना में जाकर क़ियाम करो और पाँच नमाज़ें वहाँ अदा करो। क्यों? इस हुक्म के ज़रिये यह बतलाना मक़सूद है कि न मस्जिदे हराम में अपनी ज़ात के एतिबार से कुछ रखा है और न बैतुल्लाह में अपनी ज़ात के एतिबार से कुछ रखा है। जो कुछ है वह हमारे हुक्म में है। जब तक हमारा हुक्म था कि मक्का मुकर्रमा में रहो, उस वक़्त तक मस्जिदे हराम में एक नमाज़ का सवाब एक लाख नमाज़ों के बराबर मिल रहा था, और अब हमारा हुक्म यह है कि यहाँ से जाओ तो अब उसके लिये यहाँ रहना जायज़ नहीं।

अब अ़रफ़ात चले जाओ

मिना के क़ियाम के बाद अब ऐसी जगह तुम्हें ले जायेंगे जहाँ दूर तक मैदान फैला हुआ है। कोई इमारत नहीं और कोई साया नहीं। एक दिन तुम्हें यहाँ गुज़ारना होगा। यह दिन इस तरह गुज़ारना है कि ज़ोहर और अ़स्र की नमाज़ एक साथ अदा कर लेना और फिर उसके बाद

अ़स्र से लेकर मग़रिब तक खड़े होकर हमें पुकारते रहना और हमारा ज़िक्र करते रहना, हमसे दुआयें करना और तिलावत करना (यानी कुरआन पाक पढ़ना) और मग़रिब तक यहाँ रहना।

अब मुज़्दलिफ़ा चले जाओ

और अ़रफ़ात में तो तुम्हें ख़ैमे लगाने की इजाज़त थी, अब हम तुम्हें ऐसे मैदान में ले जायेंगे जहाँ तुम ख़ैमा भी नहीं लगा सकते। वह है "मुज़्दलिफ़ा" लिहाज़ा सूरज छुपने के बाद मुज़्दलिफ़ा की तरफ़ रवाना हो जाओ और रात वहाँ गुज़ारो।

मग़रिब को इशा के साथ मिलाकर पढ़ना

आ़म दिनों में तो यह हुक्म है कि जैसे ही सूरज डूब जाये तो फ़ौरन मग़रिब की नमाज़ अदा करो। लेकिन आज यह हुक्म है कि मुज़्दलिफ़ा जाओ और वहाँ पहुँच कर मग़रिब और इशा की नमाज़ एक साथ अदा करो। इन अहकाम के ज़रिये यह बताया जा रहा है कि जब तक हमने कहा था कि मग़रिब की नमाज़ जल्दी पढ़ो, उस वक़्त तक जल्दी पढ़ना तुम्हारे ज़िम्मे वाजिब था, और जब हमने कहा कि ताख़ीर से (यानी विलंब से) पढ़ो तो अब ताख़ीर से पढ़ना तुम्हारे ज़िम्मे ज़रूरी है। लिहाज़ा किसी वक़्त के अन्दर कुछ नहीं रखा जब तक हमारा हुक्म न हो।

कंकरियाँ मारना अ़क़्ल के ख़िलाफ़ है

क़दम-क़दम पर अल्लाह तआ़ला आ़म क़ानूनों को तोड़कर बन्दे को यह बता रहे हैं कि तेरा काम तो हमारी इबादत करना और हमारा हुक्म मानना है। और कोई चीज़ अपनी ज़ात में कोई हक़ीक़त नहीं रखती जब तक हमारा हुक्म न हो।

अब मुज़्दलिफ़ा से फिर वापस मिना आओ और तीन दिन यहाँ गुज़ारो। अब यहाँ तीन दिन क्यों गुज़ारें? यहाँ क्या काम है? यहाँ

तुम्हारा काम यह है कि यहाँ मिना में तीन सतून हैं जिनको "जमरात" कहा जाता है। हर आदमी रोज़ाना तीन दिन तक उनको सात-सात कंकरियाँ मारे। ज़रा इस अ़मल को अ़क्ल व होश की तराज़ू में तौल कर देखो तो यह अ़मल फ़ुज़ूल और बेकार नज़र आयेगा। पिछले साल पच्चीस लाख मुसलमानों ने हज किया और ये पच्चीस लाख इनसान तीन दिन तक मिना में पड़े हुए हैं। जिन पर करोड़ों और अरबों रुपये ख़र्च हो रहे हैं और उनमें से हर एक को यह धुन है कि मैं उन जमरात को सात-सात कंकरियाँ मारूँ। अच्छे-ख़ासे पढ़े लिखे, तालीम-याफ़्ता, माक़ूल आदमी हैं, मगर ज़िसको देखो वह कंकरियाँ ढूँढ़ता फिर रहा है और फिर उन जमरात को मारकर ख़ुश हो रहा है कि मैंने यह अ़मल पूरा कर लिया।

हमारा हुक्म सब से ऊपर है

क्या यह कंकरियाँ मारने का अ़मल ऐसा है जिस पर अरबों रुपया ख़र्च किया जाये? बात यह है कि इसके ज़रिये अल्लाह तआ़ला यह बतलाना चाहते हैं कि किसी काम में अ़क्ल व समझ की बात नहीं। जब हमारा हुक्म आ जाये तो वही काम जिसको तुम दीवानगी समझ रहे थे, वही अ़क्ल का काम बन जाता है। जब हमारा हुक्म आ गया कि उन पत्थरों को मारो तो तुम्हारा काम यह है कि मारो। इसी में तुम्हारे लिये अज्र व सवाब है। इसी अ़मल के ज़रिये अल्लाह तआ़ला तुम्हारे दर्जों को बुलन्द कर रहे हैं।

लिहाज़ा हमने अपने दिलों में अ़क्ल व समझ के जो बुत तामीर किये हुए हैं, इस हज की इबादत के ज़रिये क़दम-क़दम पर अल्लाह तआ़ला उन बुतों को तोड़ रहे हैं और यह बता रहे हैं कि उन बुतों की कोई हक़ीक़त नहीं है। और यह बता रहे हैं कि इस कायनात में कोई चीज़ अगर अ़मल करने के क़ाबिल है तो वह हमारा हुक्म है। जब हमारा हुक्म आ जाये तो वह हुक्म अ़क्ल में आये तो, अ़क्ल में

न आये तो, तुम्हें उस हुक्म के आगे सर झुकाना है और उस पर अ़मल करना है। पूरे हज के अन्दर यही बात सिखाई जा रही है।

इसी वजह से हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस हज की बड़ी फ़ज़ीलत बयान फ़रमाई कि अगर कोई शख़्स हज्जे-मबरूर (मकबूल हज) करके आता है तो ऐसा गुनाहों से पाक साफ़ होता है जैसे आज वह अपनी माँ के पेट से पैदा हुआ है। अल्लाह तआ़ला ने इस इबादत का यह मुक़ाम रखा है।

हज किस पर फ़र्ज़ है?

यह हज किस पर फ़र्ज़ होता है? इसके बारे में अल्लाह तआ़ला ने इस आयत में बयान फ़रमाया जो अभी मैंने आपके सामने तिलावत की।

وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ اِلَيْهِ سَبِيْلًا

यानी अल्लाह तआ़ला के लिये लोगों पर फ़र्ज़ है कि वे बैतुल्लाह का हज करें और यह हर उस शख़्स पर फ़र्ज़ है जो वहाँ जाने की हिम्मत और गुंजाइश रखता हो। यानी उसके पास इतने पैसे हों कि वह सवारी का इन्तिज़ाम कर सके। दीन के आ़लिमों ने इसकी तशरीह (व्याख्या) में फ़रमाया है कि जिसके पास इतना माल हो कि उसके ज़रिये वह हज कर सके और वहाँ हज के दौरान अपने खाने-पीने और रहने का इन्तिज़ाम कर सके और अपने पीछे जो अहल व अ़याल (घर वाले और बाल-बच्चे) हैं, वापस आने तक उनके खाने-पीने का इन्तिज़ाम कर सके, ऐसे शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो जाता है।

लेकिन आजकल लोगों ने हज करने के लिये अपने ऊपर बहुत सी शर्तें लागू कर रखी हैं जिनकी शरीअ़त में कोई बुनियाद नहीं। उनके बारे में अगले जुमा को इन्शा-अल्लाह तफ़सील से अ़र्ज़ करूँगा।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَا اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۝

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

हज में देरी क्यों?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِیَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ۝ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ۝ وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ اِلَيْهِ سَبِيْلًا ۝ (سورۃ آل عمران: آیت ۹۷)

آمنت باللّٰہ صدق اللّٰہ مولانا العظیم وصدق رسولہ النبی الکریم ونحن علٰی ذلک من الشاھدین والشاکرین والحمد لِلّٰہ رب العالمین ۝

हज फ़र्ज़ होने पर फ़ौरन अदा करें

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! पिछले जुमा को इसी आयत पर बयान किया था। इस आयत में अल्लाह तआ़ला ने हज की फ़ज़ीलत का ज़िक्र फ़रमाया है। इस आयत का तर्जुमा यह है कि अल्लाह तआ़ला के लिये लोगों पर वाजिब है कि जो शख़्स बैतुल्लाह तक जाने की ताक़त व गुंजाइश रखता हो, वह हज करे। यह हज इस्लाम के रुक्नों में से चौथा रुक्न है और जिसके अन्दर इसकी ताक़त और गुंजाइश हो (यानी हज पर जाने के लिये प्रयाप्त पैसा हो, और कोई शरई मजबूरी न हो) उस पर अल्लाह तआ़ला ने उम्र भर में

एक बार फ़र्ज़ क़रार दिया है। और जब यह हज फ़र्ज़ हो जाये तो अब हुक्म यह है कि इस फ़रीज़े को जल्दी-से-जल्दी अदा किया जाये। बिना वजह इस हज को लेट करना दुरुस्त नहीं। क्योंकि इनसान की मौत और ज़िन्दगी का कुछ भरोसा नहीं, अगर हज फ़र्ज़ होने के बाद अदायगी से पहले इनसान दुनिया से चला जाता है तो यह बहुत बड़ा फ़रीज़ा उसके ज़िम्मे बाक़ी रह जाता है। इसलिये हज फ़र्ज़ हो जाने के बाद जल्दी से जल्दी इसकी अदायगी की फ़िक्र करनी चाहिये।

हमने अनेक शर्तें लगा ली हैं

लेकिन आजकल हम लोगों ने हज करने के लिये अपने ऊपर बहुत-सी शर्तें लगा ली हैं। बहुत सी ऐसी पाबन्दियाँ आयद कर ली हैं जिनकी शरीअत में कोई असल नहीं। बाज़ लोग यह समझते हैं कि जब तक उनके दुनियावी काम और ज़िम्मेदारियाँ पूरी न हो जायें जैसे जब तक मकान न बन जाये या जब तक बेटियों की शादियाँ न हो जायें, उस वक़्त तक हज नहीं करना चाहिये। यह ख़्याल बिल्कुल ग़लत है। बल्कि जब इनसान के पास इतना माल हो जाये कि उसके ज़रिये हज अदा कर सके या उसकी मिल्कियत में सोना और ज़ेवर है और इतना है कि अगर उसको वह फ़रोख़्त कर दे तो उसकी रक़म इतनी वसूल हो जायेगी जिसके ज़रिये हज अदा हो जायेगा, तब भी हज फ़र्ज़ हो जायेगा। लिहाज़ा हज फ़र्ज़ हो जाने के बाद उसको किसी चीज़ का इन्तिज़ार करने की ज़रूरत नहीं।

हज माल में बरकत का ज़रिया है

लिहाज़ा यह सोचना कि हमारे ज़िम्मे बहुत सारे काम हैं, हमें मकान बनाना है, हमें अपनी बेटियों या बेटों की शादी करनी है, अगर यह रक़म हम हज में ख़र्च कर देगें तो इन कामों के लिये रक़म कहाँ से आयेगी? यह सब फ़ुज़ूल ख़्यालात और बेकार की सोच है। अल्लाह

तआला ने इस हज की ख़ासियत यह रखी है कि अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम से हज अदा करने के नतीजे में आज तक कोई शख़्स मुफ़्लिस (निर्धन) नहीं हुआ। कुरआन करीम का इरशाद है:

لِيَشْهَدُوْا مَنَافِعَ لَهُمْ . (سورة الحج: آيت ٢٨)

यानी हमने हज फ़र्ज़ किया है, ताकि अपनी आँखो से वे फ़ायदे देखें जो हमने उनके लिये हज के अन्दर रखे हैं। हज के बेशुमार फ़ायदे हैं, उन सबको बयान करना भी मुम्किन नहीं है। उनमें से एक फ़ायदा यह है कि अल्लाह पाक रिज़्क़ में बरकत अता फ़रमा देते हैं।

आज तक हज की वजह से कोई फ़कीर नहीं हुआ

हज्जे बैतुल्लाह का सिलसिला हज़ारों साल से जारी है, आज तक कोई एक इनसान भी ऐसा नहीं मिलेगा जिसके बारे में यह कहा जा सके कि इस शख़्स ने चूँकि अपने पैसे हज पर ख़र्च कर दिये थे, इस वजह से मुफ़लिस (ग़रीब) और फ़कीर हो गया। अलबत्ता ऐसे बेशुमार लोग आपको मिलेंगे कि हज की बरकत से अल्लाह तआला ने उनके रिज़्क़ में बरकत अता फ़रमाई और वुस्अत व ख़ुशहाली अता फ़रमाई। लिहाज़ा यह ख़्याल बिल्कुल ग़लत है कि जब तक दुनिया के फ़लाँ-फ़लाँ काम से फ़ारिग़ न हो जायें, उस वक़्त तक हज नहीं करेंगे।

हज के फ़र्ज़ होने के लिये मदीने का सफ़र-ख़र्च होना भी ज़रूरी नहीं

चूँकि मदीने का सफ़र हज के अर्कान में से नहीं है और फ़र्ज़ व वाजिब भी नहीं है। अगर कोई शख़्स मक्का मुकर्रमा जाकर हज कर ले और मदीना मुनव्वरा न जाये तो उसके हज में कोई कमी उत्पन्न नहीं हुई। अलबत्ता यह बात ज़रूर है कि मदीना मुनव्वरा की हाज़िरी बहुत बड़ी सआदत है। अल्लाह तआला हर मोमिन को अता फ़रमाये और सरकारे दो-आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के रोज़ा-ए-

अक़्दस पर हाज़िर होकर सलाम अर्ज़ करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन। लिहाज़ा चूँकि मदीना मुनव्वरा का सफ़र हज के अर्कान में से नहीं है, इसलिये दीन के आ़लिमों ने लिखा है कि अगर किसी शख़्स के पास इतने पैसे हैं कि वह मक्का जाकर हज तो अदा कर सकता है लेकिन मदीना मुनव्वरा जाने के पैसे नहीं हैं, तब भी उसके ज़िम्मे हज फ़र्ज़ है। उसको चाहिये कि हज करके मक्का मुकर्रमा ही से वापस आ जाये, हालाँकि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के रोज़ा-ए-अक़्दस की हाज़िरी ऐसी बड़ी नेमत है कि इनसान सारी उम्र इसकी तमन्ना करता रहता है। लिहाज़ा यह ख़्याल कि इस हज को फ़लाँ काम होने तक लेट कर दिया जाये, यह ख़्याल दुरुस्त नहीं।

माँ-बाप को पहले हज कराना ज़रूरी नहीं

बाज़ लोग यह समझते हैं कि जब तक हम माँ-बाप को हज नहीं करवा देगें, उस वक़्त तक हमारा हज करना दुरुस्त नहीं होगा। यह ख़्याल आ़म हो गया है, कई लोगों ने मुझसे पूछा कि मैं हज पर जाना चाहता हूँ लेकिन मेरे माँ-बाप ने हज नहीं किया। लोग मुझे यह कहते हैं कि अगर माँ-बाप के हज से पहले हज कर लोगे तो तुम्हारा हज क़बूल नहीं होगा। यह महज़ जहालत की बात है। हर इनसान पर उसका फ़रीज़ा अलग है। जैसे माँ-बाप ने अगर नमाज़ नहीं पढ़ी तो बेटे के ज़िम्मे से नमाज़ ख़त्म नहीं होती, बेटे से उसकी नमाज़ के बारे में अलग सवाल होगा और माँ-बाप से उनकी नमाज़ों के बारे में अलग सवाल होगा। यही मामला हज का है। अगर माँ-बाप पर हज फ़र्ज़ नहीं है तो कोई हर्ज नहीं। अगर वे हज पर नहीं गये तो कोई बात नहीं, लेकिन अगर आप पर हज फ़र्ज़ है तो आपके लिये हज पर जाना ज़रूरी है और यह कोई ज़रूरी नहीं कि पहले माँ-बाप को हज कराये और फिर ख़ुद करे। ये सब ख़्यालात ग़लत हैं। हर इनसान अल्लाह तआ़ला के नज़दीक अपने आमाल का मुकल्लफ़ (ज़िम्मेदार और पाबन्द) है। उसको अपने आमाल की फ़िक्र करनी चाहिये।

हज न करने पर शदीद वईद

हम में से बहुत-से मुसलमान ऐसे हैं जो ज़ाती ज़रूरियात और ज़ाती कामों की ख़ातिर लम्बे-लम्बे सफ़र करते हैं। यूरोप का सफ़र करते हैं, अमेरिका और फ़्राँस और जापान का सफ़र करते हैं, लेकिन इस बात की तौफ़ीक़ नहीं होती कि अल्लाह तआ़ला के घर पर हाज़िरी दे दें। यह बड़ी मेहरूमी की बात है। नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उसके लिये बड़ी सख़्त वईद (तंबीह और डाँट) फ़रमाई है जो गुंजाइश और हैसियत वाला होने के बावजूद हज न करे।

चुनाँचे आपने एक हदीस में इरशाद फ़रमाया है कि जिस शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो गया हो और फिर भी वह हज किये बग़ैर मर जाये तो हमें उसकी कोई परवाह नहीं कि वह यहूदी होकर मरे या ईसाई होकर मरे। लिहाज़ा यह मामला इतना मामूली नहीं है कि इन्सान इस हज के फ़रीज़े को टलाता रहे और सोचता रहे कि जब फ़ुरसत और मौक़ा होगा तो हज कर लेंगे।

बेटियों की शादी के उ़ज़्र से हज को टालाना

बाज़ लोग यह समझते हैं कि बेटियों की शादियाँ करनी हैं। जब तक बेटियों की शादियाँ न हो जायें, उस वक़्त तक हज नहीं करना। लिहाज़ा पहले बेटियों की शादी करेंगे फिर हज करेंगे। यह भी बेकार की बात है। यह बिल्कुल ऐसा ही है जैसे कोई शख़्स यह कहे कि जब बेटी की शादी हो जायेगी तो उसके बाद नमाज़ पढ़ूँगा। भाई! अल्लाह तआ़ला ने जो फ़रीज़ा आ़यद किया है वह फ़रीज़ा अदा करना है। वह किसी और बात पर रुका हुआ नहीं।

हज से पहले क़र्ज़ अदा करें

अलबत्ता हज एक चीज़ पर मौक़ूफ़ है। वह यह कि अगर किसी शख़्स पर क़र्ज़ा है तो क़र्ज़े को अदा करना हज से पहले ज़रूरी है।

क़र्ज़ को अदा करने की अल्लाह तआला ने बड़ी सख़्त ताकीद फ़रमाई है कि इनसान के ऊपर क़र्ज़ नहीं रहना चाहिये, जल्दी से जल्दी क़र्ज़ को अदा करना चाहिये। इसके अलावा लोगों ने अपनी तरफ़ से बहुत से काम हज पर मुक़द्दम कर रखे हैं। मिसाल के तौर पर पहले अपना मकान बना लूँ या पहले मकान ख़रीद लूँ। या पहले गाड़ी ख़रीद लूँ। फिर हज कर लूगाँ। इसकी शरीअत में कोई असल नहीं।

हज के लिये बुढ़ापे का इन्तिज़ार करना

बाज़ लोग यह सोचते हैं कि जब बुढ़ापा आ जायेगा तो उस वक़्त हज करेंगे। जवानी में हज करने की क्या ज़रूरत है? हज करना तो बूढ़ों का काम है। जब बूढ़े हो जायेंगे और मरने का वक़्त क़रीब आयेगा तो उस वक़्त हज कर लेंगे।

याद रखिये! यह शैतानी धोखा है, हर वह शख़्स जो बालिग़ हो जाये और उसके पास इतनी गुंजाइश हो कि वह हज अदा कर सके तो उस पर हज फ़र्ज़ हो गया। और जब हज फ़र्ज़ हो गया तो अब जल्दी से जल्दी इस फ़रीज़े को अन्जाम देना वाजिब हो गया। बिना वजह ताख़ीर (विलंब) करना जायज़ नहीं। क्या पता कि बुढ़ापे तक वह ज़िन्दा भी रहेगा या नहीं। बल्कि दर हक़ीक़त हज तो जवानी की इबादत है, जवानी में आदमी के जिस्मानी अंग मज़बूत होते हैं, वह तन्दुरुस्त होता है, उस वक़्त वह हज की मशक़्क़त को आसानी के साथ बरदाश्त कर सकता है। लिहाज़ा यह समझना कि बुढ़ापे में हज करेंगे, यह बात दुरुस्त नहीं।

फ़र्ज़ हज अदा न करने की सूरत में वसीयत कर दें

यहाँ यह मसला भी अर्ज़ कर दूँ कि अगर मान लो कोई शख़्स हज फ़र्ज़ हो जाने के बावजूद अपनी ज़िन्दगी में हज अदा न कर सका तो उस पर यह फ़र्ज़ है कि वह अपनी ज़िन्दगी में यह वसीयत करे कि अगर मैं ज़िन्दगी में फ़र्ज़ हज अदा न कर सकूँ तो मेरे मरने के बाद

मेरे तर्के (छोड़े हुए माल) से किसी को मेरी तरफ़ से हज्जे-बदल के लिये भेजा जाये। क्योंकि अगर आप यह वसीयत कर देंगे तब आपके वारिसों पर लाज़िम होगा कि वे आपकी तरफ़ से हज्जे-बदल करायें वरना नहीं।

हज सिर्फ़ एक तिहाई माल से अदा किया जायेगा

और वारिसों पर भी आपकी तरफ़ से हज्जे-बदल कराना उस वक़्त लाज़िम होगा जब हज का पूरा ख़र्चा आपके तर्के (छोड़े हुए माल) के एक तिहाई के अन्दर आता हो। जैसे फ़र्ज़ करें कि हज का ख़र्च एक लाख रुपये है और आपका तर्का (छोड़ा हुआ माल) तीन लाख रुपये बनता है, या इससे ज़्यादा, तो इस सूरत में यह वसीयत नाफ़िज़ होगी और वारिसों पर लाज़िम होगा कि आपकी तरफ़ से हज्जे-बदल करायें। लेकिन अगर हज का ख़र्च एक लाख रुपये है और आपका पूरा तर्का तीन लाख रुपये से कम है तो इस सूरत में वारिसों पर यह लाज़िम नहीं होगा कि आपकी तरफ़ से हज्जे-बदल करायें, क्योंकि शरीअ़त का यह उसूल है कि यह माल जो हमारे पास मौजूद है, इस माल पर हमारा इख़्तियार उस वक़्त तक है जब तक हम पर मर्ज़ुल-मौत (वह बीमारी जिसमें इनसान की मौत हो जाये) तारी नहीं हो जाता। हम इस माल को जिस तरह चाहें इस्तेमाल करें, लेकिन जैसे ही मर्ज़ुल-मौत शुरू हो जाता है। उस वक़्त इस माल पर हमारा इख़्तियार ख़त्म हो जाता है और यह माल वारिसों का हो जाता है। अलबत्ता उस वक़्त सिर्फ़ एक तिहाई माल की हद तक हमारा इख़्तियार बाक़ी रह जाता है।

तमाम इबादतों का फ़िदया एक तिहाई से अदा होगा

लिहाज़ा अगर हमारे ज़िम्मे नमाज़ें रह गई हैं तो उन नमाज़ों का फ़िदया उस एक तिहाई से अदा होगा। अगर रोज़े छूट गये हैं तो उन रोज़ों का फ़िदया भी उसी एक तिहाई से अदा होगा। अगर ज़कात

बाक़ी रह गई तो उसकी अदायगी भी उसी एक तिहाई से होगी। अगर हज रह गया है तो वह भी उसी एक तिहाई से अदा होगा। और एक तिहाई से बाहर की वसीयत वारिसों के ज़िम्मे लाज़िम नहीं होगी। इसलिये ज़िन्दगी में हज अदा न करना बड़ा ख़तरनाक है, क्योंकि अगर हम वसीयत भी कर जायें कि हमारे माल से हज अदा कर दिया जाये लेकिन तर्का (छोड़ा हुआ माल) इतना न हो जिसके एक तिहाई से हज अदा हो सके तो उनके ज़िम्मे इस वसीयत को पूरा करना लाज़िम नहीं होगा। अगर हज करा दें तो यह हम पर एहसान होगा और अगर हज न करायें तो उन पर आख़िरत में कोई गिरफ़्त नहीं होगी।

हज्जे-बदल मरने वाले के शहर से होगा

बाज़ लोग हज्जे-बदल कराते वक़्त यह सोचते हैं कि अगर हम यहाँ कराची से हज्जे-बदल करायेंगे तो एक लाख का ख़र्च होगा। इसलिये हम मक्का मुकर्रमा में ही किसी को पैसे दे देंगे, वह वहीं से हज अदा कर लेगा।

याद रखिये! इस बारे में मसला यह है कि सख़्त मजबूरी के बग़ैर इस तरह हज्जे-बदल अदा नहीं होता। अगर मैं कराची में रहता हूँ और मेरे ज़िम्मे हज फ़र्ज़ है तो अगर मैं किसी को अपनी तरफ़ से हज्जे-बदल के लिये भेजूँ तो वह भी कराची से जाना चाहिये। यह नहीं कर सकता कि मक्का मुकर्रमा से किसी को पकड़ कर दो सौ रुपये में हज करा लिया। चूँकि मैं कराची में रहता हूँ इसलिये मेरे वतन से ही हज्जे-बदल होगा, मक्का मुकर्रमा से नहीं होगा।

प्रयाप्त उज़्र की वजह से मक्का से हज कराना

यह और बात है कि एक आदमी दुनिया से चला गया और उसने तर्का बिल्कुल नहीं छोड़ा। अब उसके वारिसों ने सोचा कि और कुछ नहीं हो सकता, तो कम से कम इतना हो जाये कि किसी को मक्का मुकर्रमा से ही भेजकर उसकी तरफ़ से हज करा दें। तो क़ानून के

एतिबार से वह हज्जे-बदल नहीं होगा लेकिन अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से क़बूल कर लें तो यह उनका करम है और न होने से यह सूरत बहरहाल बेहतर है। लेकिन उसूल और क़ानून वही है कि जिस शख़्स के ज़िम्मे हज वाजिब है, हज्जे-बदल वाले को उसी के शहर से जाना चाहिये।

क़ानूनी पाबन्दी उज़्र है

आजकल यह हाल है कि हज करना अपने इख़्तियार में नहीं रहा। क्योंकि हज करने पर बहुत सारी क़ानूनी और सरकारी पाबन्दियाँ लागू हैं। मिसाल के तौर पर पहले दरख़्वास्त दो, फिर कुर्आ-अन्दाज़ी में नाम आये वग़ैरह। लिहाज़ा जब किसी शख़्स पर हज फ़र्ज़ हो गया और उसने हज पर जाने की क़ानूनी कोशिश कर ली और फिर भी न जा सका तो वह अल्लाह तआ़ला के यहाँ माज़ूर है। लेकिन अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश करे और हज पर जाने के जितने क़ानूनी रास्ते और साधन हो सकते हैं उनको अपनाये।

लेकिन आदमी हाथ पर हाथ रखकर बैठ जाये और जाने की फ़िक्र न करे तो यह गुनाह की बात है।

हज की लज़्ज़त हज अदा करने से मालूम होगी

जब आप एक बार हज करके आयेंगे तो उस वक़्त आपको पता चलेगा की इस इबादत में क्या मिठास है? कैसी लज़्ज़त है? अल्लाह तआ़ला ने इस इबादत में अजीब ही कैफ़ (मज़ा और सुरूर) रखा है। हज के अन्दर सारे काम अ़क़्ल के ख़िलाफ़ हैं, लेकिन अल्लाह तआ़ला ने इस इबादत में इश्क़ की जो शान रखी है, उसकी वजह से इस इबादत की ख़ासियत यह है कि इसके नतीजे में अल्लाह तआ़ला की मुहब्बत, उसकी बड़ाई, उसके साथ इश्क़ इनसान के दिल में पैदा हो जाता है और जब वह हज से वापस आता है तो ऐसा हो जाता है जैसे वह आज ही माँ के पेट से पैदा हुआ।

नफ़्ली हज के लिये गुनाह का काम करना जायज़ नहीं

और जब आदमी एक बार हज करके वापस आता है तो उसकी प्यास और ज़्यादा बढ़ जाती है और फिर बार-बार जाने को दिल चाहता है। अल्लाह तआ़ला ने बार-बार जाने पर कोई पाबन्दी भी नहीं लगाई। फ़र्ज़ तो ज़िन्दगी में एक बार किया है, लेकिन दोबारा जाने पर कोई पाबन्दी नहीं है। जब भी मौक़ा हो, आदमी नफ़्ली हज पर जा सकता है। मगर उसमें इस बात का लिहाज़ रखना चाहिये कि नफ़्ली इबादतों की वजह से किसी गुनाह के काम को न करना पड़े। क्योंकि नफ़्ली इबादत का हुक्म यह है कि अगर उसको न करें तो कोई गुनाह नहीं और दूसरी तरफ़ गुनाह से बचना वाजिब है।

मिसाल के तौर पर जब हज की दरख़्वास्त दी जाती है तो उसमें यह लिखना पड़ता है कि मैंने इससे पहले हज नहीं किया। अब आपने झूठ बोलने का गुनाह कर लिया और झूठ बोलना हराम है। झूठ से बचना फ़र्ज़ है, गोया कि आपने नफ़्ली इबादत के लिये झूठ का जुर्म कर लिया और शरीअ़त में नफ़्ली इबादत के लिये झूठ बोलने की कोई गुंजाइश नहीं। ऐसा झूठ बोलना नाजायज़ और हराम है।

हज के लिये सूदी मामला करना जायज़ नहीं

इसी तरह अगर स्पानसर्शिप के तहत हज की दरख़्वास्त देनी हो तो उसके लिये बाहर से डराफ़्ट मंगवाया जाता है। बाज़ लोग यहाँ से ख़रीद लेते हैं जिसके नतीजे में सूदी मामले का जुर्म करना पड़ता है। अब नफ़िल हज के लिये सूदी मामला करके जाना, शरई तौर पर इसकी कोई गुंजाइश नहीं।

नफ़्ली हज के बजाये क़र्ज़ अदा करें

इसी तरह एक शख़्स के ज़िम्मे दूसरे का क़र्ज़ है तो क़र्ज़ की अदायगी इनसान पर मुक़द्दम (पहले) है। अब वह शख़्स क़र्ज़ तो अदा

नहीं कर रहा है लेकिन हर साल हज पर जा रहा है, गोया कि फ़र्ज़ काम को छोड़कर नफ़्लि काम की तरफ़ जा रहा है। यह हराम और नाजायज़ है।

नफ़्ली हज के बजाये बाल-बच्चों का ख़र्च अदा करें

इसी तरह एक शख़्स खुद तो नफ़्ली हज और नफ़्ली उमरे कर रहा है, जबकि घर वालों को और जिनका नफ़्क़ा (खाना कपड़ा और ज़रूरी ख़र्च) उस शख़्स पर वाजिब है, उनको नफ़्क़े (ख़र्च) की तंगी हो रही है, यह सब काम नाजायज़ हैं। यह शरीअ़त की हदों से आगे बढ़ना है।

बल्कि अगर किसी शख़्स को यह महसूस हो कि फ़लाँ काम में इस वक़्त ख़र्च की ज़्यादा ज़रूरत है तो ऐसी सूरत में नफ़्ली हज और नफ़्ली उमरे के मुक़ाबले में उस काम पर ख़र्च करना ज़्यादा सवाब का सबब है।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक का नफ़्ली हज छोड़ना

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रहमतुल्लाहि अ़लैहि बड़े ऊँचे दर्जे के मुहद्दिसीन और फ़ुक़हा (हदीस पाक और मसाइल के आ़लिमों) में से हैं और सूफ़ी बुज़ुर्ग हैं। यह हर साल हज किया करते थे। एक बार अपने क़ाफ़िले के साथ हज पर जा रहे थे तो रास्ते में एक बस्ती के पास से गुज़र हुआ। बस्ती के क़रीब एक कूड़े का ढेर था। एक बच्ची बस्ती से निकल कर आई और उस कूड़े में एक मुर्दार मुर्ग़ी पड़ी हुई थी, उस बच्ची ने उस मुर्दार मुर्ग़ी को उठाया और जल्दी से अपने घर की तरफ़ चली गई।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक को यह देखकर बड़ा ताज्जुब हुआ कि यह बच्ची एक मुर्दार मुर्ग़ी को उठाकर लेजा रही है। चुनाँचे आपने आदमी भेजकर उस बच्ची को बुलवाया कि तुम उस मुर्दार मुर्ग़ी को क्यों उठाकर ले गई हो? उस बच्ची ने जवाब दिया कि बात दर असल

यह है कि हमारे घर में कई दिन से फ़ाक़ा है और हमारे पास अपनी जान बचाने का कोई रास्ता इसके सिवा नहीं है कि हम इस मुर्दार मुर्ग़ी को खा लें।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह इब्ने मुबारक रहमतुल्लाहि अ़लैहि के दिल पर बड़ा असर हुआ और आपने फ़रमाया कि हम हज का यह सफ़र मुल्तवी (स्थगित) करते हैं और तमाम साथियों से फ़रमाया कि अब हम हज पर नहीं जायेंगे। जो पैसा हम हज पर ख़र्च करते, वह पैसा हम इस बस्ती के लोगों पर ख़र्च करेंगे। ताकि उनकी भूख प्यास और उनकी फ़ाक़ा-कशी का दरवाज़ा बन्द हो सके।

तमाम इबादतों में दरमियानी राह इख़्तियार करें

लिहाज़ा यह नहीं कि हमें हज और उमरा करने का शौक़ हो गया है, अब हमें अपना शौक़ पूरा करना है, चाहे उसके नतीजे में शरीअ़त के दूसरे तकाज़े नज़र-अन्दाज़ हो जायें। बल्कि शरीअ़त नाम है तवाज़ुन (सन्तुलन) का। कि जिस वक़्त में और जिस जगह में जो हम से मुतालबा है, उस मुतालबे को पूरा करें और यह देखें कि इस वक़्त मेरे माल का ज़्यादा सही मस्रफ़ (ख़र्च होने की जगह) क्या हो सकता है, जिसकी इस वक़्त ज़्यादा ज़रूरत है? नफ़्ली इबादतों में इन बातों का लिहाज़ रखना ज़रूरी है।

अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से मुझे और आपको हज के अनवार और बरकतें अ़ता फ़रमाये और अपनी रिज़ा के मुताबिक़ उसको क़बूल फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَا اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ۝

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

मुहर्रम और आशूरा की हक़ीक़त

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُوْرِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِيْ كِتٰبِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَ مِنْهَآ اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ. (سورۂ توبہ آیت:٣٦)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين ○

हुर्मत वाला महीना

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! आज मुहर्रम की सातवीं तारीख़ है और तीन दिन के बाद इन्शा-अल्लाह तआ़ला आ़शूरा का मुक़द्दस (पवित्र) दिन आने वाला है। यूँ तो साल के बारह महीने और हर महीने के तीस दिन अल्लाह तआ़ला के पैदा किये हुए हैं। लेकिन

अल्लाह तआ़ला ने अपने फ़ज़्ल व करम से पूरे साल के कुछ दिनों को ख़ुसूसी फ़ज़ीलत अ़ता फ़रमाई है और उन दिनों में कुछ मख़्सूस अहकाम मुक़र्रर फ़रमाये हैं।

यह मुहर्रम का महीना भी एक ऐसा महीना है जिसको क़ुरआन करीम ने हुर्मत (अ़ज़मत व बड़ाई) वाला महीना क़रार दिया है।

जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की है, उसमें अल्लाह तआ़ला ने यह बतला दिया कि चार महीने ऐसे हैं जो हुर्मत वाले हैं, उनमें से एक मुहर्रम का महीना है।

आ़शूरा का रोज़ा

ख़ास तौर पर मुहर्रम की दसवीं तारीख़, जिसको आ़म तौर पर "आ़शूरा" कहा जाता है। जिसके मायने हैं "दसवाँ दिन" यह दिन अल्लाह तआ़ला की रहमत व बरकत का ख़ुसूसी तौर पर वाहक है। जब तक रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ नहीं हुए थे, उस वक़्त तक "आ़शूरा" का रोज़ा रखना मुसलमानों पर फ़र्ज़ क़रार दिया गया था। बाद में जब रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ हो गये तो उस वक़्त आ़शूरा के रोज़े की फ़र्ज़ियत मन्सूख़ (निरस्त) हो गई। लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आ़शूरा के दिन रोज़ा रखने को सुन्नत और मुस्तहब क़रार दिया।

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह इरशाद फ़रमाया कि मुझे अल्लाह तआ़ला की रहमत से यह उम्मीद है कि जो शख़्स आ़शूरा के दिन रोज़ा रखेगा तो उसके पिछले एक साल के गुनाहों का कफ़्फ़ारा (बदला, धोने वाला) हो जायेगा। आ़शूरा के रोज़े की इतनी बड़ी फ़ज़ीलत आपने बयान फ़रमाई।

"आ़शूरा का दिन" एक पवित्र दिन है

बाज़ लोग यह समझते हैं कि आ़शूरा के दिन की फ़ज़ीलत की वजह यह है कि इस दिन में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व

सल्लम के मुक़द्दस नवासे हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की शहादत का वाक़िआ पेश आया। इस शहादत के पेश आने की वजह से आशूरा का दिन मुक़द्दस (पाक और बरकत वाला) और हुर्मत (अज़मत व बड़ाई) वाला बन गया है। यह बात सही नहीं, ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के मुबारक ज़माने में आशूरा का दिन पवित्र और बरकत वाला दिन समझा जाता था और आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसके बारे में अहकाम बयान फ़रमाये थे और कुरआन करीम ने भी इसकी हुर्मत (अज़मत व बड़ाई) का ऐलान फ़रमाया था। जबकि हज़रत हुसैन की शहादत का वाक़िआ तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की वफ़ात के तक़रीबन साठ साल के बाद पेश आया, लिहाज़ा यह बात दुरुस्त नहीं कि आशूरा की हुर्मत इस वाक़िए की वजह से है। बल्कि हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की शहादत का इस दिन वाक़ेअ होना यह हज़रत हुसैन रज़ियल्लाहु अन्हु की अतिरिक्त फ़ज़ीलत की दलील है कि अल्लाह तआला ने उनको शहादत का दर्जा उस दिन में अता फ़रमाया जो पहले ही से मुक़द्दस और सम्मानित चला आ रहा है। बहरहाल! यह आशूरा का दिन एक मुक़द्दस और पवित्र दिन है।

इस दिन की फ़ज़ीलत के असबाब

इस दिन के मुक़द्दस होने की वजह क्या है? यह अल्लाह तआला ही बेहतर जानते हैं। इस दिन को अल्लाह तआला ने दूसरे दिनों पर क्या फ़ज़ीलत (बड़ाई) दी है? और इस दिन का क्या रुतबा रखा है? अल्लाह तआला ही बेहतर जानते हैं। हमें तहक़ीक़ में पड़ने की ज़रूरत नहीं। बाज़ लोगों में यह बात मशहूर है कि जब हज़रत आदम अलैहिस्सलाम दुनिया में उतरे तो वह आशूरा का दिन था। जब नूह अलैहिस्सलाम की कश्ती तूफ़ान के बाद ख़ुश्की में उतरी तो वह आशूरा का दिन था। हज़रत इब्राहिम को जब आग में डाला गया और

उस आग को अल्लाह तआ़ला ने उनके लिये गुलज़ार बनाया तो वह आ़शूरा का दिन था और कियामत भी आ़शूरा के दिन क़ायम होगी।

ये बातें लोगों में मशहूर हैं लेकिन इनकी कोई असल और बुनियाद नहीं। कोई सही रिवायत ऐसी नहीं है जो यह बयान करती हो कि ये वाकिआ़त आ़शूरा के दिन पेश आये थे।

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को फ़िरऔ़न से निजात मिली

सिर्फ़ एक रिवायत में है कि जब हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का मुकाबला फ़िरऔ़न से हुआ और फिर हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम दरिया किनारे पहुँच गये और पीछे से फ़िरऔ़न का लश्कर आ गया तो अल्लाह तआ़ला ने उस वक़्त हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम को हुक्म दिया कि अपनी लाठी दरिया के पानी पर मारें। उसके नतीजे में दरिया में बारह रास्ते बन गये और उन रास्तों के ज़रिये हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम का लश्कर दरिया के पार चला गया और जब फ़िरऔ़न दरिया के पास पहुँचा और उसने दरिया में ख़ुश्क रास्ते देखे तो वह भी दरिया के अन्दर चला गया। लेकिन जब फ़िरऔ़न का पूरा लश्कर दरिया के बीच में पहुँचा तो वह पानी मिल गया और फ़िरऔ़न और उसका पूरा लश्कर डूब गया। यह वाकिआ़ आ़शूरा के दिन पेश आया। इसके बारे में एक रिवायत मौजूद है जो किसी क़द्र बेहतर रिवायत है, लेकिन इसके अ़लावा जो दूसरे वाकिआ़त हैं, उनके आ़शूरा के दिन में होने पर कोई असल और बुनियाद नहीं।

फ़ज़ीलत के असबाब को तलाश करने की ज़रूरत नहीं

जैसे कि मैंने अ़र्ज़ किया कि इस तहकीक़ में पड़ने की ज़रूरत नहीं कि किस वजह से अल्लाह तआ़ला ने इस दिन को फ़ज़ीलत बख़्शी? बल्कि ये सब अल्लाह जल्ल शानुहू के बनाये हुए दिन हैं। वह जिस दिन को चाहते हैं अपनी रहमतों और बरकतों के नाज़िल होने के लिये चुन लेते हैं। वही इसकी हिक्मत और मस्लेहत को जानने वाले

हैं। यह बात हमारी और आपकी समझ से बाहर है। इसलिये इस बहस में पड़ने की ज़रूरत नहीं।

इस दिन सुन्नत वाले काम करें

अलबत्ता इतनी बात ज़रूर है कि जब अल्लाह तआला ने इस दिन को रहमत और बरकत के नाज़िल होने के लिये चुन लिया तो इसकी पवित्रता और पाकीज़गी यह है कि इस दिन को उस काम में इस्तेमाल किया जाये जो काम नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत से साबित हो। सुन्नत के तौर पर इस दिन के लिये सिर्फ़ एक हुक्म दिया गया है कि इस दिन रोज़ा रखा जाये। चुनाँचे एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस दिन में रोज़ा रखना पिछले एक साल के गुनाहों का कफ़्फ़ारा (बदला, गुनाहों को मिटाने वाला) हो जायेगा। बस यह एक हुक्म सुन्नत है, इसकी कोशिश करनी चाहिये कि अल्लाह तआ़ला इसकी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

यहूदियों के साथ समानता से बचें

इसमें एक मसला और भी है। वह यह कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुबारक ज़िन्दगी में जब भी आ़शूरा का दिन आता तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम रोज़ा रखते, लेकिन वफ़ात से पहले जो "आ़शूरा" का दिन आया तो आप सल्ल० ने आ़शूरा का रोज़ा रखा और साथ में यह इरशाद फ़रमाया कि दस मुहर्रम को हम मुसलमान भी रोज़ा रखते हैं और यहूदी भी रोज़ा रखते हैं और यहूदियों के रोज़ा रखने की वजह यही थी कि इस दिन में चूँकि बनी इस्राईल को अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम के ज़रिये फ़िरऔ़न से निजात दी थी, उसके शुक्राने के तौर पर यहूदी इस दिन रोज़ा रखते थे।

बहरहाल! हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि हम भी इस दिन रोज़ा रखते हैं और यहूदी भी इस दिन रोज़ा रखते हैं, जिसकी वजह से उनके साथ हल्की सी समानता पैदा हो जाती है। इसलिये अगर मैं अगले साल ज़िन्दा रहा तो सिर्फ़ आ़शूरा का रोज़ा नहीं रखूँगा बल्कि साथ में एक और रोज़ा मिलाऊँगा। नौ मुहर्रम या ग्यारह मुहर्रम का रोज़ा भी रखूँगा ताकि यहूदियों के साथ मुशाबहत (समानता और इस मामले में उन जैसा दिखना) ख़त्म हो जाये।

एक के बजाये दो रोज़े रखें

लेकिन अगले साल आ़शूरा का दिन आने से पहले हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इन्तिक़ाल हो गया और आप सल्ल० को इसपर अ़मल की नौबत नहीं आई। लेकिन चूँकि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बात इरशाद फ़रमा दी थी, इसलिये सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हुम अज्मईन ने आ़शूरा के रोज़े में इस बात का एहतिमाम किया और नौ (9) मुहर्रम या ग्यारह (11) मुहर्रम का एक रोज़ा और मिलाकर रखा और इसको मुस्तहब क़रार दिया और तन्हा आ़शूरा के रोज़े को हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद की रोशनी में मक्रूहे-तन्ज़ीही और ख़िलाफ़े-औला (ग़ैर-बेहतर) क़रार दिया।

यानी अगर कोई शख़्स सिर्फ़ आ़शूरा का रोज़ा रख ले तो वह गुनाहगार नहीं होगा बल्कि उसको आ़शूरा के दिन रोज़ा रखने का सवाब मिलेगा। लेकिन चूँकि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़्वाहिश दो रोज़े रखने की थी, इसलिये इस ख़्वाहिश की पूर्ती में बेहतर यह है कि एक रोज़ा और मिलाकर दो रोज़े रखे जायें।

इबादत में भी उनकी शक्ल व सूरत न अपनायें

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इस इरशाद में हमें एक सबक़ और मिलता है। वह यह कि ग़ैर-मुस्लिम के साथ मामूली सी मुशाबहत (समानता और ज़ाहिरी शक्ल व सूरत में उन जैसा बनना) भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने पसन्द नहीं फ़रमाई। हालाँकि किसी बुरे और नाजायज़ काम में नहीं थी, बल्कि इबादत में मुशाबहत थी कि इस दिन जो इबादत वे कर रहे हैं, हम भी इस दिन वही इबादत कर रहे हैं। लेकिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इसको भी पसन्द नहीं फ़रमाया। क्यों? इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को जो दीन अ़ता फ़रमाया है, वह सारे दीनों से अलग और नुमायाँ है और उनपर फ़ौक़ियत (बरतरी) रखता है। लिहाज़ा एक मुसलमान का ज़ाहिर व बातिन भी ग़ैर-मुस्लिम से अलग और नुमायाँ होना चाहिये। उसका अ़मल का तरीक़ा, उसकी चाल-ढाल, उसकी शक्ल व सूरत, उसका वजूद, उसके आमाल, उसके अख़्लाक़, उसकी इबादतें वग़ैरह-वग़ैरह हर चीज़ ग़ैर-मुस्लिम से अलग और नुमायाँ होनी चाहिये। चुनाँचे हदीसों में ये अहकाम जगह-जगह मिलेंगे जिसमें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ग़ैर-मुस्लिमों से अलग तरीक़ा इख़्तियार करो। मिसाल के तौर पर फ़रमायाः

خَالِفُوا الْمُشْرِكِيْنَ (صحیح بخاری، کتاب اللباس، باب فی العمائم)

यानी मुश्रिकीन जो अ़ल्लाह तआ़ला के साथ दूसरों को शरीक ठहराते हैं, उनसे अपना ज़ाहिर व बातिन (अन्दर व बाहर की हालत) अलग रखो।

मुशाबहत इख़्तियार करने वाला उन्हीं में से है

जब इबादत के अन्दर और बन्दगी और नेकी के काम में भी नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुशाबहत (किसी जैसा

बनना) पसन्द नहीं फ़रमाई तो दूसरे कामों में अगर मुसलमान उनकी मुशाबहत (शक्ल व सूरत और आमाल वग़ैरह में उन जैसी हालत) इख़्तियार करें तो यह कितनी बूरी बात होगी। अगर यह मुशाबहत जान-बूझकर इस मक़सद से इख़्तियार की जाये कि मैं उन जैसा नज़र आऊँ, तो यह गुनाहे-कबीरा (बड़ा गुनाह) है। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

مَنْ تَشَبَّهَ بِقَوْمٍ فَهُوَ مِنْهُمْ

(ابو داؤد، کتاب اللباس، باب فی لبس الشهرة)

जो शख़्स किसी क़ौम की मुशाबहत (उन जैसा तरीक़ा और रंग-ढंग) इख़्तियार करे, वह उसी क़ौम के अन्दर दाख़िल है। मिसाल के तौर पर अगर कोई शख़्स अंग्रेज़ों का तरीक़ा इसलिये इख़्तियार करे ताकि मैं देखने में अंग्रेज़ नज़र आऊँ तो यह गुनाहे-कबीरा (बड़ा गुनाह) है। लेकिन अगर दिल में यह नीयत नहीं है कि मैं उन जैसा नज़र आऊँ बल्कि वैसे ही मुशाबहत इख़्तियार कर ली तो यह मक्रूह (बुरा और ना-पसन्दीदा) ज़रूर है।

ग़ैर-मुस्लिमों की नक़ल करना छोड़ दें

अफ़सोस है कि आज मुसलमानों को इस हुक्म का ख़्याल और पास नहीं रहा। अपने काम के तरीक़े में, शक्ल व सूरत में, लिबास पौशाक में, उठने बैठने के अन्दाज़ में, खाने पीने के तरीक़ों में, ज़िन्दगी के हर काम में हमने ग़ैर-मुस्लिमों के साथ मुशाबहत इख़्तियार कर ली है। उनकी तरह का लिबास पहन रहे हैं, उनकी ज़िन्दगी की तरह अपनी ज़िन्दगी का निज़ाम बनाते हैं। उनकी तरह खाते पीते हैं, उनकी तरह बैठते हैं, ज़िन्दगी के हर काम में उनकी नक़्क़ाली को हमने एक फ़ैशन बना लिया है। आप अन्दाज़ा करें कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आशूरा के दिन रोज़ा रखने में यहूदियों के साथ मुशाबहत को पसन्द नहीं फ़रमाया। इससे सबक़ मिलता है कि हमने

ज़िन्दगी के दूसरे विभागों में ग़ैर-मुस्लिमों की जो नक़्क़ाली इख़्तियार कर रखी है, ख़ुदा के लिये उसको छोड़ दें और जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़ों की और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लहु अ़न्हुम की नक़्क़ाली करें। उन लोगों की नक़्क़ाली मत करें जो रोज़ाना तुम्हारी पिटाई करते हैं, जिन्होंने तुम पर ज़ुल्म और ज़्यादती का शिकंजा कसा हुआ है, जो तुम्हें इनसानी हुक़ूक़ देने को तैयार नहीं। उनकी नक़्क़ाली से आख़िर तुम्हें क्या हासिल होगा? हाँ दुनिया में भी ज़िल्लत होगी और आख़िरत में भी रुस्वाई होगी। अल्लाह तआ़ला हर मोमिन को इससे महफ़ूज़ रखे। आमीन।

आ़शूरा के दिन दूसरे आमाल साबित नहीं

बहरहाल! इस मुशाबहत से बचते हुए आ़शूरा का रोज़ा रखना बड़ी फ़ज़ीलत का काम है। आ़शूरा के दिन रोज़ा रखने का हुक्म तो बरहक़ है। लेकिन रोज़े के अ़लावा आ़शूरा के दिन लोगों ने जो आमाल इख़्तियार कर रखे हैं, उनकी क़ुरआने करीम और हदीस पाक में कोई बुनियाद नहीं। मिसाल के तौर पर बाज़ लोगों का ख़्याल यह है कि आ़शूरा के दिन खिचड़ा पकना ज़रूरी है, अगर खिचड़ा नहीं पकाया तो आ़शूरा की फ़ज़ीलत ही हासिल नहीं होगी।

इस क़िस्म की कोई बात न तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाई और न ही सहाबा-ए-किराम ने और न ताबिईन और दीन के बुज़ुर्गों ने इस पर अ़मल किया, सदियों तक इस अ़मल का कहीं वजूद नहीं मिलता।

आ़शूरा के दिन घर वालों पर कुशादगी करना

हाँ एक कमज़ोर हदीस है, मज़बूत हदीस नहीं है। उस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद नक़्ल किया गया है कि जो शख़्स आ़शूरा के दिन अपने घर वालों पर और उन लोगों पर जो उसके अ़याल हैं, जैसे उसके बीवी बच्चे, घर के नौकर

वग़ैरह, उनको आम दिनों के मुकाबले में उम्दा और अच्छा खाना खिलाये और खाने में वुसअ़त (कुशादगी) इख़्तियार करे। तो अल्लाह तआ़ला उसकी रोज़ी में बरकत अ़ता फ़रमायेंगे।

यह हदीस अगरचे सनद के एतिबार से मज़बूत नहीं है लेकिन अगर कोई शख़्स इस पर अ़मल करे तो कोई हर्ज नहीं, बल्कि अल्लाह तआ़ला की रहमत से उम्मीद है कि इस अ़मल पर जो फ़ज़ीलत बयान की गई है, वह इन्शा-अल्लाह हासिल होगी। लिहाज़ा इस दिन घर वालों पर खाने में वुस्अ़त करनी चाहिये, इसके आगे लोगों ने जो चीज़ें अपनी तरफ़ से घढ़ ली हैं, उनकी कोई असल और बुनियाद नहीं।

गुनाह करके अपनी जानों पर ज़ुल्म मत करो

कुरआन करीम ने जहाँ हुर्मत (अ़ज़मत व बड़ाई) वाले महीनों का ज़िक्र फ़रमाया है, उस जगह पर एक अजीब जुमला यह इरशाद फ़रमा दिया कि:

فَلَا تَظْلِمُوْا فِيْهِنَّ اَنْفُسَكُمْ (سورۂ توبہ آیت:۳۶)

यानी इन हुर्मत (अ़ज़मत व बड़ाई) वाले महीनों में तुम अपनी जानों पर ज़ुल्म न करो। ज़ुल्म न करने से मुराद यह है कि इन महीनों में गुनाहों से बचो, बिद्अ़तों और बुरे कामों से बचो। चूँकि अल्लाह तआ़ला तो आ़लिमुल्-ग़ैब (तमाम छुपी बातों के भी जानने वाले) हैं, जानते थे कि इन हुर्मत (अ़ज़मत व बड़ाई) वाले महीनों में लोग अपनी जानों पर ज़ुल्म करेंगे और अपनी तरफ़ से इबादत के तरीक़े घढ़कर उनपर अ़मल करना शुरू कर देंगे, इसलिये फ़रमाया कि अपनी जानों पर ज़ुल्म न करो।

दूसरों की मज्लिसों में शिर्कत मत करो

शिया हज़रात इस महीने में जो कुछ करते हैं, वह अपने मस्लक के मुताबिक़ करते हैं। लेकिन बहुत से सुन्नी हज़रात भी ऐसी मज्लिसों

में और ताज़ियों में और उन कामों में शरीक हो जाते हैं जो बिद्अ़त और बुराई की तारीफ़ में आ जाते हैं। क़ुरआन करीम ने तो साफ़ हुक्म दे दिया कि इन महीनों में अपनी जानों पर ज़ुल्म न करो बल्कि इन वक़्तों को अल्लाह तआ़ला की इबादत में और उसके ज़िक्र में और उसके लिये रोज़ा रखने में और उसकी तरफ़ रुजू करने में और उससे दुआ़यें करने में ख़र्च करो, और इन फ़ुज़ूल कामों से अपने आपको बचाओ।

अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से इस महीने की हुर्मत (अ़ज़मत व बड़ाई) और आ़शूरा की हुर्मत और बड़ाई से फ़ायदा उठाने की हम सबको तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये और अपनी रिज़ा के मुताबिक़ इस दिन को गुज़ारने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

कलिमा-ए-तय्यिबा के तक़ाज़े

और अल्लाह वालों का साथ

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِىَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُوْنُوْا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ○ (سورۂ توبہ آیت:۱۱۹)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لِلّٰه رب العالمين ○

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! आज इस मुबारक मदरसे में हाज़िर होकर एक लम्बे ज़माने की दिली तमन्ना पूरी हो रही है। एक लम्बे समय से इस मुबारक मदरसे में हाज़िरी का शौक़ था और मेरे मख़दूम बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना मुफ़्ती अ़ब्दुश्-शकूर साहिब तिर्मिज़ी दामत बरकातुहुम (अब उनका इन्तिक़ाल हो चुका है। रहमतुल्लाहि अ़लैहि) की ज़ियारत और इनकी सोहबत से लाभ उठाने की ग़रज़ से बराबर यहाँ आने को दिल चाहता था। लेकिन मसरूफ़ियात और मशग़लों ने अब तक मोहलत न दी। अल्लाह तआ़ला का फ़ज़्ल व करम है कि आज

यह पुरानी आरज़ू उसने पूरी फ़रमाई।

यहाँ हाज़िरी का मेरा असल मक़सद हज़रत मुफ़्ती साहिब की ज़ियारत और उनके हुक्म की तामील थी। जब मैं यहाँ हाज़िरी का इरादा कर रहा था तो ज़ेहन में बिल्कुल नहीं था कि माशा-अल्लाह इतना बड़ा मुसलमानों का इज्तिमा मौजूद होगा और उनसे ख़िताब करने की नौबत आयेगी।

बहरहाल! यह अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम है कि उसने हज़रत मौलाना की ज़ियारत के साथ-साथ मुसलमानों के इतने बड़े मजमे की भी ज़ियारत की तौफ़ीक़ अता फ़रमाई, जो ख़ालिस अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुहब्बत और अल्लाह के दीन की तलब की ख़ातिर इस आँगन में जमा है।

उनका नेक गुमान सच्चा हो जाये

मेरे बुज़ुर्ग हज़रत मौलाना मुशर्रफ़ अली साहिब थानवी, अल्लाह तबारक व तआला उनको दुनिया और आख़िरत की कामयाबियाँ अता फ़रमाये और उनके फ़ुयूज़ से हमें लाभान्वित फ़रमाये। उन्होंने मुझ नाकारा के बारे में जो तारीफ़ी कलिमात इरशाद फ़रमाये, वे मेरे लिये हिजाब और शर्म का सबब हैं और यह उनकी शफ़क़त और करम-फ़रमाई है कि उन्होंने मुझ नाकारा के बारे में इन ख़्यालात का इज़हार फ़रमाया। मैं सिवाये इसके और क्या अर्ज़ करूँ कि अल्लाह तबारक व तआला उनके इस नेक गुमान को मेरे हक़ में सच्चा फ़रमा दे। आप हज़रात से भी इसी दुआ की दरख़्वास्त है।

मैं सोच रहा था कि इस मौक़े पर आप हज़रात की ख़िदमत में क्या अर्ज़ करूँ? हज़रत मुफ़्ती अब्दुश्-शकूर मद्द ज़िल्लहुम से भी पूछा कि किस विषय पर बयान करूँ? समझ में नहीं आ रहा था, यहाँ बैठने के बाद दिल में एक बात आई और उसी के बारे में चन्द मुख़्तसर गुज़ारिशात आप हज़रात की ख़िदमत मैं अर्ज़ करूँगा।

यह अल्लाह और उसके रसूल सल्ल० की मुहब्बत का नतीजा है

मैं देख रहा हूँ कि माशा-अल्लाह मुसलमानों का इतना बड़ा मजमा है कि चेहरों पर ख़ुशी के आसार हैं। शौक़ व ज़ौक़ के आसार हैं। तलब के आसार हैं। यह आख़िर क्यों?

दिल में ख़्याल पैदा हुआ कि मुझ जैसा एक नाकारा बे-इल्म बे-अ़मल इनसान उनके सामने बैठा है। अक्सर हज़रात वे हैं कि जिनसे इससे पहले मुलाक़ात की सआ़दत (सौभाग्य) हासिल नहीं हुई। लेकिन आख़िर वह क्या बात है कि एक अन्देखा शख़्स जिसको पहले कभी देखा नहीं, कभी बरता नहीं, ऐसे शख़्स को देखने के लिए इतना शौक़ व ज़ौक़! उसकी बात सुनने के लिए इतना ज़ौक़ व शौक़! यह आख़िर क्या बात है? ज़ेहन में यह आया कि मेरी हालत जो कुछ है वह अल्लाह ही जानता है। अल्लाह तआ़ला उसकी इस्लाह फ़रमाये। लेकिन जो तलब और जो ज़ौक़ व शौक़ लेकर ये अल्लाह के बन्दे, ये मुहम्मद रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के उम्मती इस सेहन के अन्दर जमा हुए हैं। यह हम सबके लिए इतनी बड़ी सआ़दत और इतनी बड़ी ख़ुशनसीबी की बात है कि इसका बयान शब्दों से नहीं हो सकता। यह दर हक़ीक़त मुहब्बत है। एक शख़्स से नहीं, एक ज़ात से नहीं, यह मुहब्बत है अल्लाह की और अल्लाह के रसूल मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की। उसकी ख़ातिर ये सब नज़ारे देखने में आते हैं और मैं ये नज़ारे आज पहली बार नहीं देख रहा हूँ। इससे पहले भी ऐसे-ऐसे मक़ामात (स्थानों) पर देखे हैं जहाँ इसका कोई तसव्वुर भी इनसान के ज़ेहन में नहीं आ सकता।

कलिमा-ए-तय्यिबा ने हम सबको मिला दिया है

अल्लाह तआ़ला ने दुनिया के बहुत से मुल्कों में जाने का मौक़ा

दिया। ऐसे-ऐसे कुफ़्रिस्तानों में जहाँ कुफ़्र की अंधेरी छाई हुई है। ऐसी-ऐसी जगहों पर जो हमारी भाषा नहीं जानते। एक जुमला हम बोलें तो वे समझ नहीं सकते वे अगर कोई जुमला बोलें तो हम उसको नहीं समझ सकते। लेकिन अभी पिछले साल मुझे चीन जाने का इत्तिफ़ाक़ हुआ। आबादी के लिहाज़ से दुनिया का सबसे बड़ा मुल्क है और वहाँ पर काफ़िर और ग़ैर-मुस्लिम आबाद हैं। लेकिन वहाँ पर अल्लाह के मुसलमान बन्दे भी हैं, वहाँ जाकर पहली बार यह बात तहक़ीक़ से मालूम हुई कि चीन में मुसलमानों की तादाद कम से कम आठ करोड़ है। जब गाँव और देहात में यह इत्तिला पहुँची कि पाकिस्तान से कुछ मुसलमान आ रहे हैं तो घण्टों पहले से दोनों तरफ़ दो-रुख़ी क़तारें लगा कर इन्तिज़ार में खड़े हो गये। हालाँकि बर्फ़ पड़ रही थी, लेकिन इस इन्तिज़ार में कि पाकिस्तान से कुछ मुसलमान आये हैं उनको देखें। चुनाँचे जब हम वहाँ पहुँचे और उन्होंने हमें देखा तो कोई जुमला वे हमसे नहीं कह सकते थे और हम कोई जुमला उनसे नहीं कह सकते थे। क्योंकि वे हमारी भाषा नहीं जानते और हम उनकी भाषा नहीं जानते। लेकिन एक लफ़्ज़ ऐसा है जो हमारे दीन ने हमें मुशतरक दे दिया है। चाहे कोई भाषा इनसान बोलता हो, अपने दिल की तर्जुमानी वह इस लफ़्ज़ के ज़रिये कर सकता है, वह है "अस्सलामु अ़लैकुम व रहमतुल्लाहि" तो हर शख़्स देखने के बाद अस्सलामु अ़लैकुम का नारा लगाता और यह कहकर उसकी आँखों से आँसू जारी हो जाते।

एक रिश्ता अल्लाह तआ़ला ने हमारे दरमियान पैदा फ़रमा दिया, चाहे वह पूरब का रहने वाला हो या पश्चिम का। कोई भाषा बोलता हो, बात उसकी समझ में आती हो या न आती हो, उसका रहन-सहन, उसकी तहज़ीब और उसकी नागरिकता कुछ भी हो। लेकिन जब यह पता चल गया कि यह मुसलमान है और कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" के रिश्ते में हमारे साथ शरीक है तो उसके लिए दिल में मुहब्बत के जज़्बात उभरने शुरू हो जाते हैं।

हमें और आपको अल्लाह तआला ने बहुत से रिश्तों में जोड़ा है, उनमें जो सबसे मज़बूत रिश्ता जो कभी टूट नहीं सकता, जो कभी ख़त्म नहीं हो सकता, जो कभी कमज़ोर नहीं पड़ सकता, वह रिश्ता है "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" का रिश्ता।

इस रिश्ते को कोई ताक़त ख़त्म नहीं कर सकती

मेरा बंगलादेश जाने का इत्तिफ़ाक़ हुआ। जो कभी बहरहाल पाकिस्तान ही का हिस्सा था। पूर्वी पाकिस्तान कहलाया करता था। वहाँ लोगों के अन्दर यह बात मशहूर है कि जब से बंगलादेश अलग हुआ, उस वक़्त से पूरे बंगलादेश में ढाका से लेकर चाटगाम और सल्हट तक किसी जगह उर्दू सुनाई नहीं देती। इसलिए कि उर्दू का तो बीज मार दिया गया। बल्कि उर्दू का लफ़्ज़ सुनकर लोगों को गुस्सा आता है कि उर्दू ज़बान में क्यों बात की गई? बंगला ज़बान में बात करो या अंग्रेज़ी में।

जब मैं चाटगाम पहुँचा तो वहाँ यह ऐलान हो गया कि फ़लाँ मैदान में बयान होगा। चुनाँचे वह मैदान पूरा भर गया। उस मजमे के अन्दर मैंने उर्दू में बयान किया। उसमें लोगों का अन्दाज़ा यह था कि कम से कम पचास हज़ार मुसलमानों का इज्तिमा था और लोगों का कहना यह था कि बंगलादेश बनने के बाद इतना बड़ा इज्तिमा हमने नहीं देखा। और लोगों का कहना यह भी था कि अगर कोई इतने बड़े जलसे के अन्दर उर्दू ज़बान में बयान करे तो लोग उसके ख़िलाफ़ नारे लगाना शुरू कर देते हैं। आंदोलन शुरू कर देते हैं। लेकिन लोगों ने मेरी बात इतनी मुहब्बत से, इतने प्यार से और इतने शौक़ से सुनी कि लोग हैरत में रह गये। वहाँ भी मैंने यह बात अर्ज़ की कि हमारे दरमियान सरहदें क़ायम हो सकती हैं, पुलिस और फ़ौज के पहरे रोक हो सकते हैं, दरिया और समुद्र और पहाड़ के फ़ासले रुकावट हो सकते हैं, लेकिन इन तमाम बातों के बावजूद अल्लाह तआला ने हमें

एक ऐसे रिश्ते में पिरो दिया है कि उसको दुनिया की कोई ताक़त ख़त्म नहीं कर सकती। और वह है कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह"।

इस कलिमे के ज़रिये ज़िन्दगी में इन्क़िलाब आ जाता है

यह कलिमा जिसने हमें और आपको जोड़ा हुआ है, अ़जीब व ग़रीब है। अ़जीब व ग़रीब मनाज़िर दिखाता है। आप जानते हैं कि यह कलिमा ऐसा है कि इनसान की ज़िन्दगी में इस कलिमे के पढ़ते ही इतना बड़ा इन्क़िलाब बर्पा होता है कि उससे पड़ा इन्क़िलाब कोई हो नहीं सकता। एक शख़्स जो इस कलिमे के पढ़ने से पहले काफ़िर था, कलिमा पढ़कर मुसलमान हो गया। इसका मतलब यह है कि जब तक उस शख़्स ने यह कलिमा नहीं पढ़ा था, उस वक़्त तक वह जहन्नमी था, अल्लाह का नापसन्दीदा था, दोज़ख़ का हक़दार था, और इस कलिमे को पढ़ने के बाद एक लम्हे के अन्दर वह शख़्स जन्नती बन गया और अल्लाह तआ़ला का महबूब बन गया।

हदीस में आता है कि नबी करीम सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

من قال لا اله الا الله دخل الجنة

यानी जो शख़्स 'ला इला-ह इल्लल्लाहु' कह दे बस जन्नती है।

गुनाहों की सज़ा भुगतेगा अगर गुनाह किये हैं। गुनाहों की सज़ा भुगतने के बाद आख़िरी अन्जाम उसका जन्नत है। गुनाह किये, ग़लतियाँ कीं, कोताहियाँ कीं। अगर उसने तौबा नहीं की तो सज़ा मिलेगी, लेकिन सज़ा मिलने के बाद आख़िरी अन्जाम उसका जन्नत है। यह मेरी बात नहीं, यह सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का कलाम है, उससे ज़्यादा सच्चा इस कायनात में कोई और कलाम हो नहीं सकता, कि वह जन्नती है। और कलिमा शरीफ़ पढ़ने के बाद एक शख़्स जहन्नम के सातों तबक़े से निकल कर जन्नतुल्-

फ़िर्दौस के आला तरीन तबके तक पहुँच जाता है।

एक चरवाहे का वाकिआ

ख़ैबर की लड़ाई का वाकिआ याद आया। ग़ज़वा-ए-ख़ैबर वह जिहाद है जिसमें नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यहूदियों के ख़िलाफ़ हमला किया था। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ख़ैबर तशरीफ़ ले गये थे, ख़ैबर के क़िले के बाहर पड़ाव डाला हुआ था और उसका घेराव किया हुआ था। इसमें कई दिन गुज़र गये, लेकिन क़िला अभी फ़तह नहीं हुआ था। अन्दर से यहूदियों का एक चरवाहा बाहर निकला, वह बकरियाँ चरा रहा था। काली रंगत थी और किसी यहूदी ने उसको बकरियाँ चराने के लिए अपना नौकर रखा हुआ था। वह बकरियाँ चराने की ग़रज़ से ख़ैबर के क़िले से बाहर निकला तो देखा कि मुसलमानों का लश्कर पड़ा हुआ है। उसने यह सुन रखा था कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हिजाज़ से यहाँ पर हमला करने के लिए आये हैं। मदीने के बादशाह हैं। उसके दिल में ख़्याल आया कि ज़रा मैं भी देखूँ। आज तक मैंने कोई बादशाह नहीं देखा, और देखकर आऊँ कि मदीने का बादशाह कैसा है और क्या बात कहता है? लोगों से पूछा कि सरकारे दो-आ़लम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कहाँ तशरीफ़ रखते हैं? सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने इशारा करके बता दिया कि फ़लाँ ख़ेमे के अन्दर तशरीफ़ रखते हैं। पहले तो वह ख़ेमे को देखकर ही हैरान रह गया, उसके ज़ेहन में यह था कि जब यह मदीने के बादशाह हैं और जिनकी कुव्वत और ताक़त का डंका बजा हुआ है, उनका जो ख़ेमा होगा वह क़ालीनों से सुसज्जित होगा। उसमें शानदार पर्दे पड़े हुए होंगे। बाहर पेहरेदार खड़े हुए पेहरा दे रहे होंगे।

वहाँ जाकर देखा तो एक मामूली खजूर का बना हुआ ख़ेमा नज़र आ रहा है, न कोई चौकीदार है, न कोई पेहरेदार है, न कोई साथी है,

न कोई हटो-बचो के नारे लगाने वाला है। ख़ैर वह चरवाहा अन्दर दाख़िल हो गया। अन्दर सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ फ़रमा थे। उसने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखा तो बड़ी अ़जीब व ग़रीब नूरानी सूरत नज़र आई। वह जलवा नज़र आया तो दिल कुछ खिंचना शुरू हुआ। जाकर अ़र्ज़ किया कि आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) यहाँ क्यों तशरीफ़ लाये हैं? आपका पैग़ाम और आपकी दावत क्या है? नबी करीम सरकारे दो-आ़लम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मेरी तो एक ही दावत है और वह यह कि अल्लाह के सिवा किसी को अपना माबूद न मानो और 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' पढ़ लो। कुछ नबी करीम सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के दुनिया को रोशन करने वाला जलवा और कुछ आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इरशादात, इन दोनों का तबीयत पर असर होना शुरू हुआ तो उसने पूछाः अच्छा यह बताइये कि अगर मैं आपकी इस दावत को क़बूल कर लूँ और 'ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह' पढ़ लूँ तो मेरा अन्जाम क्या होगा? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हारा अन्जाम यह होगा कि तुम तमाम मुसलमानों के बराबर हुक़ूक़ हासिल कर लोगे। हम तुम्हें सीने से लगायेंगे और जो एक मुसलमान का हक़ है वही तुम्हारा भी हक़ होगा।

उसने कहा कि आप मुझे सीने से लगायेंगे? सारी उम्र कभी यह बात उसके तसव्वुर में भी नहीं आई थी कि कोई सरदार या कोई बादशाह या कोई बड़ा आदमी मुझे गले लगा सकता है। उसने कहा कि मेरा हाल तो यह है कि मैं काला आदमी (हब्शी) हूँ। मेरी रंगत काली है। मेरे जिस्म से बदबू उठ रही है। इस हालत में आप मुझे कैसे सीने से लगायेंगे? आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब तुम यह ईमान क़बूल कर लोगे तो फिर सब तुम्हें सीने से लगायेंगे। तुम्हारे हुक़ूक़ तमाम मुसलमानों के बराबर होंगे।

बाज़ रिवायतों में आता है कि उसने कहा कि आप (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम) इतने बड़े बादशाह होकर मुझसे मज़ाक़ की बात करते हैं। यह कहकर कि मुझे गले से लगायेंगे। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि नहीं! मैं मज़ाक़ नहीं करता। वाक़ई उस दीन का पैग़ाम लेकर आया हूँ जो काले और गोरे, हाकिम और महकूम, ग़रीब और सरमायेदार के दरमियान कोई फ़र्क़ नहीं करता। वहाँ तो फ़ज़ीलत उसको हासिल है जो अल्लाह तआ़ला से ज़्यादा डरता हो। इस वास्ते तुम हमारे बराबर होगे और हम तुम्हें गले से लगायेंगे। उसने कहा कि अगर यह बात है तो मैं मुसलमान हो गया। फिर उसने "अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदर्-रसूलुल्लाहि' पढ़कर मुसलमान हो गया।

फिर उसने कहा कि या रसूलल्लाह (सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम)! अब मैं मुसलमान हो चुका, अब मुझे बताइये कि मुझे क्या करना है? मेरे ज़िम्मे फ़राइज़ क्या हैं? सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम ऐसे वक़्त में मुसलमान हुए हो कि न तो यह कोई नमाज़ का वक़्त है जो तुम्हें नमाज़ पढ़ाई जायें। न यह रमज़ान का महीना है जो तुम्हें रोज़ा रखवाया जाये। न तुम्हारे पास माल व दौलत है कि तुमसे ज़कात दिलवाई जाये। उस वक़्त तक हज फ़र्ज़ नहीं हुआ था। वे इबादतें जो आ़म मशहूर हैं उनका तो कोई मौक़ा नहीं, अलबत्ता इस वक़्त ख़ैबर के मैदान में एक इबादत हो रही है और यह वह इबादत है जो तलवारों के साये में अन्जाम दी जाती है। वह है अल्लाह के रास्ते में जिहाद। तो आओ और दूसरे मुसलमानों के साथ इस जिहाद में शामिल हो जाओ।

उसने कहा कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! मैं जिहाद में शामिल तो हो जाऊँ लेकिन जिहाद में दोनों बातें मुम्किन हैं, यह भी मुम्किन है कि अल्लाह तआ़ला फ़तह अ़ता फ़रमा दे, और यह भी मुम्किन है कि इनसान अपना ख़ून देकर आये। तो अगर मैं इस

जिहाद में मर गया या शहीद हो गया तो फिर मेरा क्या होगा? सरकारे दो-जहाँ सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अगर तुम इस जिहाद में शहीद हो गये तो मैं तुम्हें ख़ुशख़बरी देता हूँ इस बात की कि अल्लाह तआ़ला तुम्हें सीधे जन्नतुल्-फ़िर्दौस के अन्दर ले जायेंगे। तुम्हारे इस सियाह जिस्म को अल्लाह तबारक व तआ़ला मुनव्वर (नूर से रोशन) जिस्म बना देंगे। नूरानी जिस्म बना देंगे। और तुम कहते हो कि मेरे जिस्म से बदबू उठ रही है, तो अल्लाह तबारक व तआ़ला तुम्हारे जिस्म की बदबू को ख़ुशबू में तब्दील फ़रमा देंगे।

उसने कहा कि अगर यह बात है तो बस मुझे और किसी चीज़ की हाजत नहीं। वह जो बकरियाँ लेकर आया था उसके बारे में नबी करीम सरवरे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि ये बकरियाँ जो तुम लेकर आये हो, यह किसी और की हैं, इनको पहले वापस करके आओ।

अन्दाज़ा लगाइये! मैदाने-जंग है। दुश्मन की बकरियाँ हैं। वह चरवाहा दुश्मन से बकरियाँ बाहर लेकर आया है। अगर आप चाहते तो उन बकरियों के रैवड़ को पकड़ कर माले ग़नीमत में शामिल फ़रमा लेते, लेकिन वह चरवाहा उनको बतौर अमानत लेकर आया था और अमानत को वापस दिलवाना यह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तालीमात में सरे-फ़ेहरिस्त था। इस वास्ते आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि पहले इन बकरियों को शहर की तरफ़ भगा दो ताकि ये शहर के अन्दर चली जायें और जो मालिक है उस तक पहुँच जायें।

तो पहले नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बकरियाँ वापस करवाईं फिर उसके बाद वह चरवाहा जिहाद में शामिल हो गया। कई रोज़ तक जिहाद जारी रहा।

जब जिहाद ख़त्म हो गया और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम मामूल के अनुसार शहीदों और ज़ख़्मियों का जायज़ा लेने के

लिए निकले तो जहाँ बहुत सी लाशें पड़ी हुई थीं और अनेक सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम शहीद हुए थे, देखा कि एक लाश पड़ी हुई है। उसके गिर्द सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम जमा हैं और आपस में यह मश्विरा कर रहे हैं कि यह किसकी लाश है? इस वास्ते कि सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को पता नहीं था कि यह कौन है। पहचानते नहीं थे। नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तशरीफ़ ले गये। जाकर देखा तो यह वही अस्वद ग़ालबी चरवाहे की लाश थी। नबी करीम सरवरे दो-आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसको देखकर इरशाद फ़रमाया कि यह शख़्स भी अजीब व ग़रीब इनसान है। यह ऐसा इनसान है कि इसने अल्लाह के लिए कोई सज्दा नहीं किया। एक नमाज़ नहीं पढ़ी। इसने कोई रोज़ा नहीं रखा। इसने एक पैसा अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं किया। लेकिन मेरी आँखें देख रही हैं कि यह सीधा जन्नतुल्-फ़िर्दौस में पहुँचा है और अल्लाह तबारक व तआ़ला ने इसके जिस्म की बदबू को ख़ुशबू से तब्दील फ़रमा दिया है। मैं अपनी आँखों से देख रहा हूँ कि अल्लाह तआ़ला ने इसका यह अन्जाम फ़रमाया।

बहरहाल! यह जो मैं अर्ज़ कर रहा था कि एक लम्हे में यह कलिमा इनसान को जहन्नम के सातवें तबके से निकाल कर जन्नतुल्-फ़िर्दौस के आला तबके तक पहुँचा देता है, कोई मुबालग़े की बात नहीं, वाक़िआ पेश आया है। यह अल्लाह तबारक व तआ़ला ने ऐसा कलिमा बनाया है।

कलिमा तय्यिबा पढ़ लेना, मुआ़हिदा करना है

लेकिन सवाल यह है कि यह कलिमा जो इतना बड़ा इन्क़िलाब बर्पा करता है कि जो पहले दोस्त थे वे दुश्मन बन गये। जो पहले दुश्मन थे वे अब दोस्त बन गये। बद्र के मैदान में बाप ने बेटे के ख़िलाफ़ और बेटे ने बाप के ख़िलाफ़ तलवार उठाई है। इस कलिमे

"ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" की वजह से। तो इतना बड़ा इन्क़िलाब जो बर्पा हो रहा है, क्या यह कोई मन्तर है या कोई जादू है कि यह मन्तर पढ़ा और जादू के कलिमात ज़बान से अदा किये और उसके बाद इनसान के अन्दर इन्क़िलाब बर्पा हो गया। इन अलफ़ाज़ में कोई तासीर है या क्या बात है?

हक़ीक़त में यह कोई मन्तर या जादू या तिलिस्म क़िस्म के कलिमात नहीं। हक़ीक़त में इस कलिमे के ज़रिये जो इन्क़िलाब बर्पा होता है या तो वह इस वास्ते होता है कि जब मैंने कह दिया कि 'अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु' मैं गवाही देता हूँ इस बात की कि इस कायनात में अल्लाह के सिवा और कोई माबूद नहीं, तो इसके मायने यह हैं कि मैंने एक मुआहिदा कर लिया और एक इक़रार कर लिया इस बात का कि आईन्दा हुक्म मानूँगा तो सिर्फ़ अल्लाह का मानूँगा। अल्लाह तआला के हुक्म के आगे सिर झुकाऊँगा और अल्लाह तआला के अलावा किसी और को अपना माबूद क़रार नहीं दूँगा। किसी और की बात अल्लाह के ख़िलाफ़ नहीं मानूँगा।

यह एक मुआहिदा है जो इनसान ने कर लिया और जब अल्लाह को अल्लाह क़रार दे लिया और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अल्लाह का रसूल मान लिया, जिसके मायने यह हुए कि मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अल्लाह तआला की तरफ़ से जो पैग़ाम लेकर आयेंगे, उसके आगे सिर झुका दूँगा और उसे दिल से मानूँगा। चाहे समझ में आये या न आये, चाहे अक़्ल माने या न माने, दिल चाहे या न चाहे, लेकिन अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का जब हुक्म आयेगा तो उसके बाद फिर उसकी नाफ़रमानी करने की मजाल नहीं होगी।

यह है मुआहिदा, यह है इक़रार, यह है अहद, यह है ऐलान इस बात का कि आज से मैंने अपनी ज़िन्दगी को अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मर्ज़ी के ताबे बना लिया।

इनसान जब यह इक़रार कर लेता है और यह मुआहिदा कर लेता है तो उस दिन से वह अल्लाह तआला का महबूब बन जाता है और उसकी ज़िन्दगी में इतना बड़ा इन्क़िलाब बर्पा हो जाता है।

कलिमा-ए-तय्यिबा के क्या तक़ाज़े हैं?

इससे पता चला कि कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्-रसूलुल्लाह" यह महज़ कोई ज़बानी जमा-ख़र्च नहीं है कि ज़बान से कह लिया और बात ख़त्म हो गयी। बल्कि आपने जिस दिन यह कलिमा पढ़ा, उस दिन आपने अपने आपको अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के हवाले कर दिया और इस बात का वायदा कर लिया कि अब मेरी कुछ नहीं चलेगी, अब तो अल्लाह तआला के हुक्म के ताबे ज़िन्दगी गुज़ारूँगा।

लिहाज़ा इस कलिमे "ला इला-ह इल्लल्लाहु" के कुछ तक़ाज़े हैं कि ज़िन्दगी गुज़ारो तो किस तरह गुज़ारो। इबादत किस तरह करो। लोगों के साथ मामलात किस तरह करो। अख़्लाक़ तुम्हारे कैसे हों। समाजी ज़िन्दगी तुम्हारी कैसी हो। ज़िन्दगी के एक-एक शोबे में हिदायतें हैं जो इस कलिमे के दायरे के अन्दर आती हैं। और वे हिदायतें सरकारे दो-आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम अपनी मुबारक ज़बान से भी देकर गये हैं और अपने आमाल से भी। अपनी ज़िन्दगी के एक-एक अमल और गतिविधि से और एक-एक अदा से आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम दीन का तरीक़ा सिखाकर इस दुनिया से तशरीफ़ ले गये।

अब मुसलमान का काम यह है कि वह अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम का इल्म हासिल करके उसके मुताबिक़ अपनी ज़िन्दगी गुज़ारे, और ज़िन्दगी उसके मुताबिक़ गुज़ारने का नाम ही दर हक़ीक़त तक़वा है। तक़वा (परहेज़गारी) के मायने हैं अल्लाह का डर, कहीं ऐसा तो नहीं कि मैंने अल्लाह तआला

के हुज़ूर मुआहिदा तो कर लिया लेकिन मैं जब आख़िर में बारी तआला की बारगाह में पेश हूँ तो मुझे शर्मिन्दगी उठानी पड़े कि जो मुआहिदा मैंने किया था, मैंने उस मुआहिदे को पूरा नहीं किया, इस बात का ख़ौफ़ और इस बात के डर का नाम है तक़्वा!

तक़्वा हासिल करने का तरीक़ा

पूरा क़ुरआन पाक इससे भरा हुआ है कि ऐ ईमान वालो! तक़्वा इख़्तियार करो, सारे दीन का ख़ुलासा इस तक़्वे (अल्लाह के डर और परहेज़गारी) के अन्दर आ जाता है।

और फिर फ़रमाया कि:

وَكُونُوا مَعَ الصّٰدِقِيْنَ

अल्लाह तआला का कलाम भी अजीब व ग़रीब है। अल्लाह के कलाम की शान अजीब है। एक जुमले के अन्दर बारी तआला जितना कुछ इंनसान के करने का काम होता है वह भी सारे का सारा बयान कर देते हैं और फिर उस पर अमल करने का जो तरीक़ा है और उसका जो आसान रास्ता है वह भी अपनी रहमत से अपने बन्दों को बता देते हैं कि वैसे करना तुम्हारे लिए मुश्किल होगा, हम तुम्हें इसका रास्ता बताये देते हैं।

फ़रमाया कि ऐ ईमान वालो! तक़्वा इख़्तियार करो। तक़्वा इख़्तियार कर लिया तो अब उसके बाद किसी चीज़ की ज़रूरत नहीं रहती। तक़्वे में सभी कुछ आ गया। लेकिन सवाल पैदा हुआ कि तक़्वा कैसे इख़्तियार करें? तक़्वा तो बड़ा ऊँचा मुक़ाम है। इसके लिए बड़े तक़ाज़े हैं, बड़ी शर्तें हैं। वे कैसे इख़्तियार करें। कहाँ से इख़्तियार करें? इसका जवाब अगले जुमले में बारी तआला ने दे दिया कि वैसे तक़्वा इख़्तियार करना तुम्हारे लिये मुश्किल होगा लेकिन हम आसान रास्ता बताये देते हैं। वह यह है कि "कूनू मअ़स्सादिक़ीन" (यानी सच्चे लोगों के साथी बन जाओ) सादिक़ीन के साथी बन जाओ।

सच्चे के मायने सिर्फ़ यही नहीं कि वे सच बोलते हों और झूठ न बोलते हों, बल्कि सच्चे के मायने यह हैं कि जो ज़बान के सच्चे, जो बात के सच्चे, जो मामलात के सच्चे, जो समाजी ज़िन्दगी के सच्चे, जो अल्लाह तबारक व तआला के साथ अपने किये हुए मुआहिदे में सच्चे हैं। उनके साथी बन जाओ और उनकी सोहबत इख़्तियार करो। उनके साथ उठना-बैठाना शुरू करो। जब उठना-बैठना शुरू करोगे तो अल्लाह तबारक व तआला उनके तक़्वे की झलक तुम्हारे अन्दर भी पैदा फ़रमा देंगे। यह है तक़्वा हासिल करने का तरीक़ा और इसी तरीक़े से दीन मुन्तक़िल (हस्तानांतरित) होता चला आया है। नबी करीम सरकारे दो-आ़लम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के वक़्त से लेकर आज तक जो दीन आया है, वह सच्चे लोगों की सोहबत से आया, सादिक़ीन की सोहबत से आया।

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम ने दीन कहाँ से हासिल किया?

सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम अज्मईन ने दीन कहाँ से हासिल किया? किसी यूनिवर्सिटी में पढ़ा? किसी कॉलिज में पढ़ा? कोई सर्टिफ़िकेट हासिल किया? कोई डिग्री ली? एक ही यूनिवर्सिटी थी, वह नबी पाक मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की मुबारक ज़ात थी। आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में रहे। आपकी सोहबत उठाई। उससे अल्लाह तआ़ला ने दीन का रंग चढ़ा दिया, ऐसा चढ़ाया ऐसा चढ़ाया कि इस आसमान व ज़मीन की निगाहों ने दीन का ऐसा चढ़ा हुआ रंग न उससे पहले कभी देखा था, न उसके बाद देख सकेगी। वे लोग जो दुनिया के मामूली मामूली मामलात के ऊपर जान क़ुर्बान करने के लिए तैयार होते थे, एक दूसरे के ख़ून के प्यासे बन जाते थे, एक दूसरे की जान लेने पर आमादा हो जाते थे, उनकी नज़र में दुनिया ऐसी बे-हक़ीक़त हुई और ऐसी ज़लील हुई

और ऐसी ख़्वार हुई कि वे अल्लाह तआला के अहकाम के आगे और आख़िरत की कामयाबी के आगे सारी दुनिया के ख़ज़ानों को ख़ातिर में नहीं लाते थे।

हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अन्हु की दुनिया से बे-रग़बती

हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अन्हु का वाक़िआ याद आया। हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु के मुबारक ज़माने में कैसर व किस्रा (रोम और ईरान के बादशाहों) की बड़ी-बड़ी सल्तनतें जो उस ज़माने की सुपर पावर समझी जाती थीं (जैसे आजकल रूस और अमेरिका) उनका ग़ुरूर अल्लाह तआला ने हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु के हाथों ख़ाक में मिला दिया।

उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अन्हु को मुल्क शाम का गवर्नर मुक़र्रर फ़रमाया। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु शाम के दौरे पर तशरीफ़ ले गये कि देखें क्या हालात हैं? तो वहाँ हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु तआला अन्हु से फ़रमाया कि मेरा दिल चाहता है कि मैं अपने भाई का घर देखूँ। दिल में शायद यह ख़्याल होगा कि उबैदा बिन जर्राह मदीने से आये हैं और मुल्क शाम के गवर्नर बन गये हैं। मदीना मुनव्वरा का इलाक़ा उपजाई नहीं था और उसमें कोई ज़रखेज़ी नहीं थी। मामूली खेती-बाड़ी हुआ करती थी और शाम में खेत लहलहा रहे हैं। बेहतरीन उपजाऊ ज़मीनें हैं और रोम की तहज़ीब (सभ्यता) पूरी तरह वहाँ पर मुसल्लत है, तो यहाँ आने के बाद कहीं ऐसा तो नहीं कि दुनिया की मुहब्बत उनके दिल में पैदा हो गयी हो और अपना कोई आलीशान घर बना लिया हो, जिसमें बड़े ऐश व आराम के साथ रहते हों।

शायद इसी क़िस्म का कुछ ख़्याल हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु के दिल में पैदा हुआ हो। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि अपने भाई यानी उबैदा का घर देखना चाहता हूँ। हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु तआला अन्हु ने जवाब में कहा कि अमीरुल् मोमिनीन! आप मेरा घर देखकर क्या करेंगे। आप मेरा घर देखेंगे तो आपको शायद आँखें निचोड़ने के सिवा कोई फ़ायदा हासिल न हो। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु ने फ़रमाया कि मेरा दिल चाहता है कि भाई का घर देखूँ।

हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अन्हु एक दिन उनको अपने साथ लेकर चले, चलते जा रहे हैं चलते जा रहे हैं, कहीं घर नज़र ही नहीं आता। जब शहर की आबादी से बाहर निकलने लगे तो हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने पूछा कि भाई! मैं तुम्हारा घर देखना चाहता था, तुम कहाँ लेजा रहे हो? फ़रमाया अमीरुल् मोमिनीन! मैं आपको अपने घर ही लेजा रहा हूँ। बस्ती से निकल गये तो लेजा कर एक घास-फूँस के झोंपड़े के सामने खड़ा कर दिया और कहा कि अमीरुल् मोमिनीन! यह मेरा घर है। हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अन्हु उस झोंपड़े के अन्दर दाख़िल हुए। चारों तरफ़ नज़रें दौड़ाकर देखने लगे। कोई चीज़ ही नज़र नहीं आती। एक मुसल्ला बिछा हुआ है, उसके सिवा पूरे उस झोंपड़े के अन्दर कोई और चीज़ नहीं। पूछा कि उबैदा! तुम ज़िन्दा किस तरह रहते हो, यह तुम्हारे घर का सामान कहाँ है? तो हज़रत उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु अन्हु आगे बढ़े, बढ़कर एक ताक़ से प्याला उठाकर लाये, देखा तो उस प्याले के अन्दर पानी पड़ा हुआ था और उसमें रोटी के कुछ सूखे टुकड़े भिगोये हुए थे, और अर्ज़ किया कि अमीरुल् मोमिनीन! मुझे अपनी मसरूफ़ियात और ज़िम्मेदारियों में मसरूफ़ (व्यस्त) रहकर इतना वक़्त नहीं मिलता कि मैं खाना पका सकूँ। इसलिए मैं यह करता हूँ कि हफ़्ते-भर की रोटियाँ एक औरत से पकवा लेता हूँ और वह हफ़्ते-भर की रोटी पका कर मुझे दे जाती है।

मैं उसको इस पानी में भिगोकर खा लेता हूँ। अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से ज़िन्दगी अच्छी गुज़र जाती है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने पूछा कि तुम्हारा और सामान? कहा कि और सामान क्या या अमीरुल् मोमिनीन! यह सामान इतना है कि क़ब्र तक पहुँचाने के लिये काफ़ी है। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने देखा तो रो पड़े और कहा कि उबैदा! इस दुनिया ने हममें से हर शख़्स को बदल दिया, लेकिन ख़ुदा की क़सम! तुम वही हो जो सरकारे दो-आ़लम मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के ज़माने में थे। हज़रत उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने फ़रमाया कि अमीरुल् मोमिनीन! मैंने तो पहले ही कहा था कि आप मेरे घर पर जायेंगे तो आँखें निचोड़ने के सिवा कुछ हासिल नहीं होगा।

यह वह शख़्स है जो मुल्क शाम का गवर्नर था। आज उस शाम के अन्दर जो उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के मातेहत था, मुस्तक़िल चार मुल्क हैं। उस शाम के गवर्नर थे। उबैदा बिन जर्राह रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु के क़दमों में दुनिया के ख़ज़ाने रोज़ाना ढेर हो रहे हैं, रोम की बड़ी-बड़ी ताक़तें उबैदा का नाम सुनकर काँप जाती हैं, उनके दाँत खट्टे हो रहे हैं। उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के नाम से, और रोम के महलों के ख़ज़ाने, सोना-चाँदी और ज़ेवरात व जवाहिरात लाकर उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु के क़दमों में ढेर किये जा रहे हैं, लेकिन उबैदा रज़ियल्लाहु अ़न्हु उसे ठोकर मार कर इस फूँस के झोंपड़े में रह रहे हैं। रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु।

नबी करीम दोनों जहान के सरदार मुहम्मद सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम की जो जमाअ़त तैयार की थी, हक़ीक़त यह है कि इस रू-ए-ज़मीन पर ऐसी जमाअ़त मिल ही नहीं सकती। दुनिया को ऐसा ज़लील और ऐसा ख़्वार करके रखा कि दुनिया की कोई हक़ीक़त आँखों में बाक़ी ही नहीं रही थी। इस वास्ते कि हर वक़्त दिल में यह ख़्याल लगा हुआ था कि किसी भी वक़्त

अल्लाह तआ़ला की बारगाह में पेश होना है। ज़िन्दगी है तो वह ज़िन्दगी है, यह चन्द रोज़ा ज़िन्दगी क्या हक़ीक़त रखती है।

यह हक़ीक़त नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम के दिलों में बैठा दी थी। इसी का नाम तक़्वा है। यह कहाँ से हासिल हुई। यह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सोहबत से हासिल हुई। आपकी सोहबत में चन्द दिन जिसने गुज़ार लिये, उसके दिल में दुनिया की हक़ीक़त भी वाज़ेह हो गयी और आख़िरत भी सामने आ गयी। तो दीन इस तरीक़े से चलता आया है।

दीन होता है बुज़ुर्गों की नज़र से पैदा

रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने, सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से ताबिईन ने और ताबिईन से तब्-ए-ताबिईन ने और इसी तरीक़े से आख़िर दम तक दीन इस तरह फैला है और पहुँचा है। जिनकी ज़िन्दगियाँ तक़्वे के साँचे में ढली होती हैं। जो कलिमा "ला इला-ह इल्लल्लाहु मुहम्मदुर्रसूलुल्लाह" के तक़ाज़ों को जानने और समझने वाले होते हैं। उनकी सोहबत से यह चीज़ हासिल होती है। यह किताबें पढ़ने से नहीं आती, यह महज़ तक़रीर सुन लेने से या कर लेने से नहीं आती, यह आती है किसी अल्लाह वाले की सोहबत में कुछ वक़्त गुज़ारने से, उसका अ़मल का तरीक़ा देखने से, उसकी ज़िन्दगी की अदा को पढ़ने से। और इस तरह दीन का यह रंग इनसान के अन्दर मुन्तक़िल (हस्तानांतरित) होता है और जो लोग यह समझते हैं कि मैं किताबें पढ़कर दीन हासिल कर लूँगा तो यह ख़ाम-ख़्याली है। बिल्कुल सही बात कही है।

न किताबों से न कॉलिज से न ज़र से पैदा
दीन होता है बुज़ुर्गों की नज़र से पैदा

दीन किताब पढ़ लेने से नहीं आता, लफ़्ज़ों से नहीं आता, बल्कि बुज़ुर्गों की नज़र से और उनकी सोहबत से दीन आता है। बारी तआ़ला ने फ़रमाया कि तक़्वा इख़्तियार करने का तरीक़ा यह कि सच्चे लोगों की और अल्लाह वालों की सोहबत इख़्तियार करो तो इस सोहबत के नतीजे में अल्लाह तआ़ला तुम्हें भी मुत्तक़ी बना देंगे। तुम्हारे अन्दर भी वह रंग पैदा हो जायेगा।

सच्चे और मुत्तक़ी लोग कहाँ से लायें?

अब सवाल यह पैदा होता है कि सच्चे लोग कहाँ से लायें? हर शख़्स दावा करता है कि मैं भी सच्चा हूँ। मैं भी सादिक़ हूँ और इस फ़ेहरिस्त में दाख़िल हूँ। बल्कि लोग यह कहा करते हैं कि साहिब! आजकल तो धोखेबाज़ी का दौर है, हर शख़्स लम्बा कुर्ता पहन कर और पगड़ी सिर पर लगाकर और दाढ़ी लम्बी करके कहता है कि मैं भी सादिक़ीन (सच्चों) में दाख़िल हूँ। अ़ल्लामा इक़बाल ने कहा था।

ख़ुदावन्दा ये तेरे सादा-दिल बन्दे किधर जायें
कि दुर्वेशी भी अ़य्यारी है सुल्तानी भी अ़य्यारी

यह हालत नज़र आती है तो अब कहाँ से लायें वे सादिक़ीन (सच्चे लोग) जिनकी सोहबत इनसान को कीमिया बना देती है। वे कहाँ से लायें अल्लाह वाले जिनकी एक नज़र से इनसानों की ज़िन्दगियाँ बदल जाती हैं। वे जुनैद व शिब्ली जैसे बड़े-बड़े औलिया-ए-किराम इस दौर में कहाँ से लेकर आयें। किस तरह उनकी सोहबत हासिल करें। आजकल तो अ़य्यारी और मक्कारी का दौर है।

हर चीज़ में मिलावट है

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि इसका एक बड़ा उम्दा जवाब दिया करते थे। वह फ़रमाया करते थे कि मियाँ! लोग यह कहते हैं कि आजकल सादिक़ीन

(सच्चे और नेक लोग) कहाँ तलाश करें? हर जगह अय्यारी और मक्कारी का दौर है। तो बात दर असल यह है कि यह ज़माना है मिलावट का, हर चीज़ में मिलावट है। घी में मिलावट, चीनी में मिलावट, आटे में मिलावट, दुनिया की हर चीज़ में मिलावट, यहाँ तक कि कहते हैं कि ज़हर में भी मिलावट।

किसी ने लतीफ़ा सुनाया कि एक शख़्स ने हर चीज़ में मिलावट देखी कि कोई चीज़ ख़ालिस नहीं मिलती, आजिज़ आ गया। उसने सोचा कि मैं ख़ुदकुशी कर लूँ। इस दुनिया में ज़िन्दा रहना बेकार है। जहाँ पर कोई चीज़ ख़ालिस नहीं मिलती, न आटा ख़ालिस मिले, न चीनी ख़ालिस मिले, न घी ख़ालिस मिले, कुछ भी ख़ालिस नहीं। तो उसने सोचा कि ख़ुदकुशी कर लेनी चाहिए और इस दुनिया से चले जाना चाहिए। चुनाँचे वह बाज़ार से ज़हर ख़रीद कर लाया और वह ज़हर खा लिया। अब बैठा है इन्तिज़ार में कि अब मौत आये और तब मौत आये। लेकिन मौत है कि आती ही नहीं। मालूम हुआ कि ज़हर भी ख़ालिस नहीं था। तो दुनिया की कोई चीज़ ख़ालिस नहीं, हर चीज़ में मिलावट है।

हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि दुनिया की हर चीज़ में मिलावट है। तो भाई आटे में भी मिलावट है और आटा भी ख़ालिस नहीं मिलता, लेकिन यह बताओ कि अगर आटा ख़ालिस नहीं मिलता तो किसी ने आटा खाना छोड़ दिया? कि साहिब! आटा तो अब ख़ालिस नहीं मिलता, लिहाज़ा अब आटा नहीं खायेंगे, अब तो भुस खाया करेंगे। या घी अगर ख़ालिस नहीं मिलता तो किसी ने घी खाना छोड़ दिया कि साहिब! घी तो अब ख़ालिस नहीं मिलता, लिहाज़ा अब मिट्टी का तेल इस्तेमाल करेंगे। किसी ने भी बावजूद इस मिलावट के दौर के न आटा खाना छोड़ा, न चीनी खानी छोड़ी, न घी खाना छोड़ा, बल्कि तलाश करता है कि घी कौनसी दुकान पर अच्छा मिलता है और कौनसी बस्ती में अच्छा मिलता है। आदमी

भेजकर वहाँ से मंगवाओ। मिठाई कौनसी दुकान वाला अच्छी बनाता है, आटा किस जगह से अच्छा मिलता है, वहाँ से जाकर तलाश करके लायेगा। उसी को हासिल करेगा, उसी को इस्तेमाल करेगा।

तो फ़रमाया कि बेशक आटा घी चीनी कुछ ख़ालिस नहीं मिलती, लेकिन तलाश करने वाले को आज भी मिल जाती है। इसी तरह मौलवी भी ख़ालिस नहीं मिलता लेकिन तलाश करने वाले को आज भी मिल जाता है। अगर कोई अल्लाह का बन्दा तलाश करना चाहे, तलब करना चाहे तो उसको आज के दौर में भी सादिक़ीन (नेक लोंग) मिल जायेंगे। यह कहना बिल्कुल शैतान का धोखा है कि आज के दौर में सादिक़ीन ख़त्म हो गये। अरे जब अल्लाह तआ़ला फ़रमा रहे हैं कि तुम सादिक़ीन के साथी बन जाओ, यह हुक्म क्या सिर्फ़ सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम के दौर के साथ ख़ास था कि वे सहाबा किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम इस पर अ़मल कर सकें। बीसवीं सदी में आने वाले इस पर अ़मल नहीं कर सकते? ज़ाहिर है कि क़ुरआन करीम के हर हुक्म पर क़ियामत तक; जब तक मुसलमान बाक़ी हैं अ़मल करना मुम्किन रहेगा, तो इसके मायने ख़ुद-ब-ख़ुद निकाल लो कि सादिक़ीन इस वक़्त भी हैं। हाँ! तलाश करने की बात है। यह नहीं कि साहिब मिलता ही नहीं, लिहाज़ा बैठे हैं, तलाश करोगे और तलब पैदा करोगे तो मिल जायेगा।

जैसी रूह वैसे फ़रिश्ते

हज़रत वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि मियाँ! आजकल लोगों का हाल यह है कि ख़ुद चाहे किसी हालत में हों। गुनाह में, मुसीबत में, बड़े-बड़े गुनाह में, बुराई और बदकारी में मुब्तला हूँ, लेकिन अपने लिये सादिक़ीन तलाश करेंगे तो मेयार सामने रखेंगे जुनैद बग़दादी रह० का, शैख़ अ़ब्दुल् क़ादिर जीलानी रह० का और बायज़ीद बुस्तामी रह० का, और बड़े-बड़े औलिया-ए-किराम का,

जिनके नाम सुन रखे हैं, कि साहिब! हमें तो ऐसा सादिक़ चाहिये जैसा कि जुनैद बग़दादी रह० थे या शैख़ अ़ब्दुल् क़ादिर जीलानी थे। हालाँकि उसूल यह है कि जैसी रूह वैसे फ़रिश्ते। जैसे तुम हो वैसे ही तुम्हारे मुस्लेह (सुधारक) होंगे। तुम जिस मेयार के हो तुम्हारे लिये यही लोग काफ़ी हो सकते हैं। जुनैद व शिब्ली के मेयार के न सही लेकिन तुम्हारे लिये ये भी काफ़ी हैं।

मस्जिद के मुअ़ज़्ज़िन की सोहबत इख़्तियार कर लो

बल्कि मेरे वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते थे कि मैं तो क़सम खाकर कहता हूँ कि अगर कोई शख़्स अल्लाह तआ़ला की तलब लेकर अपनी मस्जिद के अनपढ़ मुअ़ज़्ज़िन की सोहबत में जाकर बैठेगा तो उसकी सोहबत से भी फ़ायदा पहुँचेगा। इस वास्ते कि वह मुअ़ज़्ज़िन कम से कम पाँच वक़्त अल्लाह का नाम बुलन्द करता है, उसकी आवाज़ फ़िज़ाओं में फैलती है, वह अल्लाह के कलिमे को बुलन्द करता है, उसकी सोहबत में जाकर बैठो, तुम्हें उससे भी फ़ायदा पहुँचेगा। यही शैतान का धोखा है कि साहिब! हमें तो इस मेयार का बुज़ुर्ग और इस मेयार का मुस्लेह चाहिये। यह इनसान को धोखा देने की बात है। हक़ीक़त में तुम्हारी अपनी इस्लाह (सुधार) के वास्ते तुम्हारे मेयार के और तुम्हारी सतह के मुस्लेह (सुधारक और सही राह बताने वाले) आज भी मौजूद हैं।

भाई बात लम्बी हो गई। मैं अ़र्ज़ यह करना चाह रहा था कि दीन हासिल करने का और इसकी समझ हासिल करने का और इस पर अ़मल करने का तरीक़ा मालूम करने का कोई रास्ता आजकल के हालात में इसके सिवा नहीं है कि किसी अल्लाह वाले को अपना दामन पकड़ा दे, अल्लाह तआ़ला किसी अल्लाह वाले की सोहबत अ़ता फ़रमा दे तो उसके नतीजे में अल्लाह तआ़ला दीन अ़ता फ़रमा देते हैं।

मैं आप हज़रात को मुबारकबाद पेश करता हूँ (बहुत सी जगहें

ऐसी हैं कि वहाँ कभी जाकर यह बात कहने की नौबत आती है तो लोग पूछते हैं कि साहिब! हम कहाँ जायें? तो बतलाने के लिये ज़रा दुश्वारी होती है) लेकिन अल्लाह तआ़ला का इतना बड़ा करम है, इतना बड़ा करम है कि आप उसका शुक्र अदा कर ही नहीं सकते, कि इस बस्ती में जो एक दूर-दराज़ की बस्ती है, किसी के मुँह पर कोई बात कहना अच्छा नहीं होता, मगर हमारा दीन वह है जो बे-तकल्लुफ़ है तो बे-तकल्लुफ़ी की वजह से अ़र्ज़ करता हूँ कि अल्लाह तआ़ला ने इस बस्ती के अन्दर आप और हम पर यह बड़ा फ़ज़्ल फ़रमाया है कि हज़रत मौलाना मुफ़्ती अ़ब्दुश्-शकूर साहिब तिर्मिज़ी दामत बरकातुहुम को इस बस्ती के अन्दर भेज दिया, और इन्हीं का यह नूर ज़हूर है जो आप अपनी आँखों से देख रहे हैं।

यह मदरसा, यह बड़ा इज्तिमा, यह मुसलमानों के अन्दर दीनी जज़्बात, यह ज़ौक़ व शौक़ और यह जोश-व-ख़रोश, यह सब कुछ एक अल्लाह वाले के दिल की धड़कनों से निकलने वाली आहों और दुआओं का नतीजा है। अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से यह नेमत मयस्सर है, और हमारी क़ौम का हाल यह है कि जब तक नेमत मयस्सर रहती है उसकी क़द्र नहीं पहचानते, जब चली जाती है तो क़ौम उसको सिर पर बिठाने के लिये तैयार, उसका उर्स मनाने के लिये तैयार, उसके मज़ार पर चादरें चढ़ाने के लिये तैयार, उसको आसमान पर उठाने के लिये तैयार, लेकिन जब तक वह नेमत मौजूद है उसकी क़द्र नहीं पहचानेंगे। क़द्र नहीं मानेंगे। हमेशा उसमें ऐब ही नज़र आते रहेंगे। तन्क़ीदें ही करते रहेंगे।

लिहाज़ा जहाँ कोई अल्लाह वाला बैठ गया हो, उसको बहुत ही ग़नीमत समझ कर उससे लाभ उठाने की कोशिश कीजिये। वाक़िआ यह है कि अल्लाह तआ़ला ने हज़रत मुफ़्ती साहिब दामत् बरकातुहुम को वह मुक़ाम बख़्शा है कि लोग सफ़र करके आयें और आकर इनसे फ़ायदा उठायें। अल्लाह तआ़ला ने इस बस्ती के अन्दर आपको यह

अज़ीम नेमत अता फ़रमाई है। मैं दूर से आने वाला, अव्वल तो कुछ आता-जाता नहीं, कुछ अहलियत नहीं, कोई सलाहियत नहीं, मैं आप से क्या अर्ज़ करूँ। लेकिन अगर इतनी बात आप हज़रात के ज़ेहन में बैठ जाये और इस नेमत की क़द्र पहचानने की कोशिश कर लें और इससे लाभ उठाने की कोशिश कर लें तो मैं समझता हूँ कि बहुत बड़े बड़े जलसों और तक़रीरों का ख़ुलासा और उसका फ़ायदा हासिल हो गया। यूँ तो जलसे और तक़रीरें और कहना-सुनना तो बहुत होता रहता है और आम तौर पर लोग कहते भी हैं, सुनते भी हैं, लेकिन कम से कम अगर दिल में यह जज़्बा और लगन और यह शौक़ पैदा हो जाये कि किसी अल्लाह वाले की सोहबत से फ़ायदा उठाना है तो मैं समझता हूँ कि इस मज्लिस का फ़ायदा हासिल हो गया।

अल्लाह तबारक व तआला मुझे भी और आपको भी दीन की सही समझ अता फ़रमाये। सादिक़ीन (नेक लोगों) की सोहबत अता फ़रमाये। उनकी मुहब्बत और उनकी ख़िदमत के ज़रिये दीन का सही मिज़ाज हमारे दिलों के अन्दर पैदा फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۝

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

मुसलमानों पर हमले की सूरत में

हमारा कर्तव्य

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ!

अमेरिका का अफ़ग़ानिस्तान पर हमला

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! जैसा कि आप हज़रात मौजूदा प्रस्तिथि से वाक़िफ़ हैं और इस वक़्त किसी दूसरे विषय पर बात करने को दिल नहीं चाहता। इस वक़्त दुनिया-ए-कुफ़्र की तरफ़ से ख़ास तौर पर अमेरिका की तरफ़ से तकब्बुर का आला-तरीन प्रदर्शन हो रहा है। उसने शायद अपने बारे में यह समझ लिया है कि उसके पास खुदाई आ गई है और वह ऐसे घमण्डी बयानात और ऐसी तकब्बुर भरी कार्रवाईयाँ इस धड़ल्ले के साथ कर रहा है कि गोया पूरी दुनिया की खुदाई उसके क़ब्ज़े में आ गयी है।

हाथी और चींवटी का मुक़ाबला

लेकिन अल्लाह तआ़ला की कुदरत के करिश्मे भी अ़जीब व ग़रीब

हैं कि जो मुल्क इस क़द्र तकब्बुर के अन्दर डूबा हुआ है और लोग उसके आगे इस क़द्र डरे सहमे हुए हैं कि पूरी दुनिया में कोई भी हक़ बात कहने की जुर्रत नहीं कर रहा है, और दुनिया का सबसे ताक़तवर मुल्क है, वह दुनिया के अति कमज़ोर मुल्क पर हमलावर है। वह एक ऐसे मुल्क पर हमलावर है कि उससे ज़्यादा कमज़ोर और उससे ज़्यादा संसाधनों से ख़ाली मुल्क कोई और नहीं। और जिसको दुनिया, मुल्क और हुकूमत तस्लीम करने के लिये भी तैयार नहीं। गोया कि दोनों के दरमियान हाथी और चींवटी का भी मुक़ाबला नहीं, जो इस वक़्त उन दोनों के दरमियान हो रहा है।

अल्लाह की कुदरत का करिश्मा

लेकिन अल्लाह तआला की कुदरत का करिश्मा है कि आज एक हफ़्ते से उस सबसे ताक़तवर मुल्क की तरफ़ से बमों और मिज़ाइलों की बारिश हो रही है जिसको सुपर पावर कहा जाता है, और जो खुदाई का दावा कर रहा है। यह बारिश उस मुल्क पर हो रही है जो दुनिया का बहुत कमज़ोर मुल्क है। हर रात और हर सुबह बमों और मिज़ाइलों के ज़रिये क़ियामत तोड़ी जा रही है और सारी ताक़त का ज़ोर उस पर ख़र्च किया जा रहा है। उसके तकब्बुर का तो यह आलम था कि उसके ख़्याल में एक दो दिन के अन्दर मामला निमटा देंगे, लेकिन अल्लाह तआला अपनी कुदरत के करिश्मे दिखा रहा है कि एक हफ़्ते की लगातार बम्बारी के बावजूद अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम से कोई ऐसा बड़ा नुक़सान जो उनके हक़ में घातक हो, वह अभी तक नहीं पहुँचा सके और बार-बार के इस ऐलान के बाद कि अब हम ज़मीन से हमला करेंगे, लेकिन अभी तक ज़मीन से हमला करने की जुर्रत नहीं हो रही है।

अल्लाह तआला का फ़ज़्ल व करम देखिये

मेरे भाई हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद रफ़ी उस्मानी साहिब

दामत बरकातुहुम के पास दो रोज़ पहले काबुल से एक साहिब का फ़ोन आया। भाई साहिब ने उनसे पूछा कि आप काबुल में रह रहे हैं और रोज़ाना काबुल पर बम्बारी हो रही है, रोज़ाना मिज़ाइलों की बारिश हो रही है तो वहाँ क्या हाल है? जवाब में उन्होंने कहा कि हाँ कुछ पटाख़े ज़रूर छूटे हैं और उससे बाज़ लोग ज़ख़्मी और बाज़ शहीद भी हुए हैं लेकिन अल्लाह का शुक्र है कि हमारी ताक़त अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से बरक़रार है।

ख़ुदाई अल्लाह तआ़ला की है

इन वाक़िआत के ज़रिये अल्लाह तआ़ला दुनिया को दिखा रहे हैं कि वह मुल्क जिसकी गर्दन तकब्बुर और ग़ुरूर की वजह से तनी हुई है, सीना खड़ा हुआ है, वह अपनी सारी ताक़तें और क्षमतायें ख़र्च करने के बावजूद और ऐड़ी-चोटी का ज़ोर लगाने के बावजूद अभी तक अपना मक़सद हासिल नहीं कर सका। अल्लाह तआ़ला दिखा रहे हैं कि ख़ुदाई तेरी नहीं है, ख़ुदाई अल्लाह तआ़ला की है।

अल्लाह तआ़ला की मदद दीन की मदद पर आयेगी

अल्लाह तआ़ला ने क़ुरआन करीम में यह क़ानून बयान फ़रमा दिया है:

اِنْ تَنْصُرُوا اللّٰهَ يَنْصُرْكُمْ (سورۂ محمد: آیت ۷)

अगर तुम अल्लाह तआ़ला के दीन की मदद करोगे तो अल्लाह तआ़ला तुम्हारी मदद करेगा।

लिहाज़ा अगर कहीं अल्लाह तआ़ला की मदद में कमी आ जाये या मदद ही न हो तो इसका मतलब यह है कि हमने अल्लाह तआ़ला के दीन की मदद नहीं की, इसलिये अल्लाह तआ़ला की मदद नहीं आ रही है। लेकिन जब अल्लाह तआ़ला के दीन की मदद करने के लिये मुसलमान हिम्मत करके उठ खड़े हों तो फिर अल्लाह तआ़ला की

तरफ़ से ज़रूर मदद आती है।

जिहाद एक अज़ीम रुक्न है

लिहाज़ा आज दीन के उस अज़ीम (बड़े और अहम) रुक्न के बारे में बयान करना है जिसको हमने एक लम्बी मुद्दत से भुला रखा है, वह है "जिहाद" का रुक्न। जिस तरह अल्लाह तआ़ला ने नमाज़, रोज़ा, हज, ज़कात हम पर फ़र्ज़ फ़रमाये हैं, उसी तरह एक अज़ीम फ़रीज़ा "जिहाद" का फ़रीज़ा है। यह वह फ़रीज़ा है कि हमारी तक़रीरों में, हमारे बयानों में, हमारी मज्लिसों में, लम्बे समय से इसका बयान छूटा हुआ है।

काफ़िर लोग सब मिलकर मुसलमानों को खाने के लिये आयेंगे

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से ख़िताब करते हुए इरशाद फ़रमाया था कि एक वक़्त ऐसा आयेगा कि तुम्हारे दुश्मन तुम्हें तबाह करने के लिये आपस में एक दूसरे को इस तरह दावत देंगे जिस तरह दस्तरख़्वान पर खाने के लिये दावत दी जाती है। वे दूसरों से कहेंगे कि आओ उन पर हमला करें, आओ उनको लूटें, आओ उनको खायें।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की यह बात सहाबा-ए-किराम की समझ में नहीं आई, क्योंकि उन्होंने तो खुली आँखों नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के मोजिज़े (चमत्कार) देखे थे और उन्होंने तो यह देखा था कि सिर्फ़ तीन सौ तेरह (३१३) निहत्थे मुसलमान एक हज़ार हथियार बन्द सूरमाओं पर ग़ालिब आ गये और अल्लाह तआ़ला ने उनको फ़तह व नुसरत से नवाज़ा। इसलिये उन्हें ताज्जुब होने लगा कि दुश्मन कैसे मुसलमानों पर ग़ालिब आ जायेंगे।

मुसलमान तिन्कों की तरह होंगे

इसलिये सहाबा-ए-किराम ने पूछा कि या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! क्या उस वक़्त मुसलमानों की तादाद कम होगी? जवाब में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि उस वक़्त मुसलमानों की तादाद बहुत ज़्यादा होगी लेकिन वे मुसलमान सैलाब में बहने वाले तिन्कों की तरह होंगे जो गिनती में तो बेशुमार होते हैं लेकिन उनकी अपनी ताक़त नहीं होती बल्कि वे सैलाब की रौ में बहते चले जाते हैं।

मुसलमानों की नाकामी के दो असबाब

एक दूसरी हदीस में है कि सहाबा-ए-किराम ने हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से पूछा कि मुसलमानों की ऐसी हालत क्यों होगी? तो जवाब में आँ-हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यह हालत इस वजह से होगी कि दुनिया की मुहब्बत तुम पर ग़ालिब आ जायेगी और तुम मौत से डरने लगोगे और अल्लाह के रास्ते में जिहाद को छोड़ दोगे।

इस हदीस में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तीन कारण बयान फ़रमाये। एक यह कि दुनिया की मुहब्बत ग़ालिब आ जायेगी, अपने माल की, अपने घर औलाद की और अपने घर-बार की मुहब्बतें ग़ालिब आ जायेंगी, और फिर उन मुहब्बतों की वजह से तुम मौत से डरने लगोगे कि कहीं मौत न आ जाये और इसी मौत के डर की वजह से अल्लाह तआ़ला के रास्ते में जिहाद को छोड़ दोगे। इसके नतीजे में मुसलमानों का यह हश्र हो जायेगा। अल्लाह तआ़ला हमारी मग़फ़िरत फ़रमाये। आमीन।

जिहाद को छोड़ने के गुनाह में मुब्तला हैं

एक लम्बे समय से हम लोगों ने अल्लाह के रास्ते में जिहाद को

छोड़ा हुआ है और उस अल्लाह के रास्ते में जिहाद को छोड़ने के गुनाह में मुब्तला हैं, उसके नतीजे में यह सूरतेहाल पैदा हुई जो हमारे सामने है। लेकिन अल्लाह तआ़ला के फ़ज़्ल व करम से कुछ अल्लाह के बन्दे जिहाद का काम लेकर उठे और उन्होंने यह काम शुरू किया। अब इस वक़्त इसका मौक़ा है कि दीन के इस अहम और बड़े रुक्न यानी 'जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह' (अल्लाह के रास्ते में जिहाद) के अन्दर हिस्सेदार बनने की हर मुसलमान सआ़दत (सौभाग्य) हासिल करे। उसमें हिस्सेदार बनने का क्या तरीक़ा है? इसको कुछ तफ़सील से समझ लेना चाहिये।

जिहाद के फ़र्ज़ होने की तफ़सील

शरीअ़त का हुक्म यह है कि अगर किसी मुसलमान मुल्क पर कोई ग़ैर-मुस्लिम ताक़त हमला कर दे तो उस मुल्क के तमाम रहने वालों पर जिहाद फ़र्ज़ हो जाता है। लिहाज़ा अगर वहाँ का हाकिम जिहाद के लिये बुलाये तो सब पर जिहाद फ़र्ज़ होगा। और अगर उस मुल्क के लोग दुश्मन के हमले का मुक़ाबला करने की ताक़त न रखते हों तो बराबर वाले मुल्क के मुसलमानों पर जिहाद फ़र्ज़ हो जाता है, अगर वे भी मुक़ाबले की ताक़त न रखते हों तो फिर उनके बराबर वाले मुल्क के मुसलमानों पर जिहाद फ़र्ज़ हो जाता है। इसी तरह पूरी मुस्लिम दुनिया की तरफ़ यह फ़रीज़ा मुन्तक़िल होता चला जाता है।

लिहाज़ा शरीअ़त के उपरोक्त हुक्म की रोशनी में अगर देखा जाये कि जब अफ़ग़ानिस्तान पर अमेरिका ने हमला कर दिया है तो अफ़ग़ानिस्तान के मुसलमानों पर तो जिहाद फ़र्ज़ हो चुका है, लेकिन अगर वे मुक़ाबले के लिये काफ़ी न हों तो अफ़ग़ानिस्तान से मिले हुए हमारे मुल्क पाकिस्तान वालों पर जिहाद फ़र्ज़ हो जायेगा।

जिहाद की विभिन्न सूरतें

"जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" के मायने हैं "अल्लाह के रास्ते में

कोशिश करना"। अलबत्ता इस कोशिश की विभिन्न और अनेक सूरतें हैं। एक सूरत यह है कि अप्रत्यक्ष रूप से लड़ाई में शामिल हुआ जाये। इस तरीक़े को "क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह" कहा जाता है। दूसरी सूरत यह है कि "क़िताल फ़ी सबीलिल्लाह" करने वालों को मदद पहुँचाई जाये। यह मदद पहुँचाना भी "जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" में दाख़िल है।

आज की जंग में अगर पाकिस्तान के सारे लोग अफ़ग़ानिस्तान की सरहद पर पहुँच जायें और अपने आपको लड़ाई के लिये पेश कर दें तो इससे उनको फ़ायदा पहुँचने के बजाये उलटी समस्सयायें पैदा हो जायेंगी, लिहाज़ा पाकिस्तान के रहने वालों पर जिहाद इस मायने में फ़र्ज़ है कि अफ़ग़ानिस्तानी भाईयों की मदद और सहायता करने का जो तरीक़ा जिसके इख़्तियार में है, उसके ज़िम्मे ज़रूरी और वाजिब है कि वह उस तरीक़े को इख़्तियार करे और उसके ज़रिये मदद पहुँचाये।

लिहाज़ा हर शख़्स जायज़ा ले कि मैं अपने अफ़ग़ानिस्तानी भाईयों की क्या मदद कर सकता हूँ। फिर जो हज़रात ट्रेनिंग याफ़्ता और तरबियत याफ़्ता हैं, वे अफ़ग़ानी भाईयों से सम्पर्क करें। अगर उनको ज़रूरत हो तो वे जाकर बाक़ायदा लड़ाई में शरीक हों।

माली मदद के ज़रिये जिहाद

और जो हज़रात ट्रेनिंग याफ़्ता नहीं हैं, वे दूसरे तरीक़ों से मदद करें। इस वक़्त अफ़ग़ान भाईयों को पैसों की भी ज़रूरत है, उनको चीज़ों और साज़ो-सामान की भी ज़रूरत है। उनको हथियारों की भी ज़रूरत है, उनको दवाओं की भी ज़रूरत है, उनको मैडिकल इम्दाद की भी ज़रूरत है, लिहाज़ा जो शख़्स पैसों के ज़रिये उनकी मदद कर सकता है, वह पैसों के ज़रिये उनकी मदद करे।

फ़न्नी मदद के ज़रिये जिहाद

अगर कोई डाक्टर है और वहाँ पर इलाज के लिये डाक्टरों की ज़रूरत है तो वह अपनी सेवाएँ पेश करे। अगर किसी ने प्रारंभिक

चिकित्सा सहायता की ट्रेनिंग ले रखी है तो वह अपनी सेवाएँ पेश करे और ये सब सेवाएँ संगठित तरीक़े पर पेश करें।

अगर कोई शख़्स ट्रेनिंग याफ़्ता है और वह डायरेक्ट लड़ाई में शिर्कत करना चाहता है, लेकिन वह अपने बीवी बच्चों की देखभाल की वजह से नहीं जा सकता है तो दूसरा शख़्स उसके बीवी बच्चों की देखभाल का ज़िम्मा लेकर उसको जिहाद के लिये रवाना करे।

हदीस शरीफ़ में हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स जिहाद पर जाने वालों के लिये सामान तैयार करे वह मुजाहिद है और जो शख़्स जिहाद पर जाने वाले के घर की देखभाल करे और उनकी किफ़ालत करे तो वह भी मुजाहिद है।

क़लम के ज़रिये जिहाद

अगर कोई शख़्स उनकी मदद के लिये क़लम से काम ले सकता है तो वह अपने क़लम को हरकत में लाये। अगर कोई अपनी ज़बान से काम ले सकता है तो वह ज़बान को हरकत में लाये।

हराम कामों से बचें

मुसलमान हुकूमतें जो ग़लत रास्ते पर चल रही हैं, और अफ़सोस है कि हमारी हुकूमत ने भी ग़लत फ़ैसला कर लिया है, तो अब हुकूमतों से यह मुतालबा करें कि वे अफ़ग़ान भाईयों की हिमायत करें। यह भी जिहाद का एक हिस्सा है। अलबत्ता यह ज़रूरी है कि इस आंदोलन में शरई अहकाम की रियायत रखी जाये। इसमें कोई काम शरीअ़त के ख़िलाफ़ न हो। तोड़-फोड़ करना, आग लगाना, संपत्ति को नुक़सान पहुँचाना, ये सब चीज़ें हराम हैं। हराम काम करके आदमी जिहाद नहीं कर सकता। लिहाज़ा ख़ुद भी ऐसे कामों से परहेज़ करें और अपने मिलने-जुलने वालों को भी मुतवज्जह करें और अगर कोई करना चाहे तो उसको इस अ़मल से रोकें। ये हराम काम हैं, हराम

काम करने पर अल्लाह तआला की मदद नहीं आती। दूसरी तरफ़ ऐसे कामों से तहरीक को भी नुक़सान पहुँच सकता है, इन कामों से बचते हुए अपने जज़्बात के इज़हार के जो तरीक़े हैं, उनके अन्दर हिस्सा लें, यह भी जिहाद का एक हिस्सा है।

लिहाज़ा हर शख़्स अपना जायज़ा ले कि मैं अपने भाईयों की क्या मदद कर सकता हूँ और किस तरह कर सकता हूँ। इस तरह मदद की जाये।

दुश्मन के बजाये अल्लाह से डरो

बहरहाल! ऐसे मौक़े पर जैसे हम इस वक़्त मुब्तला हैं और सारी उम्मते मुस्लिमा परेशानी के अन्दर मुब्तला है, इस मौक़े पर एक तो क़ुरआन करीम की यह आयत याद रखनी चाहियेः

إِنَّمَا ذٰلِكُمُ الشَّيْطٰنُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَآءَهٗ فَلَا تَخَافُوْهُمْ وَخَافُوْنِ إِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ○

(سورۃ آل عمران: آیت ۱۷۵)

बेशक यह शैतान है तो (तुम्हें मरऊब करने के लिये) अपने दोस्तों (यानी हम-मज़हब कुफ़्फ़ार) से डराना चाहता है, लेकिन अगर तुम मोमिन हो तो उनसे डरने के बजाये मुझसे डरो।

काश! आज की मुस्लिम हुकूमतें क़ुरआन करीम के इस हुक्म पर अ़मल कर लेतीं। आज उन्होंने यह समझ लिया है कि ख़ुदाई अमेरिका के हाथों में आ गई है। इसके नतीजे में हर शख़्स हक़ बात कहने और हक़ पर डट जाने से डर रहा है। अगर आज मुसलमान इस हुक्म पर अ़मल कर लेते तो उम्मते मुस्लिमा का मसला हल हो चुका होता।

दुनिया के साधन मुसलमानों के पास हैं

अल्लाह तआला ने पूरी उम्मते मुस्लिमा को मराकश से लेकर इन्डोनेशिया तक ऐसी जन्ज़ीर में पिरो दिया है कि इस्लामी मुल्कों का

एक तार बना हुआ है। और अल्लाह तआ़ला ने दुनिया के बेहतरीन साधन उनको मुहैया फ़रमाये हैं। उनके पास वह सरमाया है कि जिस पर दुनिया रश्क (ईर्ष्या) करती है। उनके पास तेल है जिसके बारे में कहा जाता है कि बहता हुआ सोना है। यहाँ तक कि यह बात मशहूर हो गयी है कि जहाँ मुसलमान होते हैं वहीं पर तेल होता है। इसके अ़लावा बेहतरीन इनसानी साधन अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को अ़ता फ़रमाये हैं।

आज मुसलमान सारी दुनिया के बीचों-बीच आबाद हैं। उनके पास जंगी हिक्मते-अ़मली के एतिबार से वे स्थान हैं कि अगर उनका सही इस्तेमाल करें तो सारी दुनिया की बोलती बन्द कर सकते हैं। उनके पास "आबनाये बासफ़ोरस" है, उनके पास "नहरे सूईज़" है।

मुसलमानों के रुपये से "अमेरिका" अमेरिका है

और इन्हीं मुसलमानों का रुपया है जिसने अमेरिका को 'अमेरिका' बनाया हुआ है। मुसलमानों के रुपये अमेरिका के बैंकों में रखे हुए हैं। आज अगर मुसलमान वह रुपया वहाँ से निकाल लें तो उनकी आर्थिक स्तिथि बिगड़ जाये।

अल्लाह तआ़ला पर नज़र न होने का नतीजा

ये सारी ताक़तें अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को अ़ता फ़रमाई हैं, लेकिन ये सारी ताक़तें इस वजह से बेअसर हैं कि अल्लाह तआ़ला की ज़ात पर भरोसा नहीं। अल्लाह तआ़ला की तरफ़ निगाह नहीं। इसकी वजह से हम पर ऐसी हुकूमतें मुसल्लत हैं जो अमेरिका के कारिन्दे हैं, उसके अहलकार हैं, उसके पिट्ठू हैं। जो सारी मुस्लिम दुनिया पर मुसल्लत हैं। उसके नतीजे में ये दिन देखने पड़ रहे हैं। अगर अल्लाह तआ़ला से ख़ौफ़ होता और दुश्मन को ख़ुदा समझने का तसव्वुर दिल में न होता तो आज ये दिन देखने न पड़ते।

आम मुसलमान तीन काम करें

लेकिन इन चीज़ों के बावजूद अगर आम मुसलमान एक तो यह तरीक़ा अपना लें कि अल्लाह से डरें और दुश्मन से न डरें और अल्लाह तआला पर भरोसा रखें और सीधे रास्ते पर चलें तो इन्शा-अल्लाह! अल्लाह तआला की तरफ़ से मदद आयेगी और ज़रूर आयेगी।

दूसरे यह कि हर शख़्स यह जायज़ा ले कि मैं अपने अफ़ग़ान भाईयों की क्या मदद कर सकता हूँ और किस शक्ल में कर सकता हूँ। उस शक्ल में मदद करे और तीसरा काम यह कि:

حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكِيْلُ

हस्बुनल्लाहु व नेअ़्मल् वकील

का कसरत से (यानी ख़ूब अधिकता के साथ) विर्द करे और अल्लाह तआला पर भरोसे का इज़हार करे। अल्लाह तआला की रहमत से उम्मीद है कि अब इस घमण्डी के दिन गिने जा चुके हैं। अल्लाह तआला की रहमत पर भरोसा करके कहता हूँ कि उसका गुरूर टूटकर रहेगा और उसका गुरूर ख़ाक में मिलेगा। अल्लाह पाक उसका सिर नीचा करके दिखायेंगे।

अल्लाह तआला से रुजू करें

और यह मदद तो हर वक़्त हर मुसलमान कर ही सकता है कि अल्लाह तआला की तरफ़ रुजू करे और अल्लाह तआला से रो-रोकर और मचल-मचल कर दुआयें माँगे कि या अल्लाह! इस घमण्डी के गुरूर का अन्जाम हमें अपनी आँखो से दिखा दीजिये। अल्लाह तआला ने एक सुपर पावर का अन्जाम इन गुनाहगार आँखों को दिखा दिया और उसके ज़रिये मुसलमानों के दिलों को ठन्डा कर दिया, अब इस घमण्डी (अमेरिका) ने इस ज़मीन पर ख़ुदाई का दावा किया हुआ है,

अल्लाह तआला इसका अन्जाम भी मुसलमानों को अपनी आँखों से दिखाये। चलते फिरते अल्लाह से माँगें।

दुआ और अल्लाह के ज़िक्र में मशगूल हो जाओ

एक हदीस में नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

لَا تَتَمَنَّوْا لِقَاءَ الْعَدُوِّ وَ اسْئَلُوا اللّٰهَ الْعَافِيَةَ فَإِذَا لَقِيتُمْ فَاثْبُتُوا

यानी अपनी तरफ़ से दुश्मन से मुक़ाबले की तमन्ना मत करो और अल्लाह तआला से आफ़ियत माँगो। लेकिन जब दुश्मन से मुक़ाबला हो जाये तो साबित-क़दमी से (यानी जमकर) मुक़ाबला करो। और क़ुरआन करीम ने इसके साथ यह भी फ़रमाया किः

وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيرًا

अल्लाह तआला को कसरत से याद करते रहो।

अल्लाह के रास्ते के एक मुजाहिद का काम यह है कि वह अल्लाह तआला के रास्ते में जिहाद भी करता है और साथ-साथ अल्लाह तआला से हर वक़्त अपना राब्ता (संपर्क) भी क़ायम रखता है। उसकी ज़बान पर अल्लाह तआला का ज़िक्र होता है और अल्लाह तआला से दुआयें होती हैं। इसलिये अल्लाह तआला से दुआयें करो, चलते-फिरते यह दुआ करते रहो कि अल्लाह तआला उम्मते मुस्लिमा की मदद फ़रमाये और उसके दुश्मनों को तबाह व बरबाद फ़रमाये और उनके ग़ुरूर को ख़ाक में मिलाये, आमीन।

और अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से और अपनी रहमत से हमें वह काम करने की तौफ़ीक़ दे जो हमारे ज़िम्मे फ़र्ज़ है। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَا اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ ٥

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

ख़त्मे बुख़ारी शरीफ़

बुख़ारी शरीफ़ का आख़िरी सबक़ 1420 हिजरी

जामिया दारुल उलूम कराची

(इबारत द्वारा तालिब-इल्म मुहम्मद अज़हर)

الحمد لله رب العلمين، والصلاة والسلام على نبيه الكريم، وعلى آله وأصحابه والائمة المحدثين. أما بعد:

باب قول الله تعالى: ﴿وَنَضَعُ الْمَوَازِيْنَ الْقِسْطَ لِيَوْمِ الْقِيٰمَةِ﴾ وأن أعمال بني آدم وقولهم يوزن، وقال مجاهد: القسطاس العدل بالرومية، ويقال: القسط مصدر المقسط وهو العادل، وأما القاسط فهو الجائر.

فضيلة الشيخ القاضي المفتي محمد تقي العثماني حفظكم الله وأكرمكم في الدارين، حدثكم والدكم فضيلة الشيخ فقيه الملة المفتي محمد شفيع رحمه الله تعالى عن فضيلة الشيخ الإمام أنورشاه كشميرى عن الشيخ شيخ الهند محمود الحسن رحمه الله تعالى.

ح. وحدثكم فضيلة الشيخ المفتي رشيد أحمد حفظه الله تعالى، عن الشيخ حسين أحمد المدني، عن شيخ الهند الشيخ محمودالحسن العثماني، عن الشيخين الجليلين الشيخ العلامة محمد قاسم النانوتوي والعلامة رشيد أحمد الكنكوهي، وهما يرويانه عن العارف بالله الشيخ عبدالغني المجددي،

عن مولانا الإمام الحجة الشيخ محمد إسحاق الدهلوى، عن الشاه عبدالعزيز الدهلوى، عن العارف بالله الشيخ ولى الله أحمد بن عبدالرحيم النقشبندى، قال: أخبرنا الشيخ أبوطاهر محمد بن إبراهيم الكردى، قال: أخبرنا والدى الشيخ إبراهيم الكُردى.

قال: قرأت على الشيخ أحمد القشاشى، قال: أخبرنا الشيخ أحمد بن عبدالقدوس النشاوى، قال: اخبرنا الشيخ محمد بن احمد الرملى، عن الشيخ زكريا بن محمد أبى يحيٰى الأنصارى، قال: قرأت على الشيخ الحافظ الحجة أحمد بن على بن حجر العسقلانى، عن الشيخ ابراهيم بن احمد التنوخى، عن الشيخ احمدبن ابى طالب، عن الشيخ السراج الحسين بن المبارك، عن الشيخ عبدالأول بن عيسى الهروى، عن الشيخ عبدالرحمن بن مظفر الداؤدى، عن الشيخ عبدالله بن أحمد السرخسى، عن الشيخ أبى عبدالله محمد بن يوسف الفربرى، عن الإمام الجليل الحافظ الحجة أميرالمؤمنين فى الحديث أبى عبدالله محمد بن إسماعيل بن إبراهيم بن المغيرة بن بردزبة الجعفى البخارى رحمهم الله تعالٰى ومتعنا بفيوضهم، آمين.

قال: حدثنا أحمد بن اشكاب، قال: حدثنا محمد بن فضيل، عن عمارة بن القعقاع، عن أبى زرعة، عن أبى هريرة رضى الله تعالٰى عنه وعنهم أجمعين قال: قال النبى صلى الله عليه وسلم:

كلمتان حبيبتان إلى الرحمن خفيفتان على اللسان ثقيلتان فى الميزان سبحان الله وبحمده سبحان الله العظيم.

तक़रीर

मौलाना मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

الحمد لله رب العلمين، والصلاة والسلام على سيدنا ومولانا محمد خاتم النبيين، وعلى آله وأصحابه أجمعين، على كل من تبعهم باحسان إلى يوم الدين، أمابعد:

तम्हीद

हज़रात उलमा-ए-किराम, मेरे अज़ीज़ तालिब-इल्म साथियो और सम्मानित मौजूद हज़रात! अल्लाह तआला का बहुत बड़ा इनाम और करम है कि आज दारुल-उलूम के तालीमी साल का आख़िरी सबक़ हो रहा है। और हमारे दीनी मदरसों की रिवायत के मुताबिक़ यह आख़िरी सबक़ सही बुख़ारी शरीफ़ के आख़िरी बाब और आख़िरी हदीस का सबक़ होता है। आज जबकि इस मुबारक मज्लिस का आयोजन हो रहा है, इसमें एक तरफ़ तो हमें अल्लाह तआला के सामने शुक्र अदा करने के लिये अलफ़ाज़ मिलने मुश्किल हैं जिसने अपने फ़ज़्ल व करम से इस तालीमी साल को तकमील तक पहुँचाया।

हज़रत मौलाना सहबान महमूद साहिब रह. की जुदाई

दूसरी तरफ़ इस एहसास से दिल व दिमाग़ मुतास्सिर है कि सही बुख़ारी शरीफ़ का यह आख़िरी सबक़ १३९४ हिजरी (मुताबिक़ १९७६ ई०) तक मेरे वालिद माजिद (मुफ़्ती-ए-आज़म पाकिस्तान) हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि दिया करते थे। फिर हज़रत वालिद माजिद साहिब की वफ़ात के बाद १३९६ हिजरी से

हमारे मख़दूम बुज़ुर्ग और उस्ताद शैखुल्-हदीस हज़रत मौलाना सहबान महमूद साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि इस ज़िम्मेदारी को उम्दा तरीक़े से निभाते रहे। गुज़िश्ता साल १४१६ हिजरी (मुताबिक़ १६६८ ई०) तक हम और आप उनके दर्स से फ़ैज़याब (लाभान्वित) होते रहे। आज वह भी हम में मौजूद नहीं हैं, और उनकी ग़ैर-मौजूदगी का एहसास इस मौक़े पर बहुत शिद्दत के साथ दिल व दिमाग़ पर छाया हुआ है।

अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाये, उनके फ़ुयूज़ को जारी व सारी फ़रमाये और हमें उनकी तालीमात और उनके नक़्शे क़दम पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

दुनिया का बहुत बड़ा सदमा

इस रू-ए-ज़मीन पर कोई सदमा और कोई ग़म उस ग़म और सदमे से ज़्यादा संगीन पेश नहीं आया जो हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम को नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के विसाल (वफ़ात) के वक़्त पेश आया। अगर दुनिया की कोई बड़ी से बड़ी क़ुरबानी और बड़ी से बड़ी कोशिश किसी इनसान के लिखे हुए वक़्त को टला सकती, तो सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सिर्फ़ एक साँस के बदले सहाबा-ए-किराम हज़ारों लाखों ज़िन्दगियाँ निछावर करने के लिये तैयार थे। लेकिन यह अल्लाह जल्ल शानुहू का बनाया हुआ कारख़ाना-ए-हुकूमत है जिसमें किसी को चूँ व चरा की मजाल नहीं। अल्लाह तबारक व तआ़ला के हर फ़ैसले पर राज़ी होना ही एक मोमिन का काम है। सदमा और ग़म एक तबई और फ़ितरी बात है, बल्कि जाने वाले का हक़ भी है, लेकिन सदमे और ग़म में अल्लाह तआ़ला की तक़दीर और उसके फ़ैसले पर कोई एतिराज़ किसी मोमिन के लिये मुम्किन नहीं। उसके फ़ैसले के आगे सिर झुका देना है। और "इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजिऊ़न" के

यही मायने हैं।

आज इस इज्तिमा में उलेमा, औलिया, सुलहा, जमा हैं, मैं उनसे गुज़ारिश करूँगा कि वे आज के इज्तिमा में ख़ास तौर पर हज़रत मौलाना रहमतुल्लाहि अ़लैहि की मग़फ़िरत के लिये और उनके दर्जों की बुलन्दी के लिये और घर वालों और मुताल्लिकीन के सब्रे जमील के लिये और हम सब को उनके नक़्शे क़दम पर चलने के लिये ख़ास तौर पर दुआ़ फ़रमायें।

हदीस की किताबों के दर्स का तरीक़ा

हमारे दीनी मदरसों में हदीस शरीफ़ की किताबें इस तरह पढ़ाई जाती हैं कि तालिब-इल्म (छात्र, पढ़ने वाला) हदीस की इबारत पढ़ता है। उस्ताद उसको सुनकर उसकी तस्दीक़ और पुष्टि करता है। और फिर हदीस के मायने और मतलब और उससे संबन्धित मसाइल को तफ़सील के साथ बयान करता है।

यह तरीक़ा-ए-कार जो हमारे दीनी मदरसों में जारी है। अल्लाह तआ़ला इसको हमेशा क़ायम और दायम रखे, आमीन। आज हिन्द महाद्वीप में पाकिस्तान, हिन्दुस्तान और बंगलादेश के दीनी मदरसों के अ़लावा रू-ए-ज़मीन पर कहीं भी यह तरीक़ा-ए-कार अब बाक़ी नहीं रहा। हदीस की चार किताबें यानी बुख़ारी शरीफ़, मुस्लिम शरीफ़, तिर्मिज़ी शरीफ़ और अबू दाऊद शरीफ़। ये चारों किताबें अव्वल से लेकर आख़िर तक तालिब-इल्म उस्ताद के सामने बैठकर पढ़ते हैं। इस तरह मुकम्मल हदीस की किताबें पढ़ने का तरीक़ा अब दुनिया में शायद कहीं बाक़ी नहीं रहा, बल्कि कालिजों और युनिवर्सिटियों के कोर्स में हदीस का कुछ चुनिन्दा हिस्सा मुक़र्रर है, बस वे चन्द मुन्तख़ब हदीसें पढ़ा दी जाती हैं, उनके यहाँ न तो सन्द महफ़ूज़ रखने का एहतिमाम है न रिवायत को महफ़ूज़ रखने का एहतिमाम है।

हदीस से पहले "हदीस की सनद" पढ़ना

लेकिन हमारे बुज़ुर्गों ने दारुल-उलूम देवबन्द के ज़रिये जो तरीक़ा-ए-कार तजवीज़ फ़रमाया है, आज भी अल्हम्दु-लिल्लाह हमें उस पर क़ायम रहने की तौफ़ीक़ हो रही है। चुनाँचे यह बुख़ारी शरीफ़ का आख़िरी बाब और उसकी आख़िरी हदीस है जो अज़ीज़ तालिब-इल्म (मौलवी मुहम्मद अज़हर बिन मौलाना मन्ज़ूर अहमद सल्लमहू) ने आपके सामने पढ़ी। इस बाब और इस हदीस के बारे में कुछ अर्ज़ करने से पहले परिचय के तौर पर यह बता देना मुनासिब है कि अज़ीज़ तालिब-इल्म ने जो इबारत पढ़ी है, उसमें हदीस की इबारत पढ़ने से पहले नामों का एक लम्बा सिलसिला पढ़ा। नामों का यह लम्बा सिलसिला किताब में लिखा हुआ मौजूद नहीं बल्कि उन्होंने अपनी तरफ़ से पढ़ा। फिर उसके बाद वह हदीस पढ़ी जो इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने यहाँ रिवायत फ़रमाई है।

हमारे दीनी मदरसों में आम तौर पर जो तरीक़ा राईज है, वह यह है कि दर्स के शुरू में हदीस की इबारत पढ़ने से पहले तालिब-इल्म यह पढ़ता है:

بالسند المتصل منا إلى الإمام البخاری رحمه الله تعالى، قال حدثنا

यानी हमसे लेकर इमाम बुख़ारी तक एक लगातार सनद के बाद इमाम बुख़ारी ने फ़रमाया।

और बाद में संक्षिप्त तौर पर "बिही क़ा-ल हद्दद-सना" (यानी इमाम बुख़ारी ने फ़रमाया) कहने पर इक्तिफ़ा करता है। लेकिन इस वक़्त चूँकि आख़िरी हदीस पढ़ी जा रही थी तो तालिब-इल्म ने मुनासिब समझा कि सिर्फ़ मुख़्तसर हवाले के बजाये हमसे लेकर जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक जितने वास्ते हैं, उन सब का ज़िक्र करके उनके वास्ते से हदीस पढ़ी जाये।

"हदीस की सनद" उम्मते मुहम्मदिया की ख़ुसूसियत

बज़ाहिर तो यह मामूली बात नज़र आती है लेकिन इसके पीछे एक अज़ीम फ़ल्सफ़ा और अज़ीम हिक्मत है, जो हमारे और आपके लिये बहुत बड़ा सबक़ रखती है। पहली बात यह है कि अभी तालिब-इल्म ने जो सनद पढ़ी, सनद के इस सिलसिले में मेरे उस्ताद से लेकर जनाब नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक जितने हज़रात उलेमा-ए-किराम रह. गुज़रे हैं जिनके ज़रिये यह इल्मे हदीस हम तक पहुँचा, उन सब का नाम लिया। यहाँ तक कि यह सिलसिला जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक पहुँचा। यह चीज़ सिर्फ़ इस उम्मते मुहम्मदिया को हासिल है जो इस रू-ए-ज़मीन पर किसी दूसरे मज़हब और मिल्लत वाले को हासिल नहीं। कोई भी मज़हब और मिल्लत वाला यह दावा नहीं कर सकता कि उसके मज़हबी पेशवा या उसके पैग़म्बर और नबी की बातें उन तक इस तरह पहुँची हैं कि उनके बारे में ख़म ठोंक कर एतिमाद के साथ यह कहा जाये कि ये बातें यक़ीनन हमारे नबी ने कही हैं।

यह एतिमाद न किसी यहूदी को हासिल है कि वह अपनी तौरात के बारे कह दे। न किसी ईसाई को हासिल है कि वह अपनी इन्जील के बारे में यह बात कह दे। जब आसमानी किताबों का दावा करने वाले अपनी आसमानी किताबों के बारे में यह बात नहीं कह सकते तो अपने पैग़म्बर की बातों और उनकी सुन्नतों के बारे में यह बात किस तरह कह सकते हैं?

तौरात और इन्जील क़ाबिले एतिमाद नहीं

आज अगर यहूदी मज़हब के किसी बड़े आलिम से यह पूछ लिया जाये कि यह तौरात जिसको तुम ख़ुदा की किताब और आसमानी किताब कहते हो, इसका तुम्हारे पास क्या सुबूत है? तुम्हारे पास इस बात की क्या दलील है कि यह तौरात वह है जो अल्लाह तआला ने

हज़रत मूसा अ़लैहिस्सलाम पर नाज़िल फ़रमाई थी? अगर यह सवाल किया जाये तो बग़लें झाँकने के अ़लावा उनके पास कोई रास्ता नहीं होगा। यही हाल इन्जीलों का है, और आजकल दुनिया में जो इन्जीलें मौजूद हैं ये वे नहीं हैं जो हज़रत ईसा अ़लैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई थीं, बल्कि आपकी ज़िन्दगी के हालात लोगों ने जमा किये और उनके बारे में उनका यह दावा है कि ये इल्हाम (अल्लाह की तरफ़ से दिल में डाली हुई बात) के ज़रिये जमा किये हैं। लेकिन मौजूदा लोगों के पास क्या सुबूत है कि ये किताबें उन्हीं लागों की लिखी हुई हैं? उनके पास कोई सुबूत, कोई सनद और कोई दलील मौजूद नहीं।

"हदीसें" क़ाबिले एतिमाद हैं

लेकिन उम्मते मुहम्मदिया को अल्लाह तआ़ला ने यह सम्मान अ़ता फ़रमाया कि आज जब हम किसी हदीस के बारे में यह कहते हैं कि जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बात इरशाद फ़रमाई, तो दिल के इत्मीनान के साथ यह कह सकते हैं कि नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ इसकी निस्बत दुरुस्त है। और आज अगर कोई हम से पूछे कि यह कैसे पता चला कि यह बात नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाई थी, तो हम उसके जवाब में पूरी सनद पेश कर देंगे जो अभी तालिब-इल्म ने आपके सामने पढ़ी।

हदीस को बयान करने वालों के हालात सुरक्षित हैं

और फिर सिर्फ़ इतनी सी बात नहीं कि हम से लेकर जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक के सिर्फ़ नाम सुरक्षित हैं बल्कि आप उन नामों में से किसी नाम पर उंगली रख कर पूछ लें कि यह आदमी कौन था? यह किस ज़माने में पैदा हुआ था? किन उस्तादों से इसने तालीम हासिल की थी? कैसा हाफ़ज़ा इसको अल्लाह तआ़ला ने अ़ता फ़रमाया? उसकी ज़हानत की कैफ़ियत क्या थी? दियानत और

अमानत की कैफ़ियत क्या थी? उसका सारा कच्चा-चिठ्ठा और एक-एक रावी (हदीस बयान करने वाले) का सारा रिकार्ड किताबों के अन्दर महफ़ूज़ (सुरक्षित) है।

यह बुख़ारी शरीफ़ आपके सामने मौजूद है। इसके कुल ११२८ पेज हैं। इसके हर पेज पर कम से कम दस बारह हदीसें मौजूद हैं। और हर हदीस के शुरू में अनेक रावियों (हदीस बयान करने वालों के नाम होते हैं। आप उनमें से किसी रावी का चयन करें और फिर किसी आलिम से आप पूछ लें कि इस रावी के हालाते ज़िन्दगी क्या हैं? किताबों के अन्दर उस रावी की पैदाईश से लेकर वफ़ात तक के तमाम हालात सब तरतीब से महफ़ूज़ हैं। उसके हालते ज़िन्दगी क्यों महफ़ूज़ किये गये? इसलिये कि उसने जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की हदीस रिवायत की थी, लिहाज़ा उसके बारे में यह मालूम करना ज़रूरी है कि उसकी बयान की हुई हदीस पर एतिमाद किया जाये या न किया जाये?

जाँच-पड़ताल करने वाले उलेमा का कमाल

फिर रावियों के ये हालाते ज़िन्दगी भी सिर्फ़ सुनी सुनाई बातों पर नहीं लिखे गये? बल्कि एक-एक रावी (हदीस बयान करने वाले) के हालात की जाँच-पड़ताल के लिये अल्लाह जल्ल शानुहू ने ऐसे अज़ीम उलेमा पैदा फ़रमाये कि जो एक-एक रावी की दुखती हुई रगों से वाक़िफ़ थे।

हज़रत मौलाना अनवर शाह कश्मीरी रहमतुल्लाहि अलैहि का यह मक़ूला मैंने अपने वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि की ज़बान से सुना, फ़रमाया करते थे कि:

“हाफ़िज़ शमसुद्दीन ज़हबी रहमतुल्लाहि अलैहि को हदीस के रिजाल (यानी हदीस बयान करने वाले हज़रात) की पहचान के सिलसिले में अल्लाह तआला ने ऐसी महारत अता फ़रमायी थी कि

अगर हदीस बयान करने वाले तमाम रावियों को एक मैदान में खड़ा कर दिया जाये और फिर हाफ़िज़ शमसुद्दीन ज़हबी रहमतुल्लाहि अलैहि को एक टीले पर खड़ा कर दिया जाये तो वह एक-एक रावी की तरफ़ उंगली उठाकर यह बता सकते हैं कि यह कौन है? और हदीस में इसका क्या स्थान है?"

"जर्ह व तादील' (यानी हदीस बयान करने वालों के हालात की छान-पिछोड़) के इमामों को अल्लाह तआला ने ऐसा ऊँचा मुक़ाम अ़ता फ़रमाया था। आज के दौर में कहने वाले बहुत आराम से यह तो कह देते हैं कि हमें भी "इज्तिहाद" (यानी अपनी मर्ज़ी और अपने इल्म के ज़ोर पर हदीस क़ुरआन से दीन के मसाइल निकालने) का हक़ मिलना चाहिये, क्योंकि हम भी क़ुरआन व हदीस के इल्म में वही मुक़ाम रखते हैं जो पिछले लोगों को अ़ता हुआ था, और यह लोग "वह भी आ़लिम थे और हम भी आ़लिम हैं" का दावा करते हैं। लेकिन बात दर असल यह है कि उन उलेमा हज़रात को अल्लाह तआ़ला ने जो हाफ़ज़ा, जो इल्म, जो तक़वा, जो जद्दोजहद और क़ुरबानी का जज़्बा अ़ता फ़रमाया था, उसकी कोई और वजह इसके अ़लावा बयान नहीं की जा सकती कि अल्लाह तआ़ला ने इसी ख़ास मक़सद के लिये उनको पैदा फ़रमाया था कि वह अपने नबी-ए-करीम के इरशादात की हिफ़ाज़त फ़रमायें।

एक मुहद्दिस का वाक़िआ़

अ़ल्लामा ख़तीब बग़दादी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब "अल्-किफ़ायत" में (जो उसूले हदीस की मशहूर किताब है) एक मुहद्दिस (हदीस के आ़लिम) जो हदीस बयान करने वालों के हालात की जाँच-पड़ताल के इमाम थे, उनका यह क़ौल नक़ल किया है किः

"जब हम किसी हदीस के बयान करने वाले के हालात की तहक़ीक़ के लिये उसके गाँव और उसके मौहल्ले में जाया करते थे (जाना भी इस तरह होता कि जब यह पता चलता कि फ़लाँ शख़्स जो

फ़लाँ शहर में रहता है, वह हदीस रिवायत करता है, और वह शहर सैकड़ों मील दूर होता था, और हवाई जहाज़ का ज़माना नहीं था कि हवाई जहाज़ में एक-दो घन्टे के अन्दर दूसरे शहर पहुँच गए। बल्कि उस ज़माने में ऊँटों पर घोड़ों पर और पैदल सफ़र होते थे। यह सफ़र सिर्फ़ इस बात की तहक़ीक़ के लिये करते थे कि यह मालूम करें कि जिस रावी ने यह हदीस रिवायत की वह किस मुक़ाम का है) तो उसके वतन में जाकर उसके हालात की छान-बीन करते।

अब उसके पड़ोसियों से, उसके मिलने-जुलने वाले दोस्तों से, और उसके रिश्तेदारों से पूछ रहे हैं कि यह आदमी कैसा है? यह शख़्स मामलात में कैसा है? अख़्लाक़ में कैसा है? नमाज़-रोज़े में कैसा है? यहाँ तक कि जब हम बहुत ज़्यादा खोद-कुरेद करते थे तो कई बार लोग हम से पूछते थे कि क्या तुम अपनी लड़की का रिश्ता यहाँ करना चाहते हो? इस वजह से तुम उनके हालात की इतनी छान-बीन कर रहे हो? जवाब में हम कहते कि भाई कोई रिश्ता तो नहीं करना चाहते, लेकिन उन्होंने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की एक हदीस रिवायत की है, लिहाज़ा हमें यह तहक़ीक़ करनी मन्ज़ूर है कि आया उनकी रिवायत की हुई हदीस को मोतबर मानें या न मानें?

"अस्मा-ए-रिजाल" का फ़न

इस तरह एक-एक रावी (हदीस बयान करने वाले) के हालात की तहक़ीक़ करके ये हज़रात उलेमा-ए-जर्ह व तादील "अस्मा-ए-रिजाल" के फ़न की किताबें तैयार कर गये हैं। हमारे जामिया दारुल-उलूम कराची के कुतबख़ाने में "अस्मा-ए-रिजाल" का एक पूरा सैक्शन अलग है, जिसमें एक-एक किताब तीस-तीस जिल्दों में मौजूद है। जिसमें हुरूफ़े-तहज्जी की तरतीब से हदीस को बयान करने वालों के हालात दर्ज हैं। आप बुख़ारी शरीफ़, सिहाहे-सित्ता (यानी हदीस छह बड़ी मशहूर किताबें) बल्कि हदीस की कोई भी किताब लीजिये और किताब

की कोई भी हदीस लीजिये और उस हदीस की सनद में किसी एक रावी का चयन कर लीजिये, और फिर "अस्मा-ए-रिजाल" की किताब में हुरूफ़े-तहज्जी की तरतीब से उस रावी के हालात देख लीजिये। यह फ़न "अस्मा-ए-रिजाल" की तदवीन (यानी इस फ़न को वजूद में लाना और तैयार करना) सिर्फ़ इस उम्मते मुहम्मदिया का ऐज़ाज़ (कारनामा और सम्मान) है।

"सनद" के बग़ैर हदीस ग़ैर-मक़बूल

जब तक हदीस की ये किताबें "सिहाहे-सित्ता" वग़ैरह वजूद में नहीं आई थीं, उस वक़्त तक क़ायदा यह था कि जब कोई शख़्स कोई हदीस सुनाता तो उस पर लाज़िम और ज़रूरी था कि वह सिर्फ़ हदीस न सुनाये, बल्कि उस हदीस की पूरी सनद भी बयान करे कि यह हदीस मुझे फ़लाँ ने सुनाई, और फ़लाँ को फ़लाँ ने सुनाई, और फ़लाँ को फ़लाँ ने सुनाई। पहले पूरी सनद बयान करता फिर हदीस सुनाता, तब उसकी बयान की हुई हदीस क़ाबिले क़ुबूल होती थी। और सनद के बग़ैर कोई शख़्स हदीस सुनाता तो कोई उसकी बात सुनने को भी तैयार नहीं होता था।

हदीस की किताबों के वजूद में आने के बाद सनद की हैसियत

अल्लाह तआला इन हज़राते मुहद्दिसीन के दर्जों को बुलन्द फ़रमाये। इन्होंने तमाम हदीसें इन किताबों की शक्ल में जमा फ़रमा दीं। लिहाज़ा अब इन किताबों के 'तवातुर' (यानी इनके बहुत बड़े तब्क़े के लगातार हर ज़माने में बयान करने) के दर्जे तक पहुँच जाने के बाद सनद की इतनी ज़्यादा तहक़ीक़ की और उसको याद करने की ज़रूरत न रही, क्योंकि अब तवातुर से यह बात साबित है कि यह किताब इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि की रिवायत की हुई है, लिहाज़ा अब

हर हदीस के साथ पूरी सनद का बयान करना ज़रूरी नहीं, बल्कि अब हदीस बयान करने के बाद "रवाहुल् बुख़ारी" (यानी इसको बुख़ारी ने रिवायत किया है) कह देना काफ़ी हो जाता है।

लेकिन इसके बावजूद हमारे बुज़ुर्गों ने यह तरीक़ा बाक़ी रखा कि अगरचे हर हदीस के बयान करते वक़्त पूरी लम्बी सनद बयान न की जाये, लेकिन रिवायत और इजाज़त के तौर पर पूरी सनद को महफ़ूज़ रखा जाये। क्योंकि अगर हर हदीस से पहले यह लम्बी सनद बयान की जायेगी तो लोगों के लिये दुश्वारी हो जायेगी, लिहाज़ा अब इतना कह देना काफ़ी है कि इस हदीस को "इमाम बुख़ारी" ने रिवायत किया है, और हम से लेकर इमाम बुख़ारी तक पूरी सनद हमारे पास महफ़ूज़ है जो आज अज़ीज़ तालिब-इल्म ने हमारे सामने पढ़ी। यह तो इस सनद का ज़ाहिरी पहलू था।

हदीस को बयान करने वाले, नूर के मीनारे

इस सनद का एक बातिनी (अन्दरूनी) पहलू भी है। वह यह कि अल्लाह तबारक व तआला ने अपने जिन पाकीज़ा बन्दों को अपने नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इरशादात की सुरक्षा के लिये चुना, उनकी सआदत (नेकबख़्ती) का क्या मुक़ाम होगा?

ईं	सआदत	बज़ूरे	बाज़ू	नेस्त
ता	न	बख़्शद्	ख़ुदा-ए-बख़्शिन्दा	

अल्लाह तआला ने यह ख़ास सआदत (सौभाग्य) सिर्फ़ उन हज़रात को अता फ़रमाई जिनको इस काम के लिये मुन्तख़ब फ़रमाया। वह जिससे चाहें जो काम लें। जिन हज़रात को अल्लाह तआला ने यह सआदत अता फ़रमाई, उनमें से एक-एक फ़र्द हमारे लिये नूर का मीनारा है। हमारे सिर का ताज है। और अल्लाह तआला ने उसकी ज़ात में क्या अनवार व बरकात रखे हैं, जिसके सिले में अल्लाह तआला ने उससे यह ख़िदमत ली। लिहाज़ा सनद के सिलसिले में आने

वाले रावियों के नाम महज़ "नाम" नहीं हैं, बल्कि ये नूर के मीनारे हैं जिनका सिलसिला जाकर जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से जुड़ जाता है।

हदीस को रिवायत करने वालों की बेहतरीन मिसाल

मेरे शैख़ हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल्-हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि (अल्लाह तआ़ला उनके दर्जों को बुलन्द फ़रमाये। आमीन) एक बड़ी प्यारी मिसाल दिया करते थे। फ़रमाया करते थे कि तुम रास्तों में बिजली के खम्बे देखते हो, जिनके ज़रिये यह बिजली हम तक पहुँचती है। यह बल्ब जो जल रहा है इसमें रोशनी कहाँ से आ रही है? यह रोशनी उन सैकड़ों खम्बों के लम्बे सिलसिले के ज़रिये इस बल्ब तक पहुँच रही है, और उन खम्बों का लम्बा सिलसिला जाकर "पावर हाऊस" से जुड़ा हुआ है। और इस बल्ब में "बिजली" दर असल "पावर हाऊस" से आ रही है। और अब हमारा काम सिर्फ़ इतना है कि इस बल्ब का बटन खोल दें। बटन खुलते ही इस बल्ब का राब्ता (संबन्ध) उन खम्बों के वास्ते से "पावर हाऊस" से जुड़ गया।

इसी तरह हम से लेकर जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तक सनद का जो पूरा सिलसिला है, इसमें जो हदीस को रिवायत करने वाले हैं, वे दर हक़ीक़त "पावर हाऊस" से जोड़ने वाले खम्बे हैं। जिस वक़्त तुम यह कहते हो "हद्द-सना फ़ुलानुन्" (हदीस बयान की फ़लाँ ने) गोया कि उस वक़्त तुमने बटन आन कर दिया। और उसके नतीजे में इस "सुनहरे सिलसिले" (सोने की ज़न्जीर) के ज़रिये तुम्हारा सिलसिला डायरेक्ट उलूमे नुबुव्वत के "पावर हाऊस" यानी जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़ाते अक़्दस से जुड़ गया।

लिहाज़ा जो शख़्स भी इस "सुनहरे सिलसिले" में शामिल हो गया और इसके साथ अपना ताल्लुक़ जोड़ लिया तो अल्लाह तआ़ला की

रहमत से पूरी उम्मीद है कि जब अल्लाह तआ़ला अपने उन नेक बन्दों पर अपने फ़ज़्ल की बारिश फ़रमायेंगे तो यह बन्दा गन्दा जो इस "सुनहरे सिलसिले" के साथ जुड़ गया है। इस पर भी अपने फ़ज़्ल की बारिश की छींटें डाल देंगे। इसलिये इस "सुनहरे सिलसिले" के साथ जुड़ जाना भी बड़ी अ़ज़ीम नेमत और अ़ज़ीम सआ़दत है।

आज हम और आपको इसकी अ़ज़मत का एहसास नहीं, लेकिन जब ये ज़ाहिरी आखें बन्द होंगी, और अल्लाह तआ़ला की बारगाह में हाज़िरी होगी, उस वक़्त पता चलेगा कि इस "सुनहरे सिलसिले" से जुड़ने का क्या अ़ज़ीम फ़ायदा हासिल हुआ।

आदमी क़ियामत में किसके साथ होगा?

मेरे मुर्शिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने जो बात इरशाद फ़रमाई, वह एक हदीस से भी साबित है। वह यह कि एक सहाबी ने अ़र्ज़ किया: या रसूलल्लाह! मेरे पास अ़मल का तो कोई ज़्यादा ज़ख़ीरा नहीं, लेकिन मैं अल्लाह तआ़ला और उसके रसूल से मुहब्बत करता हूँ। सरकारे दो-आ़लम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

المرء مع من أحب

इनसान का अन्जाम उन लोगों के साथ होगा जिनसे वह मुहब्बत करता है।

लिहाज़ा अगर तुम अल्लाह से और अल्लाह के रसूल से मुहब्बत करते हो तो इन्शा-अल्लाह तुम्हारा अन्जाम भी उन्हीं के साथ होगा। चुनाँचे हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम फ़रमाते हैं कि हमें कभी किसी बात पर इतनी खुशी नहीं हुई थी जितनी खुशी हमें आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का यह इरशाद सुनकर हुई कि आपने फ़रमाया:

المرء مع من أحب

बहरहाल! जब इस "सुनहरे सिलसिले" के साथ मुहब्बत और श्रद्धा का रिश्ता जोड़ लिया तो उस हदीस की रू से जिसमें यह वायदा फ़रमाया कि: "आदमी उसी के साथ होगा जिससे वह मुहब्बत रखता है" अल्लाह तआ़ला उन लोगों पर भी करम फ़रमायेंगे जो इस सिलसिले में जुड़ जायेंगे।

यह इस "सनद" का मुख़्तसर परिचय था जो अ़ज़ीज़ तालिब-इल्म ने आपके सामने पढ़ी।

बुख़ारी शरीफ़ का मुक़ाम

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि उन हज़राते मुहद्दिसीन में से हैं जिनकी किताब के बारे में सारी उम्मत ने एकमत होकर यह कहा कि "किताबुल्लाह के बाद सबसे ज़्यादा सही किताब" "बुख़ारी शरीफ़" है। और उम्मत ने यह बात वैसे ही नहीं कह दी बल्कि उलेमा-ए-जर्ह व तादील ने एक-एक हदीस की छान-फटक करने के बाद और जाँच-परख की बेशुमार छलनियों में छानने के बाद यह नतीजा निकाला और पूरी उम्मत इस पर सहमत हो गई।

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने सात लाख हदीसों में से उन हदीसों का इन्तिख़ाब (चयन) फ़रमाया है जो इस सही बुख़ारी में लिखी हैं। और यह इन्तिख़ाब भी इस तरह किया कि पहले तो हदीस को जाँचने के जो फ़न्नी तरीक़े हैं, उनमें से एक-एक तरीक़े को इस्तेमाल करके एक-एक हदीस को परखा और सनद को जाँचा, और एक-एक हदीस पर जाँचने और परखने के तमाम फ़ारमूले पूरे करने के बाद भी इसी पर बस नहीं किया।

हदीस लिखने से पहले का एहतिमाम

बल्कि हर हदीस लिखने से पहले ग़ुस्ल फ़रमाया, दो रक्अ़तें पढ़ीं और इस्तिख़ारा फ़रमाया। इस्तिख़ारा करने का मतलब अल्लाह तआ़ला से यह अ़र्ज़ करना था कि या अल्लाह! मैंने अपनी मेहनत और

मशक़्क़त और अपनी मालूमात की हद तक बेशक छान-फटक कर ली और उसके लिहाज़ से यह हदीस मुझे सही मालूम हो रही है, लेकिन इस किताब में यह हदीस लिखूँ या न लिखूँ? इसलिये इस्तिख़ारा कर रहा हूँ। फिर इस्तिख़ारा करने के बाद जब दिल मुत्मईन हो गया और अल्लाह तआला ने तबीयत में इत्मीनान अता फ़रमाया, उसके बाद किताब में वह हदीस लिखी।

तराजिमे-अबवाब की बारीक-बीनी

एक तरफ़ एहतियात और ख़ुदा से डरने का यह आलम था और दूसरी तरफ़ इस किताब की तरतीब ऐसी क़ायम फ़रमाई और फिर उस पर उन्वानात ऐसे क़ायम फ़रमाये, जिनको "तराजिमे-अबवाब" कहा जाता है, जो एक मुस्तक़िल इल्म की हैसियत रखता है। और जिसकी गहराईयों में ग़ोता लगाते हुए उलेमा-ए-किराम को एक हज़ार साल हो गये हैं, इसके बावजूद अभी तक कोई शख़्स यह दावा नहीं कर सका कि इस दरिया के तमाम मोती उसने खोज लिये हैं।

'किताबुत्तौहीद' आख़िर में लाने के कारण

यह बुख़ारी शरीफ़ का आख़िरी अध्याय और आख़िरी हदीस है। यहाँ भी इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अ़जीब व ग़रीब तरीक़ा इख़्तियार फ़रमाया। वह यह कि इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब को "किताबुत्तौहीद" पर ख़त्म फ़रमाया है। किताब का पहला बाब ''बाब बद्उल् वह्य'' और उसकी हदीस ''इन्नमल् आमालु बिन्नियात'' से किताब को शुरू फ़रमाया। फिर उसके बाद ''किताबुल् ईमान'' लाये, फिर ''किताबुल् इल्म'' फिर ज़िन्दगी के तमाम विभागों से संबन्धित जितनी हदीसें हैं, उनके अबवाब लाये। लेकिन आख़िर में "किताबुत्तौहीद" ले आये।

बज़ाहिर होना यह चाहिये था कि जहाँ "किताबुल् ईमान" लाये थे उसके साथ "किताबुत्तौहीद" ले आते। क्योंकि "तौहीद" तो ईमान का

सबसे आला दर्जा है और ईमान की सबसे पहली शर्त है। लिहाज़ा इसका ताल्लुक़ किताबुल्-ईमान से था। लेकिन इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने शुरू में किताबुल्-ईमान क़ायम कर दी, फिर दूसरे अबवाब लाते रहे, यहाँ तक कि किताब के बिल्कुल आख़िर में "किताबुत्तौहीद" लेकर आये।

अब सवाल यह है कि इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने ऐसा क्यों किया? अब हदीस की व्याख्या करने वालों ने अपने-अपने अन्दाज़ों से इस सवाल का जवाब दिया कि इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने ऐसा क्यों किया? बाज़ हज़रात ने फ़रमाया कि दर असल शुरू में जो किताबुल्-ईमान लाये, उसकी वजह यह है कि ईमान में जो 'ईजाबी' तक़ाज़े हैं यानी यह कि ईमान किन-किन चीज़ों पर होना चाहिये, उनका ज़िक्र तो वहाँ कर दिया। और किताबुत्तौहीद में ईमान के 'सल्बी' तक़ाज़े बयान फ़रमाये यानी कौनसे अक़ीदे ग़लत हैं और कौनसा अक़ीदा बातिल है? उन बातिल और गुमराह अक़ीदों और ऐसे अक़ीदे रखने वाले गुमराह फ़िर्क़ों की तरदीद फ़रमाई। बाज़ हज़रात ने यह वजह बयान फ़रमाई कि इमाम बुख़ारी का मक़सद यह बयान करना है कि "इस्लाम" तौहीद ही तौहीद है। ईमान से इस्लाम शुरू होता है और तौहीद पर ख़त्म होता है।

बाज़ हज़रात ने यह फ़रमाया कि इस तरीक़े के ज़रिये उस हदीस का मिस्दाक़ बनना मन्ज़ूर है जिसमें जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया थाः

من كان آخر كلامه " لا إله إلا الله" دخل الجنة (ابوداؤد)

यानी जिस शख़्स का आख़िरी कलाम "ला इला-ह इल्लल्लाहु" होगा, वह जन्नत में दाख़िल हो जायेगा।

और तौहीद चूँकि "ला इला-ह इल्लल्लाहु" का नाम है, इसलिये किताबुत्तौहीद को सबसे आख़िर में लाये। ताकि आख़िरी कलाम तौहीद और "ला इला-ह इल्लल्लाहु" का होकर इस हदीस का मिस्दाक़ बन

जाये। बहरहाल, ये मुख़्तलिफ़ हज़राते मुहद्दिसीन के मुख़्तलिफ़ क़ियासात हैं। अल्लाह तआ़ला ही बेहतर जानते हैं कि इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि के पेशे-नज़र क्या बात थी।

किताबुत्तौहीद को इस बाब पर ख़त्म करने की वजह

फिर इस किताबुत्तौहीद को भी इस "बाब" पर ख़त्म किया है:

"باب قول الله تعالىٰ: وَنَضَعُ الْمَوَازِيْنَ الْقِسْطَ لِيَوْمِ الْقِيَامَةِ"

यह बाब अल्लाह तआ़ला के इरशाद पर क़ायम फ़रमाया, कि हम क़ियामत के दिन इन्साफ़ करने के लिये तराज़ूयें क़ायम करेंगे। यह बाब क़ायम करने से इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का मक़सद मोअ़तज़िला (यह एक फ़िर्क़े का नाम है) के इस अ़क़ीदे की तरदीद है जो यह कहता था कि आमाल के वज़न की कोई हक़ीक़त नहीं।

'किताबुत्तौहीद' आख़िर में लाने का राज़

लेकिन इस किताबुत्तौहीद को 'आमाल के वज़न' पर ख़त्म करने में एक राज़ यह है कि इनसान की मुकल्लफ़ (पाबन्द) ज़िन्दगी का अन्त भी आमाल के वज़न पर होगा। लेकिन इनसान की मुकल्लफ़ ज़िन्दगी की शुरूआ़त नीयत से शुरू होती है, इसलिये इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने अपनी किताब को "इन्नमल् आमालु बिन्निय्यात" (आमाल का दारोमदार नीयतों पर है) से शुरू फ़रमाया, उसके बाद इनसान अपनी ज़िन्दगी में मुख़्तलिफ़ आमाल करता रहता है, यहाँ तक कि उसको मौत आ जाती है। और मौत के बाद बर्ज़ख़ (मरने बाद की ज़िन्दगी) का आ़लम शुरू हो जाता है और बर्ज़ख़ के आ़लम के बाद फिर हिसाब-किताब के लिये अल्लाह तआ़ला के सामने हाज़िरी होगी और वहाँ आमाल का वज़न होगा। आमाल के वज़न के बाद फिर जन्नत और दोज़ख़ की शक्ल में जज़ा और सज़ा मिलेगी।

लिहाज़ा जज़ा और सज़ा (अच्छे-बुरे आमाल के बदले) से पहले

अल्लाह तआला आमाल का वज़न फ़रमायेंगे और उसके नतीजे में जज़ा और सज़ा मिलेगी। लिहाज़ा इससे पता चलता है कि इस दुनिया की ज़िन्दगी का अन्त आमाल के वज़न पर जाकर हो जायेगा। इसी वजह से इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपनी किताब का इख़्तिताम (आख़िर और अन्त) भी 'वज़ने आमाल' पर फ़रमाया। और आख़िरी बाब इस आयतः

وَنَضَعُ الْمَوَازِيْنَ الْقِسْطَ لِيَوْمِ الْقِيَامَةِ

व न-ज़उल् मवाज़ीनल् किस्-त लियौमिल् कियामति

पर कायम फ़रमाया।

अल्लाह तआला को तराज़ू क़ायम करने की क्या ज़रूरत है?

अब यहाँ सवाल यह पैदा होता है कि अल्लाह तआला को आमाल को तौलने के लिये तराज़ूएँ क़ायम करने की क्या ज़रूरत है? क्योंकि अल्लाह तआला आलिमुल्-ग़ैब हैं, वह तो दिलों का हाल भी जानते हैं, हर शख़्स के अमल और फ़ेल से वाक़िफ़ हैं। वह जानते हैं कि किस शख़्स ने क्या अमल किया और कैसा अमल किया? और अल्लाह तआला की यह शान भी है कि उसके किसी अमल पर किसी को चूँ व चरा की मजाल नहीं, और आप आदिले मुतलक़ (सबसे ज़्यादा इन्साफ़ करने वाले) भी हैं। जो शख़्स अल्लाह तआला को मानता है वह यक़ीनन मानेगा कि अल्लाह तआला की तरफ़ से किसी के हक़ में कोई ज़्यादती नहीं हो सकती। आपका हर काम अदल व इन्साफ़ पर आधारित है। अल्लाह तआला ख़ुद फ़रमाते हैं कि मैं अपने बन्दों पर ज़ुल्म करने वाला नहीं हूँ।

लिहाज़ा अगर तराज़ूयें क़ायम किये बग़ैर और आमाल का वज़न किये बग़ैर वैसे ही अल्लाह तआला फ़ैसला फ़रमाते कि यह शख़्स

जन्नत में जायेगा और यह शख़्स दोज़ख़ में जायेगा, तो इस सूरत में कौन शख़्स अल्लाह तआला के इस फ़ैसले पर एतिराज़ या चूँ व चरा करता। इसलिये कि किसी के पास कोई ऐसी दलील नहीं थी जिसकी वजह से वह अल्लाह तआला के फ़ैसले को रद्द कर देता। क्योंकि अल्लाह तआला हर चीज़ पर क़ादिर हैं, हर चीज़ का पूरा इल्म रखने वाले भी हैं और मुकम्मल इन्साफ़ करने वाले भी हैं, लिहाज़ा किसी को चूँ व चरा की मजाल नहीं थी।

ताकि इन्साफ़ होता हुआ देखें

लेकिन अल्लाह तआला ने आमाल के वज़न के लिये तराज़ूयें क़ायम करके मख़्लूक़ को यह सबक़ दिया है कि हम भी किसी शख़्स की सज़ा का फ़ैसला उस वक़्त तक नहीं करते जब तक उसके सामने सुबूत मुहैया न कर दिया जाये, लिहाज़ा हर शख़्स को क़ियामत के रोज़ उसकी सज़ा का सुबूत मुहैया करके उससे कहा जायेगाः

اِقْرَاْ كِتَابَكَ، كَفٰى بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيْبًا ○

यह है तुम्हारा आमाल-नामा तुम इसको ख़ुद पढ़कर अपना हिसाब ख़ुद कर लो।

लिहाज़ा हर शख़्स पर यह साबित कर दिया जायेगा कि उसने यह ग़लती की है। यह सब आमाल का वज़न करना यह बताने के लिये किया जायेगा कि इन्साफ़ सिर्फ़ क़ायम नहीं किया जाता है बल्कि इन्साफ़ इस तरह होना चाहिये कि इन्साफ़ होता हुआ नज़र भी आये। तब जाकर पता चलेगा कि हाँ हक़ीक़त में अब इन्साफ़ हुआ, और उस पर किसी को एतिराज़ करने की मजाल न हो।

इसलिये जब अल्लाह तआला आमाल के वज़न के ज़रिये मख़्लूक़ को इन्साफ़ होता हुआ दिखायेंगे तो मख़्लूक़ को अपने दरमियान फ़ैसले करते वक़्त इन्साफ़ दिखाना चाहिये। यही वजह है कि उलेमा ने फ़रमाया कि अगर क़ाज़ी अपने इल्म के मुताबिक़ फ़ैसला करना चाहे

तो वह नहीं कर सकता, जब तक उसके सामने सुबूत मौजूद न हो।

आमाल का बिना-शरीर के होने की वजह से वज़न किस तरह होगा?

आगे इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

وأن اعمال بنی آدم وقولهم يوزن

यानी बनी-आदम (इनसानों) के आमाल और अक़्वाल (बातों, अलफ़ाज़) सबका वज़न होगा। इससे इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने उन अ़क़्ल के पुजारी लोगों का रद्द फ़रमाया जो यह कहते हैं कि आमाल तो कोई ऐसी चीज़ नहीं हैं जिनको तराज़ू में तौला जाये। तराज़ू में तौलन के लिये कोई जिस्म (शरीर) होना चाहिये, और आमाल तो बिना शरीर की चीज़ हैं, उनको किस तरह तराज़ू में तौला जा सकता है। इसी वजह से बाज़ हज़रात ने फ़रमाया कि आमाल का वज़न नहीं होगा बल्कि आमाल-नामों का वज़न होगा। बाज़ हज़रात ने फ़रमाया कि न तो आमाल का वज़न होगा और न आमाल-नामों का वज़न होगा, बल्कि अ़मल करने वाले इनसानों का वज़न होगा, और जिस इनसान के आमाल अच्छे होंगे उस इनसान का वज़न ज़्यादा हो जायेगा, और जिस इनसान के आमाल अच्छे नहीं होंगे, उसका वज़न कम हो जायेगा।

अल्लाह तआ़ला आमाल के वज़न पर क़ादिर हैं

लेकिन इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि इन अलफ़ाज़ से इस तरफ़ इशारा फ़रमा रहे हैं कि ये दोनों बातें सही नहीं हैं। न तो यह कहने की ज़रूरत है कि आमाल-नामों का वज़न होगा, और न यह कहने की ज़रूरत है कि इनसानों का वज़न होगा। सीधी सी बात है कि जब कुरआन करीम ने यह कह दिया कि आमाल का वज़न होगा तो अब यही अ़क़ीदा रखना चाहिये कि आमाल ही का वज़न होगा।

अब रहा यह सवाल कि आमाल किस तरह तौले जायेंगे? तो यह सवाल फ़ुज़ूल है, अल्लाह तआ़ला क़ादिरे-मुत्लक़ हैं, जब शरीरों के अन्दर वज़न की सलाहियत पैदा कर सकते हैं तो बिना-शरीर की चीज़ों के अन्दर भी वज़न की सलाहियत पैदा कर सकते हैं।

आज की साईन्स ने तो यह बात अब जाकर बताई कि हरारत और गर्मी और सर्दी तौली जा सकती है और आवाज़ की रफ़्तार नापी जा सकती है, लिहाज़ा जब साईन्स आवाज़ों को और गर्मी और सर्दी को तौलने पर क़ादिर है तो वह ज़ात जो क़ादिरे-मुत्लक़ (जो हर चीज़ पर अपनी कुदरत रखता) है, अगर वह इनसानों के आमाल तौलने के लिये तराज़ू क़ायम कर दे तो इसमें ताज्जुब की क्या बात है?

हमारी अ़क़्ल नाक़िस है

रहा यह सवाल कि किस तरह तौले जायेंगे? सो यह सवाल फ़ुज़ूल है, क्योंकि हमारी यह सीमित अ़क़्ल उस तरीक़ा-ए-कार का इहाता नहीं कर सकती जो अल्लाह तआ़ला उस वक़्त अ़मल में लायेंगे। अल्लाह तआ़ला ही बेहतर जानते हैं कि उसका क्या तरीक़ा-ए-कार होगा? और क्या उसकी तफ़्सीलात होंगी। उनकी तफ़्सीलात में जाने की ज़रूरत नहीं। हक़ीक़त यह है कि ऊपर की दुनिया के हालात हम और आप इस दुनिया में बैठकर इस छोटी सी अ़क़्ल से समझ सकते ही नहीं? जो अलफ़ाज़ कुरआन करीम में जिस तरह आये हैं, उन पर उसी तरह ईमान ले आओ, इसी में आ़फ़ियत है।

जन्नत की नेमतें अ़क़्ल से ऊपर हैं

मिसाल के तौर पर कुरआन करीम में आया है कि जन्नत में अनार होगें, खजूर होंगी, फल होंगे, लेकिन वे फल कैसे होंगे और वे अनार कैसे होंगे? हक़ीक़त यह है कि उसका नाम तो बेशक अनार और खजूर का है, लेकिन जन्नत के अनार और खजूर और फल को दुनिया के अनार और खजूर से कोई निस्बत नहीं। क्योंकि जन्नत की

नेमतों के बारे में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

مالاعين رأت،ولاأذن سمعت، ولاخطرعلى قلب بشر

जन्नत में जो नेमतें मिलने वाली हैं उनको आज तक न किस आँख ने देखा है और न किसी कान ने उसके बारे में सुना है और न किसी के दिल पर उसका ख़्याल तक गुज़रा।

लिहाज़ा इस बहस में पड़ने की ज़रूरत नहीं कि वह तराज़ू कैसी होगी? कितनी बड़ी होगी? किस तरह उसमें आमाल का वज़न किया जायेगा? ये सब फ़ुज़ूल बहसें हैं। बस अल्लाह तआ़ला ही बेहतर जानते हैं कि वे आमाल किस तरह तौले जायेंगे। लेकिन तौले ज़रूर जायेंगे।

आमाल के वज़न होने का ध्यान जमा लें

यहाँ पर यही बयान करना मक़सद है कि आमाल का वज़न होगा, चुनाँचे इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि का यहाँ बयान किया हुआ यह एक जुमला कि "इनसानों के आमाल और अक़्वाल का वज़न होगा" सिर्फ़ इस एक जुमले ही को हम अपने दिल पर लिख लें कि इनसानों के आमाल और अक़्वाल तौले जायेंगे, तो फिर इस दुनिया से सारी बद-उन्वानियाँ, सारे जरायम और सारे गुनाह मिट जायें।

आज दुनिया में जितने जरायम हो रहे हैं वे इस वजह हो रहे हैं कि इस आमाल के वज़न होने का ध्यान और ख़्याल नहीं। और इस पर मुकम्मल एतिक़ाद नहीं। इसलिये इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि जाते जाते यह नसीहत फ़रमा रहे हैं कि याद रखना! ये आमाल तौले जायेंगे। लिहाज़ा इस किताब में पीछे जो आमाल बयान किये गये हैं, उन सबको इस ध्यान से करो कि एक-एक अ़मल को तौला जाना है।

ज़बान से निकलने वाले अलफ़ाज़ का वज़न

फिर फ़रमाया "और उनके अक़्वाल तौले जायेंगे" यानी आमाल ही नहीं, बल्कि ज़बान से निकलने वाला कलिमा और शब्द भी तौला जायेगा। इसी मुनासबत से इस बाब में यह हदीस लाये हैं:

كلمتان حبيبتان إلى الرحمن خفيفتان على اللسان ثقيلتان في الميزان

यानी ये दोनों कलिमे अ़मल की तराज़ू के अन्दर बड़े भारी होंगे। इससे मालूम हुआ कि कलिमे भी तौले जायेंगे।

एक हदीस शरीफ़ में है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि बहुत सी बार इनसान अपने मुँह से ऐसा कलिमा निकाल देता है कि वह तो इसकी परवाह भी नहीं करता कि मुँह से क्या निकाल दिया, लेकिन सिर्फ़ उस एक कलिमे की वजह से जहन्नम का हक़दार बन जाता है। और बहुत सी बार इनसान अपनी ज़बान से ऐसा कलिमा निकाल देता है कि वह इसकी परवाह भी नहीं करता कि मुँह से क्या निकाल दिया, लेकिन सिर्फ़ उसी एक कलिमे की वजह से अल्लाह तआ़ला उसको जन्नत में दाख़िल फ़रमा देते हैं।

(बुख़ारी शरीफ़)

इसलिये ज़बान से निकलने वाले कलिमात बहुत ज़्यादा अहमियत रखते हैं, और इसी लिये बुज़ुर्गों ने फ़रमाया कि पहले बात को तौलो फिर बोलो। यानी यह सोचो कि यह बात बोलने की है भी या नहीं? और आख़िरत में जब इस बात का वज़न होगा तो उस वक़्त मेरा अन्जाम क्या होगा?

आमाल की गिनती नहीं होगी

इस जुमले से इस तरफ़ भी इशारा करना मक़सूद है कि क़ियामत के दिन आमाल का वज़न होगा, आमाल की गिनती नहीं होगी। यानी अ़मल के अन्दर कैफ़ियत का एतिबार होगा कि इस अ़मल में कितनी

लिल्लाहीयत (इख़्लास) है, कितना ख़ुलूस है, अ़मल की ज़ाहिरी शक्ल व सूरत का एतिबार नहीं होगा और न गिनती का एतिबार होगा। चुनाँचे क़ुरआन करीम में अल्लाह तआ़ला ने फ़रमायाः

لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا

यानी दुनिया में यह आज़माना मक़सूद है कि तुममें से किसका अ़मल ज़्यादा अच्छा है।

यह नहीं फ़रमाया कि किसका अ़मल ज़्यादा है। इससे इस तरफ़ इशारा करना है कि कोई अ़मल हो, उसमें यह देखो कि उसके अन्दर वज़न भी है या नहीं?

आमाल में वज़न कैसे पैदा हो?

अब सवाल यह उठता है कि आमाल में वज़न कैसे पैदा होता है? ज़बाने-हाल से इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि यह फ़रमाते हैं कि अगर आमाल में वज़न पैदा करने का तरीक़ा मालूम करना है तो मेरी इस किताब की पहली हदीस पढ़ लो। वह है "इन्नमल् आमालु बिन्निय्याति" यानी तमाम आमाल का दारोमदार नीयतों पर है। जब किसी अ़मल को करते वक़्त नीयत ख़ालिस अल्लाह तआ़ला के लिये कर लोगे तो उसके ज़रिये तुम्हारे अ़मल में वज़न पैदा हो जायेगा।

या यूँ कह दिया जाये कि दो चीज़ों से अ़मल में वज़न पैदा होता है, एक इख़्लास से, दूसरे सुन्नत की पैरवी करने से। ये दोनों अ़मल के लिये लाज़िमी शर्तें हैं। अगर इन दोनों में से एक भी न हो तो उस अ़मल में कोई वज़न नहीं होगा। चाहे देखने में वह अ़मल कितना ही बड़ा नज़र आ रहा हो।

दिखावे से वज़न घटता है

अगर एक शख़्स ने देखने में बड़े ख़ुशू-ख़ुज़ू (यानी नमाज़ के ताम आदाब और नियमों) से लम्बी चौड़ी नमाज़ पढ़ी। क़ियाम लम्बा किया,

क़िराअत लम्बी की, लेकिन उसका मक़सूद दिखावा था, तो अल्लाह तआला के यहाँ उस नमाज़ का कोई वज़न नहीं, बल्कि उल्टा गुनाह का सबब बन जायेगी, जैसा कि हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया:

من صلی یرائی فقد اشرک باللہ

यानी जिस शख़्स ने दिखावे के लिये नमाज़ पढ़ी उसने अल्लाह तआला के साथ शिर्क किया।

या जैसे अल्लाह तआला के रास्ते में लाखों रुपये ख़र्च कर दिये, लेकिन अल्लाह तआला को राज़ी करना मक़सूद नहीं था, बल्कि अपनी सख़ावत (दान करने वाला होने) के क़सीदे पढ़वाना मक़सूद था, तो इस अमल का कोई वज़न नहीं होगा। लेकिन अगर सिर्फ़ एक पैसा अल्लाह के रास्ते में इख़्लास के साथ ख़र्च कर दिया, जिससे मक़सूद अल्लाह को राज़ी करना था तो उसी एक पैसे का अल्लाह तआला के यहाँ बड़ा वज़न होगा।

सुन्नत की पैरवी से वज़न बढ़ता है

दूसरी चीज़ जिससे आमाल में वज़न पैदा होता है, वह है "इत्तिबा-ए-सुन्नत" जिसको दूसरे लफ़्ज़ों में "सिद्क़" कहा जाता है। यानी जो तरीक़ा नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बताया, उस तरीक़े के मुताबिक़ अमल करोगे तो उस अमल में वज़न पैदा होगा। उसके अलावा दूसरे तरीक़े से करोगे तो वज़न पैदा नहीं होगा। चुनाँचे जितनी "बिद्अतें" हैं, उनमें बहुत सी बार इख़्लास होता है, और बज़ाहिर अल्लाह तआला को राज़ी करना मन्ज़ूर होता है, लेकिन चूँकि उस अमल में तरीक़ा वह नहीं होता जो जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बताया है, इसलिये उस अमल में वज़न नहीं होता। ऐसे अमल के बारे में क़ुरआन करीम में इरशाद है:

فَلَا نُقِيمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَزْنًا ○

यानी क़ियामत के दिन हम उनके उस अ़मल में कोई वज़न क़ायम नहीं करेंगे।

तरीक़ा भी दुरुस्त होना ज़रूरी है

आजकल कोई शख़्स अगर ग़लत तरीक़े से अ़मल कर रहा हो और उसको उस पर टोका जाये कि भाई! यह तरीक़ा सही नहीं है तो जवाब में फ़ौरन यह कहते हैं कि हमारी नीयत सही है। हदीस में है कि "इन्नमल् आमालु बिन्नियात" (आमाल का दारोमदार नीयतों पर है) ऐसे लोगों को बस यह एक हदीस याद हो गई है और इस हदीस को मौक़ा-बे-मौक़ा इस्तेमाल करते हैं।

याद रखिये! तन्हा नीयत काफ़ी नहीं जब तक तरीक़ा वह न हो जो जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बताया है। इसकी मिसाल बिल्कुल ऐसी है जैसे आपने लाहौर जाने की नीयत कर ली और कोयटा जाने वाली गाड़ी में सवार हो गये। अब आपकी नीयत तो बिल्कुल दुरुस्त है, लेकिन जिस गाड़ी का आपने चुनाव किया है वह गाड़ी आपको कोयटा लेकर जायेगी, आपकी नीयत की बरकत से वह गाड़ी आपको लाहौर लेकर नहीं जायेगी।

बिल्कुल इसी तरह आपने जन्नत में जाने की नीयत कर ली और रास्ता जहन्नम जाने वाला इख़्तियार किया तो सिर्फ़ इस नीयत की बरकत से आप जन्नत में नहीं पहुँचेंगे। इसलिये हर अ़मल के अन्दर दो चीज़ों का होना ज़रूरी है, एक सिद्क़ और एक इख़्लास। इन दोनों के मिलने से अ़मल के अन्दर वज़न पैदा होता है। अगर इनमें से एक चीज़ भी न हो तो वह अ़मल बेवज़न हो जाता है।

लफ़्ज़ "क़िस्त" की व्याख्या

आगे इमाम बुख़ारी रहमतियल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

"व क़ा-ल मुजाहिदुन्: अल्-क़िस्तासु अल्-अ़द्लु बिर्रूमियति"

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि का मामूल यह है कि जब कोई लफ़्ज़ आता है तो उसकी मुनासबत से कुरआन करीम के किसी और लफ़्ज़ की भी तशरीह (व्याख्या) फ़रमा दिया करते हैं। चूँकि "क़िस्त" का लफ़्ज़ आया था, इसके मुनासिब दूसरा लफ़्ज़ "क़िस्तास" कुरआन करीम की आयत "व ज़िनू बिल्-क़िस्तासिल् मुस्तक़ीम" में आया है। इसलिये इस लफ़्ज़ की तशरीह करते हुए फ़रमा रहे हैं "अल्-क़िस्तासुः अल्-अद्‌लु बिर्रूमियति" यानी लफ़्ज़ "क़िस्तास" रूमी भाषा में अ़द्ल के मायने में आता है। "व युक़ालुः अल्-क़िस्तु मस्दरुल् मुक़्सिति" और यह कहा गया है कि लफ़्ज़ "क़िस्त" "मुक़्सित" का मस्दर है।

अब यहाँ यह अ़जीब बात नज़र आ रही है कि लफ़्ज़ "क़िस्त" सुलासी मुजर्रद है और "मुक़्सित" सुलासी मज़ीद है। इसलिये लफ़्ज़ "मुक़्सित" "क़िस्त" के लिये कैसे मस्दर (जिससे दूसरा लफ़्ज़ निकला हो उसे मस्दर कहते हैं) बन जायेगा?। तो इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि इस तरफ़ इशारा फ़रमा रहे हैं कि यह लफ़्ज़ अज़्दाद में से है, यानी इसके दो मायने हैं, और वे दोनों मायने एक-दूसरे के ख़िलाफ़ और उलट हैं। यानी एक मायने "इन्साफ़" के हैं और दूसरे मायने "ज़ुल्म" के भी हैं। लेकिन आ़म तौर पर जब यह लफ़्ज़ बाबे इफ़्आ़ल में इस्तेमाल होता है तो उस वक़्त इसके मायने "इन्साफ़" करने के होते हैं, और जब मुजर्रद में "क़-स-त यक़्सितु" में इस्तेमाल होता है तो उस वक़्त इसके मायने ज़ुल्म करने के होते हैं। लिहाज़ा यह लफ़्ज़ दोनों मायने में मुश्तरक है, लेकिन इस्तेमाल करते वक़्त ज़्यादातर बाबों के दरमियान फ़र्क़ कर दिया है। अलबत्ता कई बार इसके उलट भी इस्तेमाल कर लिया जाता है कि मुजर्रद से इन्साफ़ के मायने में और बाबे इफ़्आ़ल से ज़ुल्म के मायने में इस्तेमाल कर लिया जाता है।

हज्जाज बिन यूसुफ़ का वाक़िआ

"हज्जाज बिन यूसुफ़" जिसका ज़ुल्म व सितम बहुत मशहूर है

और जिसने बेशुमार उलेमा-ए-किराम, कारी हज़रात और हाफ़िज़ों को क़त्ल करा दिया। उसने हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अलैहि को जो बहुत ऊँचे दरजे के ताबिईन (१) में से हैं। एक बार उनको बुलवाया और पूछा कि "मेरे बारे में तुम्हारी क्या राय है?" अब हज्जाज बिन यूसुफ़ जैसा जाबिर इनसान हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अलैहि से पूछ रहा है कि मेरे बारे में तुम्हारी क्या राय है? अब अगर सही बात बतायें तो सर क़लम होने और सज़ा-ए-मौत जारी होने में कोई देर नहीं होगी, कोई मुक़दमा अदालत में पेश करने की ज़रूरत नहीं, बस हज्जाज का एक हुक्म जारी हो जाना काफ़ी है। और अगर अपने ज़मीर (विवेक) के ख़िलाफ़ ग़लत बात बतायें तो यह गवारा नहीं। लेकिन हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अलैहि के आला मुक़ाम ने इस बात को गवारा न किया कि हक़ के अलावा कोई और बात ज़बान से निकलें। जवाब में हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अलैहि ने फ़रमायाः

انت القاسط العادل

अन्तल् क़ासितुल् आदिलु

'क़ासित' के मायने अगरचे "ज़ुल्म करने वाले" के भी होते हैं और "इन्साफ़ करने वाले" के भी होते हैं लेकिन लफ़्ज़ "क़ासित" के बाद जब "अल्-आदिल् भी कह दिया तो इसके मायने मुतैयन हो गये कि यहाँ पर "क़ासित्" को "आदिल्" के मायने में लिया हैं। चुनाँचे उनका यह जवाब सुनकर लोग हैरान हुए और ताज्जुब करने लगे कि आपने हज्जाज बिन यूसुफ़ की शान में तारीफ़ी जुमला कह दिया। लेकिन हज्जाज बड़ा धाग और भाषा व साहित्य का भी बड़ा माहिर था, चुनाँचे जब लोगों ने जवाब की पसन्दीदगी का इज़हार किया तो उसने कहा कि तुम्हें नहीं मालूम कि इसने क्या कहा है, इसने यह कहा

(१) ताबिई उसको कहते है जिसने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के किसी सहाबी को देखा हो और उसका ईमान की हालत में इन्तिकाल हुआ हो। मुहम्मद इमरान क़ासमी

है कि "तू ज़ालिम है तू काफ़िर है" इसलिये कि "क़ासित" जब मुजर्रद में इस्तेमाल होता है तो इसके मायने उमूमन "ज़ालिम" के होते हैं, और लफ़्ज़ "आदिल" कहकर इसने कुरआन करीम की इस आयत की तरफ़ इशारा किया है:

ثُمَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُوْنَ ۝

अल्लाह तआ़ला ने फ़रमाया कि ये लोग अपने परवर्दिगार के साथ दूसरे को शरीक ठहराते हैं।

इस आयत में कुफ़्र और शिर्क के लिये लफ़्ज़ "अद्ल" इस्तेमाल फ़रमाया है। लिहाज़ा इसने दर हक़ीक़त मुझे लपेट कर काफ़िर और ज़ालिम कहा है।

बहरहाल! उस मौक़े पर हज़रत सईद बिन जुबैर रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने इस लफ़्ज़ से फ़ायदा उठाया।

आगे इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

"अम्मल् क़ासितु फ़-हुवल् जाइरु" यानी लफ़्ज़ "क़ासित" के आ़म तौर पर जो मायने हैं वह "ज़ालिम" के आते हैं, जैसा कि कुरआन करीम में भी आया है:

وَاَمَّا الْقَاسِطُوْنَ فَكَانُوْا لِجَهَنَّمَ حَطَبًا ۝

यानी ज़ालिम लोग जहन्नम का ईंधन होंगे।

अहमद बिन इश्काब वाली रिवायत को आख़िर में लाने की वजह

फिर इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने आख़िरी हदीस बयान फ़रमाई:

حدثنا أحمد بن اشكاب، قال: حدثنا محمد بن فضيل، عن عمارة بن القعقاع، عن أبي زرعة، عن أبي هريرة رضي الله عنه وعنهم قال: قال النبي صلى الله عليه وسلم: "كلمتان حبيبتان إلى الرحمن خفيفتان على اللسان

"ثقيلتان في الميزان سبحان الله وبحمده سبحان الله العظيم".

यानी नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि दो कलिमे ऐसे हैं जो अल्लाह तआला को बहुत पसन्द हैं, और वे कलिमे ज़बान पर आसान हैं। यानी उनके पढ़ने में कोई दिक्क़त नहीं बल्कि बड़े आसान हैं। और साथ ही यह कि ये कलिमे आमाल की तराज़ू में बड़े भारी होंगे। वे ये हैं-

सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही सुब्हानल्लाहिल् अज़ीम

यही हदीस इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने सही बुख़ारी में दो जगहों पर पहले भी ज़िक्र फ़रमाई है। अलबत्ता वहाँ पर उनके उस्ताद दूसरे हैं। किताबुद्-द-अवात में यही हदीस अपने उस्ताद ज़ुहैर बिन हर्ब की सनद से ज़िक्र की है, और किताबुल्-ईमान में अपने उस्ताद कुतैबा बिन सईद की सनद से ज़िक्र फ़रमाई है। और यहाँ पर अपने उस्ताद अहमद बिन इश्काब की सनद से रिवायत की है।

हाफ़िज़ इब्ने हजर रहमतुल्लाहि अलैहि जो बुख़ारी शरीफ़ के शारेह (व्याख्याकार) हैं और इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि के सबसे ज़्यादा मिज़ाज को पहचानने वाले हैं, वह फ़रमाते हैं कि दर असल इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपने उस्ताद अहमद बिन इश्काब से यह हदीस सबके आख़िर में सुनी थी, जबकि दूसरे उस्तादों से यही हदीस पहले सुन चुके थे। इस वजह से सबसे आख़िर में वह रिवायत लाये जो अहमद बिन इश्काब से सुनी थी। अलबत्ता बाद के जो तीन रावी (हदीस को बयान करने वाले) हैं- यानी मुहम्मद बिन फ़ुज़ैल, उमारह् बिन क़अ़क़ाअ़ और अबू ज़रआ। ये तीनों रावी तमाम रिवायतों में मौजूद हैं, और सिर्फ़ इन्हीं से यह हदीस नक़ल की गयी है। इसी वजह से हदीस की इस्तिलाह में यह हदीस 'ग़रीब' है।

दो कलिमात की तीन सिफ़ात

हदीस का तर्जुमाः हज़रत अबू हुरैरह रज़ियल्लाहु अन्हु इरशाद फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि दो कलिमे ऐसे हैं जो रहमान को प्यारे हैं, ज़बान पर हल्के हैं, और अ़मल की तराज़ू में बहुत भारी हैं। वे दो कलिमे ये हैं **"सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही, सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम"**

इस हदीस में इन कलिमात की तीन सिफ़तें बयान फ़रमाई हैं। पहली सिफ़त यह है कि ये दो कलिमे रहमान को प्यारे हैं। अब हदीस में "हबीबतानि इलल्लाहि" भी कह सकते थे, लेकिन इसके बजाये "हबीबतानि इलर्रह्मानि" फ़रमाया। इससे दर हक़ीक़त इस तरफ़ इशारा फ़रमाया कि जब ये दो कलिमे रहमान को प्यारे हैं तो जो शख़्स इन कलिमात की क़द्र पहचान कर इनको पढ़ेगा वह शख़्स ज़रूर रहमान की सिफ़ते रहमत के नाज़िल होने का स्थान बन जायेगा।

दूसरी सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि ये कलिमात ज़बान पर बहुत हल्के हैं। यानी इनको न तो पढ़ने में कोई दिक़्क़त और मशक़्क़त है और न याद करने में कोई दिक़्क़त और मशक़्क़त है। एक ही मज्लिस में ये कलिमात याद हो जाते हैं।

तीसरी सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि अ़मल की तराज़ू में इनका वज़न बहुत भारी है। अ़मल की तराज़ू का वज़न यहाँ नज़र आने वाला नहीं, बल्कि वहाँ जाकर इनका वज़न मालूम होगा। इसलिये यह बताया ही नहीं जा सकता कि "सक़ीलतानि फ़िल्-मीज़ानि" (अ़मल की तराज़ू में भारी) के अन्दर क्या कुछ बातें पोशीदा हैं और इन कलिमात का क्या वज़न है? अल्लाह तआ़ला ही बेहतर जानते हैं। वे कलिमात ये हैं:

سبحان الله وبحمده. سبحان الله العظيم

सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम

सुब्हानल्लाह के मायने

"सुब्हानल्लाहि" के मायने यह हैं कि मैं अल्लाह जल्ल शानुहू की पाकी बयान करता हूँ। हमारी उर्दू ज़बान की तंगी की वजह से इसका सही-सही तर्जुमा हो नहीं सकता। बस तर्जुमे का काम चला लेते हैं। "सुब्हानल्लाहि" का जो असल मतलब है और इसके पीछे जो तासीर है, उसको इनसान तर्जुमे के ज़रिये दूसरी भाषा में मुन्तकिल कर ही नहीं सकता। इसलिये काम चलाने के लिये यह तर्जुमा कर लेते हैं कि "मैं अल्लाह की पाकी बयान करता हूँ" और पाकी बयान करने के मायने यह हैं कि मैं इस बात का इक़रार और ऐलान और एतिराफ़ करता हूँ कि अल्लाह जल्ल शानुहू की ज़ात बे-ऐब है। उस ज़ात में कोई ऐब नहीं। इसी को "तन्ज़ीह" कहा जाता है, यानी अल्लाह तआ़ला को हर ऐब से मुनज़्ज़ह (पाक) क़रार देना। यह मायने हुए "सुब्हानल्लाहि" के।

"व बि-हम्दिही" का तर्जुमा और तरकीब

"व बि-हम्दिही" यह भी अ़जीब कलिमा है। इस कलिमे को सीधे सादे तरीक़े से भी कहा जा सकता था कि: "सुब्हानल्लाहि वल्-हम्दु लिल्लाहि" जैसा कि दूसरी हदीस में कहा भी गया है। और दोनों कलिमात के बेशुमार फ़ज़ाइल हैं। लेकिन सीधे सादे जुमले को छोड़कर ऐसा जुमला इरशाद फ़रमाया जिसकी तरकीब करने में लोगों को दुश्वारी पेश आई कि इस जुमले "व बि-हम्दिही" की क्या तरकीब करें? इस जुमले में "वाव" आ़तिफ़ा है, या हालिया है, या कुछ और है? और यह "ब" किस मायने में है?

लेकिन बहस और तफ़सील के बाद व्याख्याकारों की सर्वसम्मति से जो बात सामने आई, वह यह है कि इसमें "वाव" हालिया है, और "ब" तलब्बुस के लिये है। और अब "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" के मायने यह हुए कि "उसब्बिहुल्ला-ह तआ़ला मु-तलब्बिसन् बि-हम्दिही"

यानी मैं जिस वक़्त तस्बीह कर रहा हूँ ठीक उसी वक़्त मैं अल्लाह तआला की हम्द (तारीफ़) भी बयान कर रहा हूँ।

देखिये: "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" का सादा तर्जुमा तो यह हो सकता था कि अल्लाह तआला की ज़ात बे-ऐब है और मैं उसकी तारीफ़ करता हूँ। लेकिन इस तर्जुमे में ज़रा सा यह शुब्हा रह जाता है कि अल्लाह तआला की ज़ात की तारीफ़ करते हुए यह कहना कि उसमें कोई ऐब नहीं। यह तारीफ़ अल्लाह तआला की बुलन्द शान के लिहाज़ से बहुत कम होती है। जैसे किसी बड़े और शरीफ़ आदमी की तारीफ़ करते हुए यह कहा जाये कि उसमें कोई बुराई नहीं है, या यह आदमी बुरा नहीं है।

ये अलफ़ाज़ उस वक़्त कहे जाते हैं जब उसकी बहुत ज़्यादा तारीफ़ करनी मन्ज़ूर नहीं होती। इसलिये तारीफ़ का कलिमा कहने के बजाये यह कह दिया जाता है कि यह शख़्स बुरा नहीं है। इसी तरह अगर अल्लाह तआला के बारे में सिर्फ़ यह कह दिया जाता कि अल्लाह तआला की ज़ात में कोई ऐब नहीं, तो यह कम दरजे की तारीफ़ होती। अगरचे बाद में यह भी कह दे कि "मैं अल्लाह तआला की तारीफ़ बयान करता हूँ"। क्योंकि यह एक अलग और मुस्तक़िल जुमला हो जायेगा। इसलिये इस कलिमे ने इस बात को गवारा नहीं किया कि अल्लाह तआला को बे-ऐब तो किया जाये लेकिन उसकी सिफ़ते कमाल का ज़िक्र न किया जाये। इसलिये फ़रमाया "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" यानी मैं अल्लाह तआला की तस्बीह करता हूँ और ठीक उसी वक़्त अल्लाह तआला की हम्द (तारीफ़) भी बयान कर रहा हूँ। ताकि "हम्द" बयान करने में कोई अन्तराल न आये बल्कि दोनों बातें एक साथ आ जायें।

अब मतलब यह होगा कि अल्लाह तआला की ज़ात बे-ऐब भी है और तमाम सिफ़ाते कमाल की जामे भी है। (यानी अल्लाह तआला की ज़ात के अन्दर कमाल की तमाम सिफ़तें जमा हैं) इसलिये मैं उस ज़ात

की "हम्द" भी साथ-साथ बयान करता हूँ।

अल्लाह तआ़ला की ज़ात और सिफ़ात सब बे-ऐब हैं

अब कहने में तो यह मामूली बात हुई कि अल्लाह तआ़ला की ज़ात बे-ऐब है, लेकिन जिस वक़्त बन्दा सोच समझ कर इसका इक़रार करता है कि अल्लाह तआ़ला की ज़ात बे-ऐब है, तो इसका मतलब होता है कि वह इस बात का इक़रार कर रहा है कि फिर उसकी सिफ़ात भी बे-ऐब हैं। उसके फ़ैसले बे-ऐब हैं। उसकी शरीअ़त बे-ऐब है, उसके अहकाम बे-ऐब हैं। इसलिये जो शख़्स अल्लाह तआ़ला के बे-ऐब होने पर ईमान रखता है तो उसके ईमान का लाज़िमी तक़ाज़ा यह है कि फिर वह उसकी शरीअ़त के एक-एक हुक्म को बे-ऐब समझकर उस पर ईमान लाये और फिर उस पर अ़मल करे। और अल्लाह तआ़ला के हर फ़ैसले को बे-ऐब समझ कर उस पर राज़ी हो जाये। इसलिये इस कलिमे "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" के अन्दर तक़दीर पर राज़ी रहना भी दाख़िल है, शरीअ़त पर अ़मल भी दाख़िल है और सुन्नत पर अ़मल भी इसमें दाख़िल है।

"सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम" के मायने

दूसरा जुमला हदीस का यह है "सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम" यानी मैं उस अल्लाह की तस्बीह (पाकी बयान) करता हूँ जो बड़ाई वाला है। मेरे शैख़ हज़रत डॉक्टर अ़ब्दुल्-हई साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाया करते थे कि देखो! इस हदीस के पहले जुमले "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" से अल्लाह तआ़ला की सिफ़ते जमाल की तरफ़ इशारा हो रहा है, क्योंकि अल्लाह तआ़ला की ज़ात बे-ऐब है और तमाम तारीफ़ों की जामे है (यानी उसके अन्दर तामम तारीफ़ें जमा हैं) और क़ाबिले तारीफ़ ज़ात वह होती है जिसमें जमाल हो। इसलिये यह जुमला सिफ़ते जमाल की तरफ़ इशारा कर रहा है। और दूसरा जुमला "सुब्हानल्लाहिल् अ़ज़ीम" यह अल्लाह तआ़ला की बड़ाई और जलाल

की तरफ़ इशारा कर रहा है।

इसलिये पहले जुमले में बारी तआला के जमाल का बयान है और दूसरे जुमले में बारी तआला के जलाल का बयान है। और जब बारी तआला के जमाल का तसव्वुर करोगे तो उसके नतीजे में अल्लाह तआला से मुहब्बत पैदा होगी, क्योंकि जमाल की ख़ासियत यह होती है कि वह महबूब होता है और उसकी तरफ़ दिल खिंचते हैं और उससे मुहब्बत पैदा होती है। और जलाल का तक़ाज़ा यह है कि उसके नतीजे में ख़ौफ़ पैदा होगा, और जब मुहब्बत और ख़ौफ़ ये दोनों मिल जाते हैं तो उसके नतीजे में "ख़शिय्यत" (यानी अल्लाह का डर उसकी मुहब्बत के साथ) पैदा होती है।

"ख़शिय्यत" क्या चीज़ है?

याद रखिये! "ख़शिय्यत" आम डर और ख़ौफ़ का नाम नहीं, जैसे एक डर साँप और बिच्छू से, भेड़िये से, दरिन्दों से और डाकुओं से होता है। इसका नाम "ख़शिय्यत" नहीं। बल्कि "ख़शिय्यत" उस डर और ख़ौफ़ का नाम है जो मुहब्बत के साथ हो। जो अल्लाह तआला की मुहब्बत से पैदा होती है। उसका नाम हक़ीक़त में "ख़शिय्यत" है। जैसे बाप का ख़ौफ़, उस्ताद का ख़ौफ़, शैख़ का ख़ौफ़, ये सब ख़ौफ़ मुहब्बत और अक़ीदत से पैदा होते हैं। चुनाँचे बहुत सी बार यह होता है कि बाप ने ज़िन्दगी भर बेटे को कभी मारा नहीं, डाँटा भी नहीं, लेकिन जब बेटा उस बाप के पास से भी गुज़रता है तो क़दम काँपने लगते हैं। यह रौब किस चीज़ का है? दर हक़ीक़त यह रौब मुहब्बत से पैदा हुआ है। इसलिये बारी तआला की मुहब्बत दर हक़ीक़त बारी तआला की "ख़शिय्यत" से पैदा होती है। इसलिये मुहब्बत और ख़ौफ़ के मजमूए (संग्रह) का नाम "ख़शिय्यत" है।

अब "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" से अल्लाह तआला की मुहब्बत पैदा हुई और "सुब्हानल्लाहिल् अज़ीम" से अल्लाह तआला का

ख़ौफ़ पैदा हुआ। और दोनों का मज्मूआ "ख़शिय्यत" है। और सारे आमाल व अख़्लाक़ का हासिल यह है कि दिल में अल्लाह तआ़ला की "ख़शिय्यत" पैदा हो जाये।

إِنَّمَا يَخْشَى اللّٰهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمَاءُ

बेशक अल्लाह तआ़ला से उसके वही बन्दे डरते हैं जो उसकी बड़ाई का इल्म रखते हैं।

इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि इस हदीस को बिल्कुल आख़िर में इसलिये लाये कि तमाम उलूम का ख़ुलासा और निचोड़ "अल्लाह की ख़शिय्यत" है। चुनाँचे मौलाना रूमी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं:

ख़शियतुल्लाह रा निशाने इल्म दाँ
आयत यख़्शल्ला-ह दर कुरआन ब-ख़्वाँ

यानी इल्म की निशानी "ख़शिय्यत" है। अगर दिल में ख़शिय्यत पैदा हुई तो समझा जायेगा कि इल्म हासिल हुआ, और अगर "ख़शिय्यत" पैदा नहीं हुई तो मालूम हुआ कि इल्म नहीं आया, सिर्फ़ अलफ़ाज़ और उनकी शक्लें आ गईं।

इसलिये जाते-जाते इमाम बुख़ारी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि अगर इल्म का नतीजा हासिल करना है तो अपने अन्दर "ख़शिय्यत" पैदा करो, और "ख़शिय्यत" पैदा करने का तरीक़ा यह है कि इन कलिमात का ध्यान करो और ख़ूब अधिकता के साथ इनका ज़िक्र करो।

इन कलिमात को सुबह व शाम पढ़ना

इसलिये हदीस शरीफ़ में आया है कि जो शख़्स सुबह के वक़्त "सुब्हानल्लाहि व बि-हम्दिही" सौ बार पढ़े तो अल्लाह तआ़ला शाम तक उसके तमाम गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं अगरचे वे रेत के ज़र्रों के बराबर हों। और अगर शाम को ये कलिमात सौ बार पढ़े तो सुबह

तक तमाम गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं। इतनी अज़ीम (बड़ी) फ़ज़ीलत इन कलिमात की बयान फ़रमाई है।

ख़ुलासा

आज की इस मज्लिस का ख़ुलासा दो बातें हैं। इन दो बातों पर हम अमल कर लें तो यह मज्लिस हमारे लिये कारामद और मुफ़ीद होगी। पहली बात यह है कि इस बात का इस्तेहज़ार और ध्यान पैदा करें कि हमारे आमाल का वज़न होना है। और आमाल के अन्दर वज़न पैदा करने वाली दो चीज़ें हैं- एक "सुन्नत की पैरवी" और दूसरे "इख़्लास"। और यहाँ से इस बात की फ़िक्र लेकर जायें कि अल्लाह तआला ये दोनों चीज़ें हमारे अन्दर पैदा फ़रमा दें, ताकि आख़िरत में हमारे आमाल वज़नी हो जायें।

दूसरी बात यह है कि ये दो कलिमात जिनको हदीस में इतनी अज़ीम फ़ज़ीलत दी गई है। इन कलिमात को जान से ज़्यादा प्यारा बना लें, और चलते-फिरते उठते-बैठते ये कलिमात ज़बान पर हों। और अगर इस नीयत से पढ़ें कि इनके ज़रिये मेरे अन्दर "ख़शिय्यत" (अल्लाह का ख़ौफ़) पैदा हो तो फिर इन्शा-अल्लाह, अल्लाह तआला इनके ज़रिये वह मक़सद हासिल करा देंगे और "ख़शिय्यत" पैदा फ़रमा देंगे। अल्लाह तआला मुझे भी और आप सबको भी इसकी तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَا اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

कामयाब मोमिन कौन?

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْعٰدُوْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۷)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

वास्तविक मोमिन कौन हैं?

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! मैंने अभी आपके सामने सूरः मोमिनून की शुरू की आयतों की तिलावत की है। ये आयतें अट्ठारहवें पारे के बिल्कुल शुरू में आई हैं। इन आयतों में अल्लाह तबारक व तआला ने "मोमिनों" की सिफ़ात बयान फ़रमाई हैं कि सही मायने में "मोमिन" कौन हैं? उनकी सिफ़ात क्या हैं? वे क्या काम करते हैं और

किन कामों से बंचते हैं? साथ में अल्लाह तआ़ला ने यह भी बयान फ़रमाया कि जो मोमीन इन सिफ़ात वाले होंगे, उनको कामयाबी हासिल होगी।

कामयाबी का मदार अ़मल पर है

इन आयतों की शुरूआ़त ही इन अलफ़ाज़ से फ़रमाईः

قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ

यानी उन मोमिनों ने फ़लाह (कामयाबी) पाई जिनके अन्दर ये सिफ़ात हैं। इससे इस बात की तरफ़ इशारा फ़रमाया कि अगर मुसलमान फ़लाह चाहते हैं तो इन आमाल को इख़्तियार करना होगा, ये सिफ़ात अपनानी होंगी और इस बात की पूरी कोशिश करनी होगी कि जो बातें यहाँ बयान की जा रही हैं उनको अपनी ज़िन्दगी के अन्दर दाख़िल करें। क्योंकि इसी पर मुसलमानों की फ़लाह का दारोमदार है और इसी पर फ़लाह निर्भर है।

फ़लाह का मतलब

पहले यहाँ यह बात समझ लें कि "फ़लाह" का क्या मतलब है? जब हम उर्दू ज़बान में "फ़लाह" का तर्जुमा करते हैं तो आ़म तौर पर इसका तर्जुमा "कामयाबी" से किया जाता है। इसलिये कि हमारे पास उर्दू ज़बान में इसके मायने अदा करने के लिये कोई और लफ़्ज़ मौजूद नहीं। इस वजह से मजबूरन इसका तर्जुमा "कामयाबी" से कर दिया जाता है। लेकिन हक़ीक़त में अ़रबी ज़बान के लिहाज़ से और क़ुरआन करीम की इस्तिलाह के लिहाज़ से "फ़लाह" का मतलब इससे बहुत ज़्यादा विस्तृत और आ़म है।

इस लफ़्ज़ के असल मायने यह हैं: "दुनिया व आख़िरत में ख़ुशहाल होना" दुनिया व आख़िरत दोनों में ख़ुशहाली के मज्मूए को "फ़लाह" कहा जाता है। चुनाँचे अज़ान में एक कलिमा कहा जाता है:

"हय्-य अ़लल् फ़लाह" (आओ फ़लाह की तरफ़) अज़ान के इस कलिमे से भी यह बात बताई जा रही है कि अगर तुम दुनिया व आख़िरत दोनों की ख़ुशहाली चाहते हो तो नमाज़ के लिये आओ और मस्जिद में पहुँचो। बहरहाल! "फ़लाह" का लफ़्ज़ बड़ा ही विस्तृत मतलब रखने वाला लफ़्ज़ है।

कुरआन करीम में सूरः बक़रह् के शुरू में भी फ़लाह का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है:

الٓمّٓ ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ فِيْهِ .... اُولٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِّنْ رَّبِّهِمْ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ○

यानी जो लोग तक़्वा (परहेज़गारी, गुनाहों से बचना) इख़्तियार करने वाले हैं और आख़िरत पर ईमान रखने वाले हैं, कुरआन करीम पर और कुरआन करीम से पहले नाज़िल होने वाली तमाम आसमानी किताबों पर ईमान रखने वाले हैं, यही लोग अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से हिदायत पाने वाले हैं और यही लोग फ़लाह पाने वाले हैं।

लिहाज़ा "फ़लाह" का लफ़्ज़ बड़ा जामे (सर्व व्यापी) है और दुनिया व आख़िरत की तमाम ख़ुशहालियों को शामिल है।

कामयाब मोमिन की सिफ़ात

इस सूरः "मोमिनून" में यह कहा जा रहा है कि वे मोमिन फ़लाह पायेंगे जिनके अन्दर वे सिफ़ात होंगी जो आगे ज़िक्र की गयी हैं। फिर एक-एक सिफ़त को बयान फ़रमाया कि वे मोमिन फ़लाह पायेंगे जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं और बेहूदा और फ़ुज़ूल बातों से बचने वाले हैं, और ज़कात देते हैं और ज़कात के हुक्म पर अ़मल करने वाले हैं, और अपनी शर्मगाहों की हिफ़ाज़त करने वाले हैं। और अपनी अमानतें और अपने अ़हद को पूरा करने वाले हैं।

ये सारी सिफ़ात इन आयाते करीमा में बयान फ़रमाई हैं। इनमें से हर सिफ़त तफ़सील और व्याख्या चाहती है। इन सिफ़ात का मतलब

समझने की ज़रूरत है। अगर इन सिफ़ात का सही मतलब अल्लाह तआ़ला हमारे ज़ेहनों में बिठा दें और इन सिफ़ात पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दें तो इन्शा-अल्लाह हम सब फ़लाह पाने वाले हो जायें। इसलिये ख़्याल आया कि इन सिफ़ात को तफ़सील से बयान कर दिया जाये। हो सकता है कि इनके बयान में चन्द हफ़्ते लग जायें, एक-एक सिफ़त का बयान एक-एक जुमा को होता जायेगा तो सारी सिफ़ात का इन्शा-अल्लाह बयान हो जायेगा।

पहली सिफ़तः ख़ुशू

पहली सिफ़त यह बयान फ़रमायी कि वे मोमिन फ़लाह पाने वाले हैं जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं। गोया कि फ़लाह की सबसे पहली शर्त और फ़लाह का सबसे पहला रास्ता यह है कि इनसान न सिर्फ़ यह कि नमाज़ पढ़े बल्कि नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करे। क्योंकि नमाज़ ऐसी चीज़ है कि कुरआन करीम में अल्लाह तआ़ला ने बासठ से ज़्यादा जगहों पर इसका हुक्म फ़रमाया है। हालाँकि अगर अल्लाह तआ़ला एक बार हुक्म दे देते तो भी काफ़ी था, क्योंकि अगर एक बार भी कुरआन करीम में किसी काम का हुक्म आ जाये तो उस काम को करना इनसान के ज़िम्मे फ़र्ज़ हो जाता है, लेकिन नमाज़ के बारे में बासठ बार हुक्म दिया कि नमाज़ क़ायम करो। इसके ज़रिये इस हुक्म की अहमियत बताना मक़सूद है कि नमाज़ को मामूली काम मत समझो और यह न समझो कि यह रोज़मर्रा की रूटीन की एक मामूली चीज़ है बल्कि मोमिन के लिये दुनिया और आख़िरत में कामयाबी के लिये सबसे अहम काम नमाज़ पढ़ना है, नमाज़ की हिफ़ाज़त करना है और नमाज़ को उसके अहकाम और आदाब के साथ अदा करना है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु का ख़िलाफ़त का ज़माना

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के दूसरे ख़लीफ़ा हैं। उनके ख़िलाफ़त के ज़माने में मुसलमानों को फ़ुतूहात (विजय) बहुत ज़्यादा हासिल हुईं। अल्लाह तआ़ला ने उन्हीं के हाथों क़ैसर व किस्रा (रोम और ईरान के बादशाहों) की शान व शौकतों का परचम झुकाया। क़ैसर व किस्रा के महल मुसलमानों के क़ब्ज़े में आये।

एक दिन मैंने हिसाब लगाया तो यह बात सामने आई कि हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हु के क़ब्ज़े में जो मुल्क थे उनका कुल क्षेत्रफल आज के पन्द्रह मुल्कों के बराबर है। यानी आज पन्द्रह देश उन जगहों पर क़ायम हैं जहाँ हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु तआ़ला अन्हु की हुकूमत थी।

यह ऐसे अमीरुल् मोमिनीन थे कि फ़रमाते थे कि अगर दरिया-ए-फ़ुरात के किनारे कोई कुत्ता भी भूखा मर जाये तो मुझे डर है कि मुझसे आख़िरत में यह सवाल होगा कि ऐ उमर! तेरी हुकूमत में एक कुत्ता भूखा मर गया था। इतनी ज़्यादा ज़िम्मेदारी का एहसास करने वाले थे। इनके ज़माने में अल्लाह तआ़ला ने मुसलमानों को ख़ुशहाली भी अ़ता फ़रमाई। कोई शख़्स इनकी हुकूमत में भूखा नहीं था, सब को इन्साफ़ उपलब्ध था। अ़द्ल व इन्साफ़ का दौर-दौरा था। मुसलमानों के साथ, ग़ैर-मुस्लिमों के साथ, मर्दों के साथ, औरतों के साथ, बूढ़ों के साथ, बच्चों के साथ इन्साफ़ का अ़ज़ीम नमूना हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु की हुकूमत ने पेश किया।

हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अन्हु का सरकारी फ़रमान

इतनी बड़ी हुकूमत के जितने हाकिम थे और सूबों में जितने

गवर्नर मुक़र्रर थे और विभिन्न शहरों में जो हाकिम मुक़र्रर थे, उन सब के नाम हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने एक सरकारी फ़रमान भेजा। यह फ़रमान हज़रत इमाम मालिक रहमतुल्लाहि अलैहि ने अपनी किताब "मोअत्ता" में असल लफ़्ज़ों में नक़ल किया है। इस फ़रमान में हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं:

إنَّ أهم أمركم عندي الصلاة فمن حفظها وحافظ عليها حفظ دينه ومن ضَيَّعَها فهو لما سواها اضيع . (مؤطا امام مالك، كتاب وقوت الصلاة)

यानी मेरे नज़दीक तुम्हारे कामों में सबसे अहम काम नमाज़ है। जिस शख़्स ने नमाज़ की हिफ़ाज़त की और इस पर हमेशा क़ायम रहा, उसने अपने दीन की हिफ़ाज़त की। और जिस शख़्स ने नमाज़ को ज़ाया किया, वह और चीज़ों को ज़्यादा ज़ाया करेगा।

ज़ाया करने के मायने यह भी हैं कि वह नमाज़ नहीं पढ़ेगा, और यह मायने भी हैं कि नमाज़ पढ़ेगा लेकिन ग़लत तरीक़े से पढ़ेगा, और ज़ाया करने के मायने यह भी हैं कि नमाज़ पढ़ने में लापरवाही से काम लेगा।

नमाज़ को ज़ाया करने से दूसरी चीज़ों का ज़ाया करना

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने गवर्नरों को यह फ़रमान इसलिये लिखकर भेजा कि आम तौर पर हाकिम के दिल में यह बात होती है कि मेरे सिर पर तो क़ौम की बहुत बड़ी ज़िम्मेदारियाँ हैं, लिहाज़ा अगर मैं इन ज़िम्मेदारियों की ख़ातिर किसी वक़्त की नमाज़ क़ुर्बान भी कर दूँ तो कोई हर्ज न होगा। क्योंकि मैं बड़े फ़रीज़े को अदा कर रहा हूँ। हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु हाकिमों की इस ग़लत-फ़हमी को दूर फ़रमा रहे हैं कि तुम यह मत समझना कि हाकिम बनने के बाद तुम्हारी ज़िम्मेदारियाँ नमाज़ से ज़्यादा बड़ा दर्जा रखती हैं, बल्कि मेरे नज़दीक सबसे अहम काम यह है कि तुम्हारी नमाज़ सही होनी चाहिये। अगर इस नमाज़ की हिफ़ाज़त करोगे

तो अल्लाह तआला की हिफ़ाज़त में रहोगे, और अगर तुमने नमाज़ को ज़ाया कर दिया तो तुम्हारे दूसरे काम उससे ज़्यादा ज़ाया होंगे और फिर हुकूमत का काम तुमसे ठीक नहीं चलेगा क्योंकि जब तुमने अल्लाह तआला के हुक्म को तोड़ दिया और अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ तुम्हारे साथ न रही तो फिर तुम्हारे काम कैसे दुरुस्त होंगे।

आजकल की एक गुमराह करने वाली सोच

आजकल हमारे समाज में एक गुमराही फैल गई है। वह यह है कि लोगों के दिमाग़ में यह बात आ गई है कि बहुत से काम ऐसे हैं जो नमाज़ से ज़्यादा अहमियत रखते हैं। ख़ास तौर पर यह बात उन लोगों के अन्दर पैदा हो गई है जो दीन के काम में मशग़ूल हैं। ये हज़रात यह समझते हैं कि हम बहुत बड़ा काम कर रहे हैं, लिहाज़ा चूँकि हम बड़ा काम कर रहे हैं, इसलिये अगर कभी इस बड़े काम की ख़ातिर नमाज़ छूट गई या नमाज़ में कमी आ गई या नमाज़ में कोई नुक़्स उत्पन्न हो गया तो कोई हर्ज की बात नहीं, क्योंकि हम इससे बड़े काम में लगे हुए हैं। हम दावत व तब्लीग़ के काम में और अमर बिल्-मारूफ़ (अच्छे कामों का हुक्म देने) और नही अनिल्-मुन्कर (बुरे कामों से रोकने) के काम में लगे हुए हैं। जिहाद के काम में लगे हुए हैं और सियासत के काम में यानी दीन को इस दुनिया में क़ायम करने के काम में लगे हुए हैं। इसलिये अगर हमारी जमाअत छूट जायेगी तो हम घर में नमाज़ पढ़ लेंगे और अगर नमाज़ का वक़्त निकल गया तो कज़ा पढ़ लेंगे। याद रखिए! यह बड़ी गुमराही भरी सोच है।

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ि० और गुमराही का इलाज

हज़रत उमर फ़ारूक़ रज़ियल्लाहु अन्हु से ज़्यादा दीन का काम करने वाला कौन होगा? उनसे बड़ा सियासत का झण्डा उठाने वाला कौन होगा? उनसे बड़ा जिहाद करने वाला कौन होगा? उनसे बड़ा दाई (दीन की दावत देने वाला) और उनसे बड़ा मुबल्लिग़ (तब्लीग़ करने

वाला) कौन होगा? लेकिन वह अपने तमाम हाकिमों को बाक़ायदा यह सरकारी फ़रमान जारी कर रहे हैं कि मेरे नज़दीक तुम्हारे सब कामों में सबसे अहम चीज़ नमाज़ है। अगर तुमने इसकी हिफ़ाज़त की तो तुम्हारे और काम भी दुरुस्त होंगे और अगर इसको ज़ाया कर दिया तो तुम्हारे और काम भी ख़राब होंगे।

अपने को काफ़िरों पर क़यास मत करना

तुम अपने आपको काफ़िरों पर क़यास मत करना। ग़ैर-मुस्लिमों पर क़यास मत करना और यह मत सोचना कि ग़ैर-मुस्लिम भी तो नमाज़ नहीं पढ़ रहे हैं मगर तरक़्क़ी कर रहे हैं। दुनिया में उनका डंका बज रहा है, ख़ुशहाली उनका मुक़द्दर बनी हुई है और दुनिया के अन्दर उनकी तरक़्क़ी के तराने पढ़े जा रहे हैं।

याद रखो! तुम अपने आपको उन पर क़यास मत करना। अल्लाह तआला ने मोमिन का मिज़ाज और मोमिन का तरीक़ा-ए-ज़िन्दगी काफ़िर के मुक़ाबले में बिल्कुल अलग क़रार दिया है। क़ुरआन करीम का कहना यह है कि मोमिन को फ़लाह नहीं हो सकती जब तक वह उन कामों पर अमल न करे जो यहाँ बयान किये गये हैं। उनमें से सबसे पहला काम नमाज़ है।

नमाज़ में ख़ुशू दरकार है

लिहाज़ा अगर तुम फ़लाह (कामयाबी) चाहते हो तो उसकी पहली शर्त नमाज़ की हिफ़ाज़त है। फिर यहाँ पर यह नहीं फ़रमाया कि वे लोग फ़लाह पायेंगे जो नमाज़ पढ़ते हैं, बल्कि यह फ़रमाया कि वे मोमिन फ़लाह पायेंगे जो अपनी नमाज़ में "ख़ुशू" इख़्तियार करने वाले हैं। ख़ुशू का क्या मतलब है? इसको अच्छी तरह समझ लीजिये। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से हम सबको "ख़ुशू" अता फ़रमा दे। आमीन।

“खुज़ू” के मायने

देखिये! दो लफ़्ज़ हैं जो आम तौर पर एक साथ बोले जाते हैं, एक “खुशू” दूसरा “खुज़ू”। चुनाँचे कहा जाता है कि फ़लाँ ने बड़े खुशू खुज़ू के साथ नमाज़ पढ़ी। खुशू “श” से है और खुज़ू “ज़” से है। दोनों के मायने में थोड़ा सा फ़र्क़ है। खुज़ू के मायने हैं “जिस्म को अल्लाह तआ़ला के आगे झुका देना” यानी जब नमाज़ में खड़े हुए तो जिस्म को अल्लाह तआ़ला के आगे झुका दिया। जिस्म को झुका देने का मतलब यह है कि जब नमाज़ में खड़े हुए तो तमाम आदाब का लिहाज़ रखते हुए खड़े हुए। रुकूअ़ किया तो उसके आदाब के साथ रुकूअ़ किया। सज्दा किया तो उसके आदाब के साथ सज्दा किया। गोया कि “अपने जिस्म के ज़ाहिरी अंगों को अल्लाह तआ़ला के सामने झुका देना” यह मायने हैं खुज़ू के। लिहाज़ा खुज़ू का तक़ाज़ा यह है कि जब आदमी नमाज़ में खड़ा हो तो उसके तमाम अंग सुकून के साथ और ख़ामोश हों और उनके अन्दर हरकत न हो। क़ुरआन करीम में अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

وَقُوْمُوْا لِلّٰهِ قَانِتِيْنَ

यानी नमाज़ में अल्लाह तआ़ला के लिये खड़े हों तो ‘क़ानित’ बनकर खड़े हों। क़ानित के मायने हैं सुकून के साथ खड़ा होना। लिहाज़ा नमाज़ में बिना ज़रूरत अपने जिस्म को हिलाना, बिना वजह बार-बार हाथ उठाकर अपने जिस्म या सिर को खुजाना, कपड़े दुरुस्त करना, ये सब बातें खुज़ू के ख़िलाफ़ हैं।

नमाज़ में अंगों को हरकत देना

दीन के आ़लिमों ने तो यहाँ तक लिखा है कि अगर कोई शख़्स नमाज़ के एक रुक्न जैसे ‘क़ियाम’ (खड़ा होने) में तीन बार बिना ज़रूरत अपने हाथ को हरकत देकर कोई काम करेगा तो उसकी नमाज़

ही टूट जायेगी। और अगर तीन बार से कम किया तो नमाज़ नहीं टूटेगी लेकिन नमाज़ की जो शान है और जो सुन्नत तरीक़ा है वह हासिल नहीं होगा। नमाज़ की बरकत हासिल नहीं होगी। आजकल हमारी नमाज़ों में यह ख़राबी कसरत से पाई जाती है कि जब नमाज़ में खड़े होते हैं तो अपने जिस्म को बिना वजह हरकत देते हैं। यह बिना वजह हरकत देना ख़ुशू के ख़िलाफ़ है और सुन्नत के और नमाज़ के आदाब के ख़िलाफ़ है।

तुम शाही दरबार में हाज़िर हो

जब तुम नमाज़ में खड़े होते हो तो अल्लाह तआ़ला के दरबार में खड़े होते हो। अगर किसी देश के प्रधानमंत्री का दरबार हो और उस दरबार में प्रेड हो रही हो तो उस प्रेड में जो शरीक होता है वह प्रेड के आदाब की पूरी बान्दी के साथ खड़ा होता है। वह यह नहीं करता कि कभी सिर खुजा रहा है, कभी हाथ खुजा रहा है, कभी कपड़े दुरुस्त कर रहा है, क्योंकि किसी बादशाह के दरबार में ये हरकतें नहीं की जातीं। जब दुनिया के आ़म बादशाहों का यह हाल है तो तुम तो अह्कमुल्-हाकिमीन (तमाम हाकिमों के हाकिम) के दरबार में खड़े हो जो सारे बादशाहों का बादशाह है, उसके दरबार में खड़े होकर ऐसी बेजा हरकतें करना बिल्कुल मुनासिब नहीं है, बल्कि उसके दरबार के तमाम आदाब का लिहाज़ करके खड़ा होना चाहिये।

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक और ख़ुशू

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मुबारक रहमतुल्लाहि अ़लैहि के बारे में रिवायतों में आता है कि गर्मी के मौसम में रात के वक़्त अपने घर की छत पर तहज्जुद की नमाज़ पढ़ा करते थे। उनके पड़ोसी उनको देखकर कहा करते थेः ऐसा मालूम होता है कि जैसे छत पर कोई लकड़ी खड़ी है, जिसमें कोई हरकत नहीं होती। लिहाज़ा जब अल्लाह

तआ़ला के दरबार में खड़े हो तो 'क़ानित' बनकर और अपने आपको अल्लाह तआ़ला के दरबार में हाज़िर समझ कर खड़े हो।

गर्दन झुकाना ख़ुजू नहीं

नमाज़ में खड़े होने का जो सुन्नत तरीक़ा है, उसके मुताबिक़ खड़ा होना ही ख़ुजू है। बाज़ लोग ख़ुजू पर अ़मल करते हुए क़ियाम (नमाज़ में खड़ा होने) की हालत में बहुत झुक जाते हैं और सीना भी झुका लेते हैं। यह तरीक़ा सुन्नत के ख़िलाफ़ है। सुन्नत का तरीक़ा यह है कि क़ियाम की हालत में आदमी सीधा खड़ा हो और गर्दन इस हद तक नीची हो कि निगाह सज्दे की जगह पर हो। इससे ज़्यादा गर्दन झुका लेना कि ठोड़ी सीने से लग जाये, यह सुन्नत के ख़िलाफ़ है। और बिना वजह नमाज़ के अन्दर हरकत करना भी ख़िलाफ़े सुन्नत है। हाँ अगर कभी बहुत ज़्यादा ख़ारिश हो रही हो तो खुजाना जायज़ है, लेकिन बिना वजह हरकत करना सुन्नत के ख़िलाफ़ है। बहरहाल! ख़ुजू के मायने हैं "अपने जिस्म को अल्लाह तआ़ला के लिये झुका लेना।"

ख़ुशू के मायने

दूसरा लफ़्ज़ है "ख़ुशू" इसके मायने हैं "दिल को अल्लाह तआ़ला के लिए झुका लेना" यानी दिल को अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मुतवज्जह कर लेना। दोनों का मज्मूआ ख़ुशू-ख़ुजू कहलाता है। इसलिये कहा जाता है कि नमाज़ ख़ुशू-ख़ुजू के साथ पढ़ो। ये दोनों काम ज़रूरी हैं।

ख़ुजू का ख़ुलासा

आज मैंने मुख़्तसर तौर पर "ख़ुजू" के बारे में अ़र्ज़ कर दिया। इसका ख़ुलासा यह है कि नमाज़ का जो सुन्नत तरीक़ा है, उसके मुताबिक़ अपने जिस्मानी अंगों को ले आओ और बिना ज़रूरत जिस्म के हिस्सों को हरकत न दो।

अब सवाल यह है कि किस तरह सुन्नत के मुताबिक़ जिस्म के अंगों को लायें। इसके लिये मेरा एक छोटा सा रिसाला (किताब) है जो "नमाज़ें सुन्नत के मुताबिक़ पढ़िये" के नाम से छप गया है। अंग्रेज़ी में भी उसका तर्जुमा हो गया है। उस रिसाले को सामने रखिये और देखिये कि अपने अंगों को नमाज़ के अन्दर रखने के क्या आदाब हैं, अगर उस पर अमल कर लिया जाये तो खुज़ू हासिल हो जायेगा। खुशू किस तरह हासिल होगा? इसके बारे में इन्शा-अल्लाह आईन्दा जुमा में अर्ज़ करूँगा। अल्लाह तआला मुझे और आप सबको इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नमाज़ की अहमियत

और उसका सही तरीक़ा

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّاٰتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَا شَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۴)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبی الكريم ونحن علی ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

तम्हीद

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! जो आयतें मैंने आपके सामने तिलावत कीं, ये सूरः मोमिनून की आयतें हैं। इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने उन मोमिनों की सिफ़ात बयान फ़रमायी हैं जिनसे फ़लाह (कामयाबी) का वायदा किया गया है। अगर ये सिफ़तें किसी को हासिल हो जायें तो उसको फ़लाह हासिल हो गयी यानी उसको दुनिया

में भी कामयाबी हासिल हो गयी और आख़िरत में भी कामयाबी हासिल हो गयी।

ख़ुशू और ख़ुज़ू का मतलब

अल्लाह तआ़ला ने पहली सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि फ़लाह पाने वाले मोमिन बन्दे वे हैं जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करते हैं। मोमिन के तमाम कामों में सबसे ज़्यादा अहम काम नमाज़ की अदायगी है। इसलिए यहाँ पर अल्लाह तआ़ला ने मोमिन की सिफ़तों में सबसे पहले "नमाज़ में ख़ुशू" की सिफ़त ज़िक्र फ़रमायी है।

आ़म तौर पर दो लफ़्ज़ नमाज़ की विषेशताओं के सिलसिले में बोले जाते हैं- एक ख़ुज़ू और दूसरा ख़ुशू। "ख़ुज़ू" 'ज़' से है और "ख़ुशू" 'श' से है। "ख़ुज़ू" के मायने हैं: इनसान का अपने ज़ाहिरी अंगों को अल्लाह तआ़ला के सामने झुका देना। और "ख़ुशू" के मायने हैं: इनसान का अपने दिल को अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मुतवज्जह कर देना। नमाज़ में दोनों चीज़ें मतलूब (दरकार) हैं, यानी नमाज़ में ख़ुज़ू भी होना चाहिए और ख़ुशू भी होना चाहिए।

'ख़ुज़ू' की हक़ीक़त

"ख़ुज़ू" के लफ़्ज़ी मायने हैं "झुक जाना" यानी अपने आपको नमाज़ में अल्लाह तआ़ला के सामने इस तरह खड़ा करना कि तमाम (बदन के) अंग अल्लाह तआ़ला के सामने झुके हुए हों। ग़फ़लत और लापरवाही की हालत न हो बल्कि अल्लाह तआ़ला के सामने अदब के साथ खड़ा हो। अब यह देखना है कि नमाज़ में खड़े होने का कौनसा तरीक़ा अदब वाला है और कौनसा बे-अदब है? इसका फ़ैसला हम अपनी अ़क्ल से नहीं कर सकते बल्कि इसकी तफ़सील ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बयान फ़रमा दी है।

लिहाज़ा नमाज़ पढ़ने का हर वह तरीक़ा जो नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के बताये हुए तरीक़े के मुताबिक़ हो, वह

अदब वाला है और जो तरीक़ा आपके बताये हुए तरीक़े के ख़िलाफ़ हो, वह बे-अदब है। इसलिए नमाज़ उस तरीक़े से पढ़नी चाहिए जिस तरीक़े से रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सिखायी। एक बार नमाज़ के बाद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम से फ़रमायाः

صَلُّوا كَمَا رَأَيْتُمُونِي أُصَلِّي

यानी तुम उसी तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह तुमने मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखा है।

लिहाज़ा जो तरीक़ा नमाज़ पढ़ने का ख़ुद नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इख़्तियार फ़रमाया और जिस तरीक़े की आपने तालीम फ़रमायी, वह तरीक़ा अदब वाला है, कोई दूसरा शख़्स अपनी अक़्ल से उसमें कमी और इज़ाफ़ा नहीं कर सकता।

हज़राते ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन और नमाज़ की तालीम

यही वजह है कि हज़राते सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम इस बात का एहतिमाम करते थे कि जो तरीक़ा हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बता दिया उसको याद रखें। उसको महफ़ूज़ रखें और उसको दूसरों तक पहुँचायें और अपनी नमाज़ों को उसके मुताबिक़ बनायें। चुनाँचे हज़राते ख़ुलफ़ा-ए-राशिदीन हज़रत अबू बक्र, हज़रत उमर, हज़रत उस्मान और हज़रत अली रज़ियल्लाहु अन्हुम जिनकी आधी दुनिया से ज़्यादा पर हुकूमत थी, लेकिन जहाँ कहीं जाते, वहाँ पर लोगों को बताते कि नमाज़ इस तरह पढ़ा करो और ख़ुद नमाज़ पढ़कर बताते कि आओ! मैं तुम्हें बताऊँ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम किस तरह नमाज़ पढ़ा करते थे ताकि तुम्हारा तरीक़ा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बताये हुए तरीक़े के मुताबिक़ हो जाये।

बदन के अंगों को दुरुस्त करने का नाम ख़ुज़ू है

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन मसऊ़द रज़ि० अपने शागिर्दों से फ़रमाते:

الااصلی بکم صلاة رسول الله صلی الله علیه وسلم؟

क्या मैं तुम्हें वह नमाज़ पढ़कर न दिखाऊँ जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पढ़ा करते थे।

लिहाज़ा नमाज़ में ख़ुज़ू भी मतलूब है कि उस नमाज़ी के सारे आज़ा (बदन के हिस्से) सुन्नत के मुताबिक़ अन्जाम पायें। नमाज़ी के ज़ाहिरी अंग सुन्नत के मुताबिक़ बना लेना यह ख़ुशू की तरफ़ जाने की पहली सीढ़ी है। और जब आदमी अपने जिस्मानी अंगों को दुरुस्त कर लेगा और खड़े होने, रुकूअ़ करने, सज्दा करने और बैठने में वह तरीक़ा इख़्तियार कर लेगा जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का तरीक़ा है तो यह अल्लाह तआ़ला की तरफ़ दिल मुतवज्जह करने की पहली सीढ़ी है।

नमाज़ में ख़्यालात आने की एक वजह

आज हमें अक्सर यह शिकवा रहता है कि नमाज़ में ख़्यालात इधर-उधर रहते हैं। कभी कोई ख़्याल आ रहा है, कभी कोई ख़्याल आ रहा है, और नमाज़ में दिल नहीं लगता। इसकी एक बड़ी वजह यह है कि हमने नमाज़ का ज़ाहिरी तरीक़ा सुन्नत के मुताबिक़ नहीं बनाया और न ही उसका एहतिमाम किया। बस जिस तरह बचपन में नमाज़ पढ़ना सीख ली थी, उसी तरह पढ़ते चले आ रहे हैं। यह फ़िक्र नहीं कि वास्तव में यह नमाज़ सुन्नत के मुताबिक़ है या नहीं। यह नमाज़ इतना अहम फ़रीज़ा है कि मसाइल की किताबों में इस पर सैकड़ों पेज लिखे हुए हैं जिनमें नमाज़ के एक-एक रुक्न को तफ़सील से बयान किया गया है, कि तकबीरे-तहरीमा (१) के लिए हाथ कैसे

(१) नमाज़ शुरू करते वक़्त जो तकबीर कही जाती है उसको तकबीरे-तहरीमा कहते हैं। मुहम्मद इमरान क़ासमी

उठायें। क़ियाम (खड़ा होना) किस तरह करें, रुकूअ़ किस तरह किया जाये, सज्दा किस तरह किया जाये, क़ुअ़दा किस तरह किया जाये। इन सबकी तफ़सीलात किताबों में मौजूद हैं; लेकिन उन तरीक़ों के सीखने की तरफ़ ध्यान नहीं। बस जिस तरह क़ियाम करते चले आ रहे हैं, उसी तरह क़ियाम कर लिया, जिस तरह अब तक रुकूअ़-सज्दा करते चले आ रहे हैं उसी तरह रुकूअ़-सज्दा कर लिया। लेकिन उनको ठीक ठीक सुन्नत के मुताबिक़ अन्जाम देने की फ़िक्र नहीं।

हज़रत मुफ़्ती साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि और नमाज़ का एहतिमाम

मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि अपनी उम्र के आख़िरी दौर में फ़रमाया करते थे कि आज मुझे कुरआन व हदीस और फ़िक़ा (मसले-मसाइल) पढ़ते-पढ़ाते हुए और फ़तवे लिखते हुए साठ साल हो गये हैं और इन कामों के अ़लावा कोई और मश्ग़ला नहीं है लेकिन साठ साल गुज़रने के बाद अब भी कई बार नमाज़ में ऐसी स्थिति आ जाती है कि मुझे पता नहीं चलता कि अब मैं क्या करूँ? फिर नमाज़ की किताब उठाकर देखनी पड़ती है कि मेरी नमाज़ दुरुस्त हुई या नहीं? मेरा तो यह हाल है, लेकिन मैं लोगों को देखता हूँ कि सारी उम्र नमाज़ पढ़ते चले जा रहे हैं और कभी किसी वक़्त दिल में यह सवाल ही पैदा नहीं होता कि मेरी नमाज़ सुन्नत के मुताबिक़ हुई या नहीं? हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के तरीक़े के मुताबिक़ हुई या नहीं? कभी ज़ेहन में यह सवाल पैदा नहीं होता। इसकी वजह यह है कि हमारे ज़ेहनों में इस बात की अहमियत ही नहीं कि अपनी नमाज़ों को सुन्नत के मुताबिक़ बनायें। इसलिए यह ज़रूरी है कि आदमी सबसे पहले नमाज़ का तरीक़ा दुरुस्त करे।

कियाम का सही तरीका

अब मैं मुख़्तसर तौर पर नमाज़ का सही तरीक़ा अर्ज़ कर देता हूँ। इन आयतों की तफ़सीर इन्शा-अल्लाह अगले जुमों में अर्ज़ करूँगा।

जब आदमी नमाज़ के लिए खड़ा हो तो इसमें सुन्नत यह है कि आदमी का पूरा जिस्म क़िब्ला-रुख़ हो। लिहाज़ा जब खड़े हों तो सबसे पहले क़िब्ला-रुख़ होने का एहतिमाम कर लें। सीना भी क़िब्ले की तरफ़ हो, अगर किसी वजह से सीना थोड़ी देर के लिए क़िब्ले की तरफ़ से हट गया तो नमाज़ तो हो जायेगी, क्योंकि अल्लाह तआ़ला ने यह करम फ़रमाया है कि इन छोटी-छोटी बातों की वजह से यह नहीं कहते कि जाओ हम तुम्हारी नमाज़ क़बूल नहीं करते। लिहाज़ा नमाज़ तो हो जायेगी लेकिन उस नमाज़ में सुन्नत का नूर हासिल न होगा, सुन्नत की बरकत हासिल न होगी, क्योंकि इस तरह खड़ा होना सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

इसी तरह पाँव की उंगलियों का रुख़ अगर क़िब्ले की तरफ़ हो जाये तो जिस्म का एक-एक हिस्सा क़िब्ले की तरफ़ हो जायेगा। अब बताईए कि अगर इनसान इस तरह सुन्नत के मुताबिक़ पाँव रखे तो इसमें क्या तकलीफ़ हो जायेगी? कोई परेशानी होगी? या कोई बीमारी लग जायेगी? कुछ भी नहीं, सिर्फ़ तवज्जोह और ध्यान की बात है। क्योंकि तवज्जोह, ध्यान और एहतिमाम नहीं है, इसलिए यह ग़लती होती है। अगर ज़रा सा ध्यान कर लें तो सुन्नत के मुताबिक़ कियाम हो जायेगा और उसके नतीजे में वह नमाज़ ख़ुशू के दायरे में आ जायेगी और उस नमाज़ में सुन्नत के अनवार व बरकतें हासिल हो जायेंगी।

नीयत करने का मतलब

यहाँ एक मसले की वज़ाहत (तफ़सील और व्याख्या) कर दूँ। वह यह कि नीयत नाम है दिल से इरादा करने का, बस। आगे ज़बान से

नीयत करना कोई ज़रूरी नहीं। चुनाँचे आज बहुत से लोग नीयत के ख़ास शब्द ज़बान से अदा करने को ज़रूरी समझते हैं, जैसे चार रक्अ़त नमाज़ फ़र्ज़, वक़्त ज़ोहर का, मुँह मेरा काबा शरीफ़ की तरफ़, पीछे पेश इमाम के, वास्ते अल्लाह तआ़ला के 'अल्लाहु अक्बर'। ज़बान से यह नीयत करने को लोगों ने फ़र्ज़ व वाजिब समझ लिया है। गोया अगर किसी ने ये शब्द न कहे तो उसकी नमाज़ ही नहीं हुई।

यहाँ तक देखा गया है कि इमाम साहिब रुकूअ़ में हैं, मगर वह साहिब अपनी नीयत के तमाम शब्द अदा करने में लगे हुए हैं और इसके नतीजे में रक्अ़त भी चली जाती है। हालाँकि ये शब्द ज़बान से अदा करना कोई ज़रूरी और फ़र्ज़ व वाजिब नहीं, जब दिल में यह इरादा है कि फ़लाँ नमाज़ इमाम साहिब के पीछे पढ़ रहा हूँ। बस यह इरादा काफ़ी है।

तकबीरे-तहरीमा के वक़्त हाथ उठाने का तरीक़ा

इसी तरह तक्बीरे-तहरीमा कहते वक़्त हाथ कानों तक उठाते हैं तो इसकी कोई परवाह नहीं होती कि उनको सुन्नत के मुताबिक़ उठायें। बल्कि जिस तरह चाहते हैं हाथ उठाकर "अल्लाहु अक्बर" कहकर नमाज़ शुरू कर देते हैं।

सुन्नत तरीक़ा यह है कि हथेली का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ हो और अंगूठों के सिरे कानों की लौ के बराबर आ जायें। यह सही तरीक़ा है। इसके अ़लावा जो दूसरे तरीक़े हैं, जैसे बाज़े लोग हथेलियों का रुख़ कानों की तरफ़ कर देते हैं, बाज़े लोग आसमान की तरफ़ कर देते हैं, यह सुन्नत तरीक़ा नहीं। अगर इस तरीक़े से हाथ उठाकर नमाज़ शुरू कर दी तो नमाज़ तो अदा हो जायेगी लेकिन सुन्नत की बरकत और सुन्नत का नूर हासिल न होगा। सिर्फ़ ध्यान और तवज्जोह की बात है, इस तवज्जोह की वजह से यह फ़ायदा हासिल हो सकता है।

हाथ बाँधने का सही तरीक़ा

इसी तरह हाथ बाँधने का मामला है। कोई सीने पर बाँध लेता है, कोई बिल्कुल नीचे कर देता है और कोई कलाई पर हथेली रख देता है। ये सब तरीक़े सुन्नत के ख़िलाफ़ हैं। सुन्नत तरीक़ा यह है कि आदमी अपने दाहिने हाथ की छोटी उंगली और अंगूठे का हल्क़ा (दायरा) बनाकर पहुँचे को पकड़ ले और दरमियान की तीन उंगलियाँ बायें हाथ की कलाई पर रख ले और नाफ़ के ज़रा नीचे हाथ बाँध ले। यह है मसनून तरीक़ा। इस तरीक़े पर अमल करने से सुन्नत की बरकत भी हासिल होगी और नूर भी हासिल होगा।

अगर इस तरीक़े के ख़िलाफ़ वैसे ही हाथ पर हाथ रख दोगे तो कोई मुफ़्ती यह नहीं कहेगा कि नमाज़ नहीं हुई, नमाज़ दुरुस्त हो जायेगी, लेकिन सुन्नत के तरीक़े पर अमल न होगा। बस ज़रा सी तवज्जोह और ध्यान की बात है।

क़िराअत का सही तरीक़ा

हाथ बाँधने के बाद 'सना' यानी 'सुब्हानकल्लाहुम्-म ......' पढ़े। फिर अल्हम्दु की सूरत पढ़े और कोई और सूरत पढ़े। एक नमाज़ी ये सब चीज़ें नमाज़ में पढ़ तो लेता है लेकिन उर्दू के लहजे में पढ़ता है। यानी उसका लब-व-लहजा और उसकी अदायगी सुन्नत के मुताबिक़ नहीं होती और पढ़ने का जो सही तरीक़ा है वह हासिल नहीं होता। सही तरीक़ा यह है कि क़ुरआन करीम को तजवीद (क़ुरआन पढ़ने के जो क़वायद और उसूल हैं उन) के साथ और उसके हर हर्फ़ को उसके सही 'मख़्रज' (हर्फ़ के अदा होने के सही स्थान) से अदा किया जाये।

लोग यह समझते हैं कि तजवीद और क़िराअत सीखना बड़ा मुश्किल काम है, हालाँकि इसका सीखना कुछ मुश्किल नहीं। क्योंकि क़ुरआन करीम में जो हुरूफ़ इस्तेमाल हुए हैं, वह कुल २६ हर्फ़ हैं और उनमें से अक्सर हर्फ़ ऐसे हैं जो उर्दू में भी इस्तेमाल होते हैं।

उनको सही तौर पर अदा करना तो बहुत आसान है, अलबत्ता सिर्फ़ आठ-दस हर्फ़ ऐसे हैं जिनकी मश्क़ करनी होगी।

मिसाल के तौर पर "ث" 'सा' किस तरह अदा किया जाये। "ح" 'हा' किस तरह अदा की जाये और "ض" 'ज़ॉद' और "ظ" 'ज़ोए' में क्या फ़र्क़ है। अगर आदमी इन चन्द हुरूफ़ की किसी अच्छे क़ारी से मश्क़ कर ले कि जब "ح" अदा करे तो "ه" ज़बान से न निकाले। क्योंकि हमारे यहाँ "ح" और "ه" की अदायगी में फ़र्क़ नहीं किया जाता, लेकिन अ़रबी भाषा में दोनों के दरमियान बड़ा फ़र्क़ है। बहुत सी बार एक को दूसरे की जगह पढ़ लेने से मायने बदल जाते हैं। इसलिए इन हुरूफ़ की मश्क़ करना ज़रूरी है। यह कोई मुश्किल काम नहीं, लेकिन चूँकि हमें इसकी फ़िक्र नहीं है इसलिए इसकी तरफ़ तवज्जोह और ध्यान नहीं है।

खुलासा

अपने मौहल्ले की मस्जिद के इमाम साहिब या क़ारी साहिब के पास जाकर चन्द दिन तक मश्क़ कर लेंगे तो इन्शा-अल्लाह तआ़ला तमाम हुरूफ़ की अदायगी दुरुस्त् हो जायेगी और नमाज़ सुन्नत के मुताबिक़ हो जायेगी।

आज ये चन्द बातें क़ियाम और तक्बीरे-तहरीमा से लेकर सूरः फ़ातिहा तक की अ़र्ज़ कर दीं, बाक़ी ज़िन्दगी रही तो इन्शा-अल्लाह अगले जुमा को अ़र्ज़ करूँगा। अल्लाह तआ़ला मुझे और आप सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

नमाज़ का सुन्नत तरीक़ा

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّا بَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْعٰدُوْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۷)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين ○

तम्हीद

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! सूरः मोमिनून की शुरू की चन्द आयतें मैंने आपके सामने तिलावत कीं, जिनकी तश्रीह (व्याख्या) का सिलसिला मैंनें दो हफ़्ते पहले शुरू किया है। इन आयतों में अल्लाह तआला ने उन मोमिनों की सिफ़तें बयान फ़रमाई हैं जिनके बारे में कुरआन करीम ने फ़रमाया कि वे कामयाब हैं और जिनको दुनिया और आख़िरत में कामयाबी नसीब होगी। उनमें से सबसे पहली

सिफ़त जिसका इन आयतों में बयान किया गया, वह नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करना है। चुनाँचे फ़रमाया कि वे मोमिन कामयाबी पाने वाले हैं जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं।

जैसा कि मैंने अर्ज़ किया था कि आम तौर पर दो लफ़्ज़ इस्तेमाल होते हैं- एक "ख़ुशू" और दूसरा "ख़ुज़ू"। ख़ुशू के मायने हैं "दिल को अल्लाह तआला की तरफ़ मुतवज्जह करना" और "ख़ुज़ू" के मायने हैं, बदन के अंगों को सुन्नत के मुताबिक़ अल्लाह तआला के आगे झुका देना। पिछले जुमा को यह बयान शुरू किया था कि नमाज़ में आज़ा (बदन के हिस्से) किस तरह रखने चाहियें जिसके नतीजे में "ख़ुज़ू" हासिल हो। तक्बीरे-तहरीमा का तरीक़ा और हाथ बाँधने का मसनून तरीक़ा और क़िराअत का सही तरीक़ा अर्ज़ कर दिया था।

क़ियाम का मसनून तरीक़ा

क़ियाम यानी नमाज़ में खड़े होने का मसनून (सुन्नत) तरीक़ा यह है कि आदमी बिल्कुल सीधा खड़ा हो और निगाहें सज्दे की जगह पर हों। सज्दे की जगह की तरफ़ नज़र होने की वजह से इनसान के जिस्म का ऊपर वाला थोड़ा सा हिस्सा आगे की तरफ़ झुका हुआ होगा, इससे ज़्यादा झुकना अच्छा नहीं। चुनाँचे बाज़ लोग नमाज़ में बहुत ज़्यादा झुक जाते हैं और उसके नतीजे में कमर में झुकाव आ जाता है। यह तरीक़ा पसन्दीदा (अच्छा) नहीं, बिल्कुल सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

लिहाज़ा क़ियाम के वक़्त इस तरह सीधा खड़ा होना चाहिये कि कमर में ख़म (झुकाव) न आये, अलबत्ता सिर थोड़ा सा झुका हुआ हो ताकि नज़रें सज्दे की जगह पर हो जायें। यह खड़े होने का मसनून तरीक़ा है।

बे-हरकत खड़े हों

और जब खड़ा हो तो आदमी यह कोशिश करे कि बे-हरकत

खड़ा हो और जिस्म में हरकत न हो। क़ुरआन करीम का इरशाद है:

وَقُومُوا لِلّٰهِ قَانِتِينَ

यानी अल्लाह तआ़ला के सामने नमाज़ में खड़े हों तो बे-हरकत खड़े हों। अक्सर लोग इसका ख़्याल नहीं करते। जब खड़े होते हैं तो जिस्म को आगे पीछे हरकत देते रहते हैं। बिना वजह कभी अपने हाथों को हरकत देते हैं, कभी पसीना पौंछते हैं, कभी कपड़े ठीक करते हैं। ये सारी बातें उस कैफ़ियत के ख़िलाफ़ हैं जिसका क़ुरआन करीम ने हमें और आपको हुक्म दिया है।

तुम तमाम हाकिमों के हाकिम के दरबार में खड़े हो

जब नमाज़ में खड़े हो तो यह तसव्वुर करो कि अल्लाह तआ़ला के दरबार में खड़े हो। जब आदमी दुनिया के किसी मामूली हाकिम के सामने भी खड़ा होता है तो अदब का प्रदर्शन करता है। कोई बद-तमीज़ी नहीं करता, लापरवाही से खड़ा नहीं होता। तो जब तुम अह्कमुल्-हाकिमीन (तमाम हाकिमों के हाकिम) के सामने पहुँचे हो तो वहाँ पर लापरवाही का प्रदर्शन करना और ढीला-ढाला खड़ा होना और अपने हाथ-पैर को बिना वजह हरकत देना, यह सब नमाज़ के अदब के बिल्कुल ख़िलाफ़ है और सुन्नत के भी ख़िलाफ़ है। फ़ुक़हा-ए-किराम ने यहाँ तक लिखा है कि अगर कोई शख़्स एक रुक्न में बिना ज़रूरत हाथ को तीन बार हरकत देगा तो उसकी नमाज़ ख़राब हो जायेगी। इसकी तफ़सील मैंने पिछले जुमों में अर्ज़ कर दी थी।

रुकूअ़ का सुन्नत तरीक़ा

क़ियाम के बाद रुकूअ़ का मर्हला आता है। जब आदमी रुकूअ़ में जाये तो उसकी कमर सीधी हो जाये। बाज़ लोग रुकूअ़ में अपनी कमर को बिल्कुल सीधा नहीं करते, यह सुन्नत के ख़िलाफ़ है, बल्कि कई उलेमा के नज़दीक इसकी वजह से नमाज़ फ़ासिद हो जाती है।

लिहाज़ा कमर बिल्कुल सीधी हो और हाथ की उंगलियों को खोल कर गट्टे पकड़ लेने चाहिएँ। और गट्टे भी सीधे होने चाहियें इसमें भी ख़म (झुकाव) न हो और ढीले-ढाले न हों, बल्कि कसे हुए हों। यह रुकूअ़ का सुन्नत तरीक़ा है। इस तरीक़े में जितनी कमी आयेगी उतनी ही सुन्नत से दूरी होगी, और नमाज़ का नूर और बरकतों में कमी आयेगी।

"क़ौमा" का सुन्नत तरीक़ा

रुकूअ़ के बाद जब आदमी "समिअ़ल्लाहु लिमन् हमिदह्" कहते हुए खड़ा होता है, उसको "क़ौमा" कहा जाता है। इस क़ौमा की एक सुन्नत आजकल बिल्कुल ही छोड़ दी गई हैं। वह यह कि इस क़ौमा में भी आदमी को कुछ देर खड़ा होना चाहिये। यह नहीं कि अभी पूरी तरह खड़े भी न होने पाये थे कि सज्दे में चले गये।

एक हदीस में एक सहाबी बयान फ़रमाते हैं कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मामूल यह था कि जितनी देर आप रुकूअ़ में रहते, उतनी ही देर क़ौमा में भी रहते। मिसाल के तौर पर अगर रुकूअ़ में पाँच बार "सुब्हा-न रब्बियल् अ़ज़ीम" कहा तो जितना वक़्त पाँच बार "सुब्हा-न रब्बियल् अ़ज़ीम" कहने में लगा और वह वक़्त आपने रुकूअ़ में गुज़ारा, तक़रीबन उतना ही वक़्त आप क़ौमा में गुज़ारते थे। उसके बाद सज्दे में तशरीफ़ ले जाते। आज हम लोग रुकूअ़ से उठते हुए ज़रा सी देर में "समिअ़ल्लाहु लिमन् हमिदह्" कहते हैं और फिर फ़ौरन सज्दे में चले जाते हैं, यह तरीक़ा सुन्नत के मुताबिक़ नहीं।

"क़ौमा" की दुआ़यें

और हदीस शरीफ़ में आता है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम क़ौमा में ये अलफ़ाज़ पढ़ा करते थे।

رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ مِلْأَ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَمِلْأَ مَا بَيْنَهُمَا وَمِلْأَ مَا شِئْتَ مِنْ شَيْءٍ بَعْدُ.

रब्बना लकल् हम्दु मिल्अस्समावाति वल्-अर्ज़ि व मिल्-अ मा बैनहुमा व मिल्-अ मा शिअ्-त मिन् शैइन् बअ्दु।

कुछ हदीसों में ये अलफ़ाज़ आये हैं:

رَبَّنَا لَكَ الْحَمْدُ حَمْدًا كَثِيْرًا طَيِّبًا مُبَارَكًا فِيْهِ كَمَا يُحِبُّ رَبُّنَا وَيَرْضٰى.

रब्बना लकल् हम्दु हम्दन् कसीरन् तय्यिबन् मुबारकन् फ़ीहि कमा युहिब्बु रब्बुना व यर्ज़ा।

इससे पता चला कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इतनी देर क़ौमे में खड़े रहते जितनी देर में ये अलफ़ाज़ अदा फ़रमाते। लिहाज़ा क़ौमा में सिर्फ़ क़ियाम का इशारा करके सज्दे में चले जाना दुरुस्त नहीं। बल्कि अगर कोई आदमी सीधा खड़ा भी नहीं हुआ था कि वहीं से सज्दे में चला गया तो नमाज़ को दोबारा पढ़ना ज़रूरी हो जाता है। लिहाज़ा सीधा खड़ा होना ज़रूरी है।

एक साहिब की नमाज़ का वाक़िआ

हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ रखते थे। एक साहिब आये और मस्जिदे नबवी में नमाज़ पढ़नी शुरू कर दी। लेकिन नमाज़ इस तरह पढ़ी कि रुकूअ में गये तो ज़रा सा इशारा करके खड़े हो गये और क़ौमा में ज़रा सा इशारा करके सज्दे में चले गये और सज्दे में गये तो ज़रा सी देर में सज्दा करके खड़े हो गये। इस तरह उन्होंने जल्दी-जल्दी अरकान अदा करके नमाज़ मुकम्मल कर ली, और फिर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर होकर सलाम अर्ज़ किया। जवाब में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमायाः

وعليك السلام، قم فصل فانك لم تصل

यानी सलाम का जवाब देने के बाद फ़रमाया कि खड़े होकर नमाज़ पढ़ो, इसलिये कि तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी। वह साहिब उठकर गये और दोबारा नमाज़ पढ़ी, लेकिन दोबारा भी उसी तरह नमाज़ पढ़ी जिस तरह पहली बार पढ़ी थी, इसलिये कि उनको उसी तरह पढ़ने की आदत पड़ी हुई थी। नमाज़ पढ़ने के बाद फिर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए और आकर सलाम किया। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने सलाम का जवाब दिया और फ़रमाया कि:

قم فصل فانك لم تصل

जाओ नमाज़ पढ़ो क्योंकि तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी।

तीसरी बार फिर उन्होंने जाकर उसी तरह नमाज़ पढ़ी और वापस आये तो फिर आपने उनसे फ़रमाया कि:

قم فصل فانك لم تصل

जाओ नमाज़ पढ़ो, क्योंकि तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी।

जब तीसरी बार आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे यही बात इरशाद फ़रमाई तो उन साहिब ने अर्ज़ किया कि या रसूलल्लाह! आप मुझे बता दीजिये कि मैंने क्या ग़लती की है, और मुझे किस तरह नमाज़ पढ़नी चाहिये? उसके बाद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको नमाज़ का सही तरीक़ा बताया।

शुरू ही में नमाज़ का तरीक़ा बयान न करने की वजह

सवाल पैदा होता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे यह तो फ़रमा दिया कि जाओ नमाज़ पढ़ो, तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी। पहली बार में उनको नमाज़ का सही तरीक़ा क्यों नहीं बताया? इसकी वजह यह है कि दर हक़ीक़त उन साहिब को ख़ुद पूछना चाहिये था कि या रसूलल्लाह! मैं नमाज़ पढ़कर आया हूँ। आप फ़रमा रहे हैं कि नमाज़ नहीं पढ़ी मुझसे क्या ग़लती हुई? जब उन्होंने नहीं पूछा तो

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने भी नहीं बताया। इसके ज़रिये हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने यह उसूल बतला दिया कि जब तक इनसान के दिल में खुद तलब पैदा न हो, उसको तालीम देना बहुत सी बार बेकार हो जाता है।

हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इस इन्तिज़ार में थे कि उनके अन्दर खुद तलब पैदा हो, जब तीसरी बार हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको वापस लौटा दिया, उस वक़्त उन्होंने कहा कि:

يارسول الله صلى الله عليه وسلم : أرني وعلمني

या रसूलल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम! आप मुझे सिखाईये कि किस तरह नमाज़ पढ़नी चाहिये।

उस वक़्त फिर आपने उनको नमाज़ पढ़ना सिखाया।

इत्मीनान से नमाज़ अदा करो

बहरहाल! एक तरफ़ हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को उनकी तलब का इन्तिज़ार था कि जब उनके अन्दर तलब पैदा हो तो उनको बताया जाये। दूसरी तरफ़ यह बात थी कि आपने सोचा कि जब यह दो तीन बार नमाज़ दोहरायेंगे और उसके बाद नमाज़ का सही तरीक़ा सीखेंगे तो वह तरीक़ा दिल में ज़्यादा जम जायेगा और इस बताने की अहमियत ज़्यादा होगी। इसलिये आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तीन बार उनको नमाज़ पढ़ने दिया। उसके बाद हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बताया कि जब नमाज़ पढ़ो तो हर रुक्न को उसके सही तरीक़े पर अदा करो। जब क़िराअत करो तो इत्मीनान से तिलावत करो। जब खड़े हो तो इत्मीनान के साथ खड़े हो, और जब रुकूअ में जाओ तो इत्मीनान के साथ रुकूअ करो। यहाँ तक कि तुम्हारी कमर सीधी हो जाये। जब रुकूअ से खड़े हो तो इत्मीनान के साथ इस तरह सीधे खड़े हो जाओ कि कमर में ख़म (झुकाव और

झोल) बाक़ी न रहे। उसके बाद जब सज्दे में जाओ तो इत्मीनान के साथ सज्दा करो और जब सज्दे से उठो तो इत्मीनान के साथ उठो।

इस तरह नमाज़ की पूरी तफ़सील हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनको बतलाई, और तमाम सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने वह तफ़सील सुनी। जिन सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम ने नमाज़ के बारे में यह तफ़सील सुनी तो उन्होंने फ़रमाया कि इन साहिब की वजह से हमें रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की ज़बान मुबारक से नमाज़ का शुरू से लेकर आख़िर तक पूरा तरीक़ा सुनना और सीखना नसीब हो गया।

नमाज़ को दोबारा पढ़ना वाजिब होगा

इस हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उन साहिब से फ़रमाया कि नमाज़ पढ़ो क्योंकि तुमने नमाज़ नहीं पढ़ी। इसका मतलब यह है कि अगर रुकूअ़ में या क़ौमा में या सज्दे में इस क़िस्म की कोताही रह जाये तो नमाज़ का दोबारा पढ़ना वाजिब होगा। लिहाज़ा अगर रुकूअ़ के अन्दर कमर सीधी नहीं हुई, या क़ौमा के अन्दर कमर सीधी नहीं हुई और बस इशारा करके आदमी अगले रुक्न में चला गया जैसा कि बहुत से लोग करते हैं, तो इस हदीस की रू से नमाज़ का दोबारा पढ़ना वाजिब है। इसलिए इसका बहुत ध्यान करना चाहिये और बेहतर यह है कि क़ौमा में भी उतना ही वक़्त लगाये जितना वक़्त रुकूअ़ में लगाया है।

क़ौमा का एक अदब

एक सहाबी रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि बाज़ मर्तबा रसूले करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को हमने देखा कि आप रुकूअ़ से क़ौमा में खड़े हुए तो आप इतनी देर खड़े रहे कि हमें यह ख़्याल होने लगा कि कहीं आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम भूल तो नहीं गये, क्योंकि आपने रुकूअ़ लम्बा फ़रमाया था इसलिये क़ौमा भी लम्बा

फ़रमाया और उसके बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सज्दे में तशरीफ़ ले गये। यह क़ौमा का अदब है।

सज्दे में जाने का तरीक़ा

क़ौमा के बाद आदमी सज्दा करता है। सज्दे में जाने का तरीक़ा यह है कि आदमी सीधा सज्दे में जाये। यानी सज्दे में जाते वक़्त कमर को पहले से न झुकाये जब तक घुटने ज़मीन पर न टिकें उस वक़्त तक ऊपर का बदन बिल्कुल सीधा रहे, अलबत्ता जब घुटने ज़मीन पर रखे उसके बाद ऊपर का बदन आगे की तरफ़ झुकाते हुए सज्दे में चला जाये। यह तरीक़ा ज़्यादा बेहतर है। लेकिन अगर कोई शख़्स पहले से झुक जाये तो उससे भी नमाज़ फ़ासिद नहीं होती। लेकिन दीन के आ़लिमों ने इस तरीक़े को ज़्यादा पसन्द फ़रमाया है।

सज्दे में जाने की तरतीब

सज्दे में जाने की तरतीब यह है कि पहले घुटने ज़मीन पर लगने चाहियें। उसके बाद हथेलियाँ, उसके बाद नाक, उसके बाद पेशानी ज़मीन पर टिकनी चाहिये और इसको आसानी से याद रखने का तरीक़ा यह है कि बदन का जो अंग ज़मीन से जितना क़रीब है वह उतना ही पहले जाएगा। चुनाँचे घुटने ज़मीन से ज़्यादा क़रीब हैं इसलिये पहले घुटने ज़मीन पर जायेंगे फिर हाथ क़रीब हैं तो हाथ पहले टिकेंगे। उसके बाद नाक क़रीब है उसके बाद आख़िर में पेशानी ज़मीन पर टिकेगी। सज्दे में जाने की यह तरतीब है। इस तरतीब से सज्दे में जाये।

पावँ की उगंलियाँ ज़मीन पर टेकना

और सज्दा करते वक़्त ये सब अंग भी सज्दे में जाते हैं। लिहाज़ा सज्दा दो हाथ, दो घुटने, दो पाँव, नाक और पेशानी यह सब आज़ा (जिस्म के हिस्से) सज्दे में जाने चाहियें और ज़मीन पर टिकने चाहियें।

बहुत से लोग सज्दे में पाँव ज़मीन पर नहीं टेकते, पाँव की उंगलियाँ ऊपर रहती हैं। अगर पूरे सज्दे में एक लम्हे के लिये भी उंगलियाँ ज़मीन पर न टिकें तो सज्दा ही नहीं होगा और नमाज़ फ़ासिद (ख़राब) हो जायेगी। अलबत्ता अगर एक लम्हे के लिये भी "सुब्हानल्लाह" कहने की मात्रा में उंगलियाँ ज़मीन पर टिक गयीं तो सज्दा और नमाज़ हो जायेगी, लेकिन सुन्नत के ख़िलाफ़ होगी। क्योंकि सुन्नत यह है कि पूरे सज्दे में दोनों पाँव की उंगलियाँ ज़मीन पर टिकी हुई हों। और उन उंगलियों का रुख़ भी क़िब्ले की तरफ़ होना चाहिये। लिहाज़ा अगर उंगलियाँ ज़मीन पर टिक तो गयीं लेकिन उनका रुख़ क़िब्ले की तरफ़ न हुआ तो भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है।

सज्दे में सबसे ज़्यादा अल्लाह तआ़ला की निकटता

यह सज्दा ऐसी चीज़ है कि इससे ज़्यादा मज़ेदार इबादत दुनिया में कोई और नहीं। और सज्दे से ज़्यादा अल्लाह तआ़ला की नज़्दीकी का कोई और ज़रिया नहीं। हदीस शरीफ़ में आता है कि बन्दा अल्लाह तआ़ला से किसी हाल में इतना क़रीब नहीं होता जितना सज्दे की हालत में होता है। क्योंकि जब इनसान अल्लाह की बारगाह में सज्दा कर रहा होता है उस वक़्त उसका पूरा जिस्म पूरा वजूद अल्लाह तआ़ला के आगे झुका होता है। लिहाज़ा तमाम आज़ा (जिस्म के हिस्सों) को झुका हुआ होना चाहिये और उसी तरीक़े पर झुका हुआ होना चाहिये जो तरीक़ा रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तालीम फ़रमाया और जिस पर आपने अ़मल फ़रमाया।

औ़रतें बालों का जूड़ा खोल दें

इसलिये फ़रमाया गया कि औ़रतों के लिये बालों का जूड़ा बाँध कर नमाज़ पढ़ना बुरा है। अगरचे नमाज़ हो जायेगी इसलिये कि आ़लिमों ने फ़रमाया कि अगर बालों का जूड़ा बंधा हुआ होगा तो बाल

सज्दे में नहीं जायेंगे क्योंकि इस सूरत में ऊपर की तरफ़ खड़े होंगे, और सज्दे की पूरी कैफ़ियत हासिल न होगी। इसलिये औरतों को चाहिये कि नमाज़ शुरू करने से पहले अपने जूड़े को खोल लें, ताकि बाल भी सज्दे में नीचे की तरफ़ गिरें ऊपर की तरफ़ खड़े न रहें और उनको भी सज्दे में अनवार (नूर का बहुवचन) व बरकतें हासिल हो जायें। क्योंकि सज्दे के अलावा किसी और हालत में अल्लाह तआला की इतनी नज़दीकी हासिल नहीं होती।

नमाज़ मोमिन की मेराज है

देखिये! अल्लाह तआला ने नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को मेराज का ऐसा अज़ीम रुतबा अता फ़रमाया जो कायनात में किसी और को अता नहीं हुआ। उस मुक़ाम पर पहुँचे ज़हाँ जिब्राईल अमीन अलैहिस्सलाम भी नहीं पहुँच सकते। अल्लाह तआला ने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को अपनी ख़ास निकटता अता फ़रमायी, जिसका हम और आप तसव्वुर भी नहीं कर सकते। मेराज के मौक़े पर आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ज़बाने हाल से यह अर्ज़ किया कि या अल्लाह! आपने मुझे तो अपनी नज़दीकी का इतना बड़ा मुक़ाम अता फ़रमा दिया, मेरी उम्मत को यह मुक़ाम कैसे हासिल हो? अल्लाह तबारक व तआला ने जवाब में नमाज़ का तोहफ़ा दे दिया, और फ़रमाया कि जाओ अपनी उम्मत से कहना कि पाँच नमाज़ पढ़ा करे और जब नमाज़ पढ़ेगी तो उसमें सज्दा भी करेगी और जब सज्दा करेगी तो उनको मेरी निकटता हासिल हो जायेगी। इसी लिये फ़रमाया गया कि:

اَلصَّلٰوۃُ مِعْرَاجُ الْمُؤْمِنِیْنَ

नमाज़ मोमिन की मेराज है।

क्योंकि हमारे और आपके बस में यह तो नहीं है कि सातों आसमानों को पार करके ऊपर की दुनिया में पहुँच जायें और

'सिद्रतुल्-मुन्तहा' तक पहुँचे। लेकिन सरकारे दो-आलम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सदक़े में हर मोमिन को यह मेराज अ़ता हो गई कि सज्दे में जाओ और अल्लाह तआ़ला के क़रीब हो जाओ। लिहाज़ा यह सज्दा मामूली चीज़ नहीं। इसलिये इसको क़द्र से करो।

सज्दे की फ़ज़ीलत

जिस वक़्त तुम अपने सारे वजूद को अल्लाह तआ़ला के सामने झुका रहे होते हो, उस वक़्त सारी कायनात तुम्हारे आगे झुकी हुई होती है।

जिस वक़्त तुम्हारा क़दम हुस्न पर है, यानी अल्लाह तआ़ला की बारगाह में सज्दा कर रहा होता है तो उस वक़्त तुम्हारा पाँव सारे ताज व पगड़ियों पर होता है। सारी कायनात उसके नीचे होती हैं। अल्लामा इक़बाल कहते हैं।

यह सज्दा जिसे तू गिराँ समझता है
हज़ार सज्दों से देता है आदमी को निजात

यह एक सज्दा हज़ार सज्दों से निजात दे देता है, क्योंकि अगर यह सज्दा इनसान न करे तो हर जगह सज्दा करना पड़ता है। कभी हाकिम के सामने, कभी अफ़सर के सामने, कभी अमीर के सामने। लेकिन जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की बारगाह में सज्दा कर रहा है, वह किसी और के आगे सज्दा नहीं करता। लिहाज़ा इस सज्दे को क़द्र और मुहब्बत से करो, प्यार से करो।

सज्दे में कैफ़ियत

हज़रत शाह फ़ज़्ले रहमान साहिब गंजमुरादाबादी रहमतुल्लाहि अ़लैहि बड़े दर्जे के औलिया-अल्लाह में से थे। एक बार हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि उनकी ज़ियारत के लिये तशरीफ़ ले गये। वह अ़जीब शान के बुज़ुर्ग थे। जब

वापस आने लगे तो चुपके से कहने लगेः

"मियाँ अशरफ़ अली! एक बात कहता हूँ। वह यह कि जब मैं सज्दे में जाता हूँ तो यूँ लगता है कि अल्लाह तआला ने प्यार कर लिया।"

बहरहाल! यह सज्दा मुहब्बत से करो, प्यार से करो, क्योंकि यह सज्दा तुम्हें हज़ार सज्दों से निजात दे रहा है और तुम्हें अल्लाह तआला की निकटता अ़ता कर रहा है जो और किसी ज़रिये से हासिल नहीं हो सकती।

सज्दे में कोहनियाँ खोलना

लिहाज़ा! जब सज्दा करो तो उसको सही तरीक़े से करो। सज्दे में तुम्हारे आज़ा (बदन के हिस्से) इसी तरह होने चाहियें जिस तरह नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुआ करते थे। वह इस तरह कि कोहनियाँ पहलू से जुदा हों। अलबत्ता कोहनियाँ पहलू से अलग होने के नतीजे में बराबर वाले नमाज़ी को तकलीफ़ न हो। बाज़ लोग अपनी कोहनियाँ इतनी ज़्यादा दूर कर देते हैं कि दायें-बायें वाले नमाज़ियों को तकलीफ़ होती है। यह तरीक़ा भी सुन्नत के ख़िलाफ़ है, जायज़ नहीं। इसलिये कि किसी इनसान को तकलीफ़ पहुँचाना कबीरा (बड़ा) गुनाह है। और सज्दे में कम से कम तीन बार "सुब्हा-न रब्बियल् अअ्ला" कहें, ज़्यादा की तौफ़ीक़ हो तो पाँच बार, सात बार, ग्यारह बार कहें। और मुहब्बत, बड़ाई और क़द्र से यह तस्बीह पढ़ें।

जलसे की कैफ़ियत व दुआ़

जब पहला सज्दा करके आदमी बैठता है तो उसको "जलसा" कहते हैं। जलसे में कुछ देर इत्मीनान से बैठना चाहिये। यह न करें कि बैठते ही फ़ौरन दोबारा सज्दे में चले गये। एक सहाबी रज़ियल्लाहु

अन्हु फ़रमाते हैं कि जलसे में भी हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम तक़रीबन उतनी देर बैठा करते थे जितनी देर सज्दे में, जितना वक़्त सज्दे में गुज़रता, तक़रीबन उतना ही वक़्त जलसे में भी गुज़रता था। यह सुन्नत भी आजकल छूटती जा रही है और जलसे में आप से यह दुआ पढ़ना साबित है।

اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِیْ ذَنْبِیْ، اَللّٰهُمَّ اغْفِرْلِیْ وَاسْتُرْنِیْ وَاجْبُرْنِیْ وَاهْدِنِیْ وَارْزُقْنِیْ.

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली ज़म्बी, अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली वस्तुर्नी वज्बुर्नी वह्दिनी वर्ज़ुक़्नी।

लिहाज़ा इतना वक़्त जलसे में गुज़ारना चाहिये जिसमें यह दुआ पढ़ी जा सके। और फिर दूसरे सज्दे में जाये।

बहरहाल! यह एक रकअत का बयान तक्बीरे-तहरीमा से लेकर सज्दे तक का हो गया। अल्लाह तआला ने तौफ़ीक़ दी तो बाक़ी बयान अगले जुमा को अर्ज़ करूँगा।

अल्लाह तआला हम सबको सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ٥

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

ख़ुशू के तीन दर्जे

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ اَلَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْعٰدُوْنَ ○ (سورہ مؤمنون آیت:۱-۷)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

तम्हीद

पिछले से पहले जुमा को मैंने इस आयत की तफ़सीर में अर्ज़ किया था कि नमाज़ में ख़ुज़ू भी मतलूब (दरकार) है और ख़ुशू भी मतलूब है। ख़ुज़ू का ताल्लुक़ इनसान के ज़ाहिरी आज़ा (जिस्म के अंगों) से है और ख़ुशू का ताल्लुक़ इनसान के दिल से है। ख़ुज़ू का

मतलब यह है कि नमाज़ में बदन के हिस्से उस तरह हों जिस तरह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से साबित हैं। इस सिलसिले में मैंने नमाज़ के विभिन्न अर्कान की शक्ल और उनकी अदायगी का तरीक़ा आप हज़रात के सामने बयान किया था।

तक्बीरे-तहरीमा के वक़्त हाथ उठाने का तरीक़ा, खड़े होने का तरीक़ा, रुकूअ़, क़ौमा, सज्दा, जलसे का तरीक़ा अ़र्ज़ कर दिया था। अब दो तीन बातें इस सिलसिले में बाक़ी हैं। उसके बाद "ख़ुशू" का मतलब और उसको हासिल करने का तरीक़ा अ़र्ज़ करना है।

रुकूअ़ और सज्दे में हाथों की उंगलियाँ

एक बात यह है कि जब आदमी रुकूअ़ में हो तो हाथ की उंगलियाँ खुली होनी चाहियें, और घुटनों को उंगलियों से पकड़ लेना चाहिये और सज्दे की हालत में सुन्नत यह है कि हाथों की उंगलियाँ बन्द हों और हाथ इस तरह रखे जायें कि चेहरा हाथों के दरमियान आ जाये और हथेलियाँ कन्धों के क़रीब हों। अंगूठे कानों की लौ के सामने हों और कोहनियाँ पहलू (करवट) से अलग हों, मिली हुई न हों।

अत्तहिय्यात में बैठने का तरीक़ा

जब आदमी अत्तहिय्यात में बैठे तो अत्तहिय्यात में बैठते वक़्त दायाँ पाँव खड़ा हो और उस पाँव की उंगलियों का रुख़ क़िब्ले की तरफ़ हो। और बायाँ पाँव बिछाकर आदमी उसके ऊपर बैठ जाये। और हाथ की उंगलियाँ रानों पर इस तरह रखी हुई हों कि उनका आख़िरी सिरा घुटनों पर आ रहा हो। उंगलियों को घुटनों से नीचे लटकाना अच्छा नहीं है।

सलाम फैरने का तरीक़ा

और जब सलाम फैरे तो सलाम फैरने का सही तरीक़ा यह है कि

जब दायीं तरफ़ सलाम फैरें तो पूरी गर्दन दायीं तरफ़ मोड़ ली जाये और अपने कन्धों की तरफ़ नज़र की जाये।

ये चन्द छोटी-छोटी बातें हैं। अगर इन बातो का ख़्याल कर लिया जाये तो नमाज़ सुन्नत के मुताबिक़ हो जाती है। नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत की पैरवी का नूर हासिल हो जाता है। उसकी बरकतें हासिल होती हैं और उसके ज़रिये नमाज़ के अन्दर ख़ुशू हासिल होने में भी मदद मिलती है। और इन बातों में न ज़्यादा वक़्त लगता है न ज़्यादा मेहनत ख़र्च होती है, न पैसा ख़र्च होता है। लेकिन इसके नतीजे में नमाज़ सुन्नत के मुताबिक़ हो जाती है। अल्लाह तआ़ला हम सब को इसकी तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे। आमीन।

ख़ुशू की हक़ीक़त

दूसरी चीज़ जिसका आज बयान करना है वह है "ख़ुशू" इसके मायने हैं दिल का अल्लाह तआ़ला के सामने झुकना। यानी इनसान का दिल अल्लाह तआ़ला की तरफ़ मुतवज्जह हो और उसको इस बात का एहसास हो कि मैं अल्लाह तआ़ला के सामने खड़ा हूँ। इसका सबसे आला दर्जा वह है जिसके बारे में नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

اَنْ تَعْبُدَ اللّٰهَ كَاَنَّكَ تَرَاهُ فَاِنْ لَّمْ تَكُنْ تَرَاهُ فَاِنَّهٗ يَرَاكَ

यानी तुम अल्लाह तआ़ला की इस तरह इबादत करो जैसे तुम अल्लाह तआ़ला को देख रहे हो, और अल्लाह तआ़ला सामने नज़र आ रहे हों। और अगर यह तसव्वुर जमाना मुम्किन न हो तो फिर कम से कम यह तसव्वुर जमाओ कि वह तुम्हें देख रहा है। यह ख़ुशू का सबसे ऊँचा दर्जा है।

वजूद के यक़ीन के लिये नज़र आना ज़रूरी नहीं

सवाल यह पैदा होता है कि हम तो अल्लाह तआ़ला को नहीं देख

रहे हैं, और न हम यह बात देख रहे हैं कि अल्लाह तआला हमें देख रहा है, आँखों से यह बात नज़र नहीं आ रही है, लिहाज़ा इन बातों का तसव्वुर कैसे बाँधें? इसका जवाब यह है कि इस दुनिया में हर चीज़ आँखों से देखकर मालूम नहीं होती, बहुत सी चीज़ें ऐसी हैं जिनको इनसान आँखों से नहीं देख रहा है लेकिन दिल में उसके मौजूद होने का इतना यक़ीन होता है जैसे कि वह अपनी आँखों से देख रहा हो। जैसे यह मेरी आवाज़ माइक के ज़रिये मस्जिद से बाहर भी जा रही है। अब जो लोग मस्जिद से बाहर हैं वे मुझे नहीं देख रहे हैं। लेकिन मेरी आवाज़ सुनकर उनको इस बात का यक़ीन हासिल है कि मैं मस्जिद के अन्दर मौजूद हूँ और उनको इतना ही यक़ीन हासिल है जितना आँख से देखने से हो रहा है।

कोई शख़्स अगर कहे कि तुमने बोलने वाले को आँख से देखा नहीं है फिर तुम्हें उसके मौजूद होने का यक़ीन क्यों हो रहा है। वह यह जवाब देगा कि मैं अपने कानों से उसकी आवाज़ सुन रहा हूँ। जिससे पता चल रहा है कि वह आदमी मौजूद है।

हवाई जहाज़ में इनसान मौजूद हैं

आप सुबह शाम हवाई जहाज़ उड़ते हुए देखते हैं। उस जहाज़ में बैठा हुआ कोई आदमी नज़र नहीं आता, न चलाने वाला नज़र आ रहा है, लेकिन आपको सौ फ़ीसद यक़ीन है कि इस जहाज़ में आदमी बैठे हुए हैं और कोई पायलेट इस जहाज़ को चला रहा है। हालाँकि उस पायलेट और उसके अन्दर बैठने वाले इनसानों को आपने अपनी आँखों से नहीं देखा, क्योंकि जहाज़ बग़ैर पायलेट के नहीं चलता और यह मुम्किन नहीं है कि जहाज़ चल रहा हो और उसके अन्दर पायलेट मौजूद न हो। अगर कोई शख़्स आप से कहे कि यह जहाज़ बग़ैर पायलेट के खुद-बखुद उड़ता जा रहा है तो आप उसको बेवक़ूफ़ और अहमक़ क़रार देंगे।

रोशनी सूरज का पता देती है

मस्जिद के अन्दर, बाहर से रोशनी आ रही है और सूरज नज़र नहीं आ रहा है, लेकिन हर इनसान का सौ फ़ीसद यक़ीन है कि इस रोशनी के पीछे सूरज मौजूद है। हालाँकि सूरज आँखों से नज़र नहीं आ रहा है। लिहाज़ा जिस तरह रोशनी को देखकर सूरज का पता लगा लेते हो, जिस तरह हवाई जहाज़ को देखकर उसके चलाने वाले का पता लगाते हो उसी तरह यह संसार जो फैला हुआ है, ये पहाड़ यह जंगल, ये हवाएँ, यह पानी यह समन्दर, यह दरिया, यह मिट्टी, यह आब-व-हवा, यह सब कुछ किसी बनाने वाले के मौजूद होने का पता दे रहा है।

हर चीज़ अल्लाह तआ़ला के वजूद पर दलालत कर रही है

लिहाज़ा जब आदमी नमाज़ के लिये खड़ा हो तो उस वक़्त इस बात का तसव्वुर करे कि मेरे सामने जितनी चीज़ें हैं वे अल्लाह तआ़ला की ज़ात की तरफ़ इशारा कर रही हैं। यह रोशनी जो नज़र आ रही है, इसके पीछे सूरज है। लेकिन सूरज के पीछे कौन है? सूरज किसने पैदा किया और उसके अन्दर रोशनी किसने रखी? यह सब अल्लाह तआ़ला के ख़ालिक़ (पैदा करने वाला) होने और उसके वजूद पर दलालत कर रही है।

लिहाज़ा नमाज़ के अन्दर यह तसव्वुर बाँधे कि मैं अल्लाह तआ़ला के सामने खड़ा हूँ और अल्लाह तआ़ला मुझे देख रहे हैं और अल्लाह तआ़ला के मेरे सामने होने का ऐसा यक़ीन है जैसा कि अल्लाह तआ़ला को आँखों से देख रहा हूँ। यह तसव्वुर जमा कर नमाज़ पढ़ कर देखो कि क्या कैफ़ियत होती है। अल्लाह तआ़ला हर मुसलमान को यह कैफ़ियत अ़ता फ़रमा दे। आमीन।

इसलिये कि नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि इस तरह नमाज़ पढ़ोः गोया कि तुम अल्लाह को देख रहे हो। अगर तुम अल्लाह को नहीं देख रहे हो तो वह अल्लाह तुम्हें देख रहा है।

अलफ़ाज़ की तरफ़ ध्यान पहली सीढ़ी

यह नमाज़ पढ़ने का सबसे आला दर्जा है। इस आला दर्जे तक पहुँचने के लिये कुछ प्रारंभिक सीढ़ियाँ हैं। उन सीढ़ियों को अगर आदमी धीरे-धीरे चढ़ता जाये तो अल्लाह तआ़ला इस आला मुक़ाम तक पहुँचा देते हैं। वह सीढ़ी क्या है? हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि इसकी पहली सीढ़ी यह है कि आप नमाज़ में जो अलफ़ाज़ ज़बान से निकालें उनकी तरफ़ ध्यान रहे। जैसे आप ज़बान से "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन" अदा करें। उस वक़्त आपको पता होना चाहिये कि मैं "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन" अदा कर रहा हूँ।

लेकिन आजकल हमारी नमाज़ के अन्दर यह कैफ़ियत होती है कि जिस वक़्त "अल्लाहु अक्बर" कहकर नीयत बाँधी तो बस एक बटन ऑन हो गया और मशीन चल पड़ी। चूँकि नमाज़ पढ़ने की आ़दत पड़ी हुई है, इसलिये ज़बान से अलफ़ाज़ ख़ुद-ब-ख़ुद निकलने लगे, और मशीन चल रही है यहाँ तक कि बहुत सी बार यह भी याद नहीं रहता कि मैंने पहली रकअ़त में कौनसी सूरत पढ़ी थी और दूसरी रकअ़त में कौनसी सूरत पढ़ी थी। यह सूरतेहाल अक्सर पेश आती है।

ख़ुशू की पहली सीढ़ी

अगर ख़ुशू हासिल करना है तो पहला काम यह करो कि जब नमाज़ पढ़ना शुरू करो तो ज़बान से जो अलफ़ाज़ अदा कर रहे हो ध्यान उसकी तरफ़ हो--- इनसान की ख़ासियत यह है कि एक न दिखाई देने वाली चीज़ जो आँखों से नज़र नहीं आ रही है उसकी

तरफ़ ध्यान जमाना शुरू में दुश्वार होता है, लेकिन हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि ख़ुशू हासिल करने की पहली सीढ़ी यह है कि उन अलफ़ाज़ की तरफ़ ध्यान जमाओ।

मायने की तरफ़ ध्यान दूसरी सीढ़ी

दूसरी सीढ़ी यह है कि उन अलफ़ाज़ के मायनों की तरफ़ ध्यान करो, जिस वक़्त ज़बान से "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आ़लमीन" अदा किया तो इसके मायने की तरफ़ ध्यान करो कि तमाम तारीफ़ें उस अल्लाह के लिये हैं जो रब्बुल्-आ़लमीन है। और इन अलफ़ाज़ के ज़रिये मैं अल्लाह तआ़ला की तारीफ़ कर रहा हूँ। जब "अर्रह्मानिर्रहीम" अदा करो तो उस वक़्त दिल में अल्लाह तआ़ला की सिफ़ते रहमत का तसव्वुर हो कि अल्लाह तआ़ला रहमान भी हैं और रहीम भी हैं। जिस वक़्त "मालिकि यौमिद्दीन" अदा करो उस वक़्त यह ध्यान करो कि मैं अल्लाह तआ़ला को क़ियामत के दिन का मालिक क़रार दे रहा हूँ। जिस वक़्त "इय्या-क नअ़्बुदु व इय्या-क नस्तईन" ज़बान से अदा करो उस वक़्त इसके मायने को ज़ेहन में लाओ कि ऐ अल्लाह! हम तेरी ही इबादत करते हैं और तुझसे ही मदद चाहते हैं।

और जिस वक़्त "इह्दिनस्सिरातल् मुस्तक़ीम" कहो उस वक़्त यह मायने ज़ेहन में रहने चाहिएँ कि मैं अल्लाह तआ़ला से दुआ़ कर रहा हूँ कि ऐ अल्लाह! मुझे सीधे रास्ते पर चला। जिस वक़्त "सिरातल्लज़ी-न अन्अ़म्-त अ़लैहिम् ग़ैरिल् मग़्ज़ूबि अ़लैहिम् व लज़्ज़ाल्लीन" कहो उस वक़्त यह मायने ज़ेहन में लाओ कि ऐ अल्लाह! मुझे उन लोगों का रास्ता दिखा दे जिन पर आपने इनाम फ़रमाया, और उन लोगों का रास्ता मुझे नहीं चाहिये जिन पर आपका ग़ज़ब हुआ, और जो गुमराह हुए।

लिहाज़ा पहले अलफ़ाज़ की तरफ़ ध्यान करे, फिर मायने की तरफ़ ध्यान करे।

बहरहाल! अपनी तरफ़ से नमाज़ के अन्दर इस बात की कोशिश की जाये कि ध्यान इन चीज़ों की तरफ़ रहे। जब इन चीज़ों की तरफ़ ध्यान रहेगा तो फिर जो इधर-उधर के ख़्यालात आते हैं वे इन्शा-अल्लाह ख़त्म हो जायेंगे।

नमाज़ में ख़्यालात आने की बड़ी वजह

फिर यह भी अर्ज़ कर दूँ कि यह जो दूसरे ख़्यालात आते हैं इसकी बड़ी वजह यह भी होती है कि हम वुज़ू ढंग से नहीं करते। सुन्नत के मुताबिक़ नहीं करते। ध्यान वुज़ू में नहीं होता, इधर-उधर की बातें करते हुए वुज़ू कर लिया। हालाँकि वुज़ू के आदाब में से यह है कि वुज़ू के दौरान बातें न की जायें। बल्कि वुज़ू के दौरान वे दुआयें पढ़ी जायें जो रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से साबित हैं और आदमी इत्मीनान से वुज़ू करके ऐसे वक़्त मस्जिद में आये जबकि नमाज़ खड़ी होने में कुछ वक़्त हो और मस्जिद में आकर आदमी पहले सुन्नत और नफ़िल अदा कर ले क्योंकि यह सुन्नत और नफ़िल जो नमाज़ से पहले रखी गई हैं, यह दर हक़ीक़त फ़र्ज़ नमाज़ की तम्हीद (आरंभिका) हैं ताकि फ़र्ज़ नमाज़ से पहले ही उसका ध्यान अल्लाह तआला की तरफ़ हो जाये और इधर-उधर के ख़्यालात आना बन्द हो जायें। इन सब आदाब का लिहाज़ करके जब आदमी नमाज़ पढ़ेगा तो फिर दूसरे ख़्यालात नहीं आयेंगे।

अगर ध्यान भटक जाये तो वापस आ जाओ

लेकिन इनसान का दिमाग़ चूँकि भटकता रहता है इसलिये इन तदबीरों के इख़्तियार करने के बावजूद ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर कोई ख़्याल आ जाये तो उस पर अल्लाह तआला की तरफ़ से कोई पकड़ नहीं। जब दोबारा याद आ जाये तो फिर दोबारा उन अलफ़ाज़ की तरफ़ ध्यान ले आयें। जैसे जिस वक़्त "अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल् आलमीन। अर्रह्मानिर्रहीम" पढ़ा उस वक़्त तक ध्यान हाज़िर था,

लेकिन जब "मालिकि यौमिद्दीन" पढ़ा तो उस वक़्त ध्यान ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर कहीं और भटक गया, तो इसमें कोई हर्ज नहीं। लेकिन जब "इह्दिनस्सिरातल् मुस्तक़ीम" कहा उस वक़्त ख़्याल आया कि मैं तो कहीं भटक गया था। तो अब दोबारा ध्यान को वापस ले आओ। इसी तरह जितनी बार ध्यान भटके वापस आ जाओ। यही काम करते चले जाओ।

ख़ुशू हासिल करने के लिये मश्क़ और मेहनत

याद रखिये इस दुनिया के अन्दर कोई भी मक़सद बग़ैर मेहनत के हासिल नहीं हो सकता। जो काम भी करना हो उसके लिये मश्क़ करनी पड़ती है। वह मश्क़ यह है कि इनसान यह इरादा कर ले कि जब नमाज़ पढ़ेंगे तो अपना ध्यान उन अलफ़ाज़ की तरफ़ रखेंगे जो अलफ़ाज़ ज़बान से अदा कर रहे हैं। और अगर ज़ेहन भटकेगा तो दोबारा उन अलफ़ाज़ की तरफ़ वापस आ जायेंगे। फिर भटकेगा तो फिर वापस आ जायेंगे। जितनी बार भटकेगा उतनी बार वापस आयेंगे।

जब इस पर अमल करोगे तो इसका नतीजा यह होगा कि आज अगर ज़ेहन दस बार भटका था तो आने वाले कल में इन्शा-अल्लाह आठ बार भटकेगा। अगले दिन इन्शा-अल्लाह छह बार भटकेगा। इस तरह यह तनासुब (अनुपात) इन्शा-अल्लाह कम होता चला जायेगा। बस इनसान यह सोच कर छोड़े नहीं कि यह काम मेरे बस से बाहर है और मेरी कोशिश करना फ़ुज़ूल है, बल्कि लगा रहे, कोशिश करता रहे। सारी उम्र कोशिश करता रहे छोड़े नहीं। अल्लाह तआला की रहमत से एक दिन ऐसा वक़्त आयेगा जब तुम्हारा ज़्यादा ज़ेहन नमाज़ ही की तरफ़ और अलफ़ाज़ की तरफ़ होगा।

तीसरी सीढ़ी अल्लाह तआला का ध्यान

जब यह बात हासिल हो जाये तो उसके बाद तीसरी सीढ़ी पर क़दम रखना है। वह तीसरी सीढ़ी यह है कि नमाज़ के अन्दर इस

बात का ध्यान हो कि मैं अल्लाह तआ़ला के सामने खड़ा हूँ। और जब यह ध्यान हासिल हो जायेगा तो बस मक़सद हासिल है, इन्शा-अल्लाह। यह है ख़ुलासा ख़ुशू हासिल करने का जिसकी तरफ़ क़ुरआन करीम ने इस आयत में इरशाद फ़रमाया है:

قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِىْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○

यानी वे मोमिन जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं, वे फ़लाह पाने वाले हैं। हमने उनको दुनिया व आख़िरत में फ़लाह दे दी। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल व करम से अपनी रहमत से हम सब को इस पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये और हमारी नमाज़ों में ख़ुशू पैदा फ़रमा दे, और अल्लाह तआ़ला हमारे ध्यान को मुज्तमा (एकत्र) फ़रमा दे। और नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत के मुताबिक़ नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दे। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

नमाज़ में आने वाले ख़्यालात से बचने का तरीक़ा

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۶)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظيم وصدق رسوله النبي الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد للّٰه رب العالمين ○

तम्हीद

मोहतरम बुज़ुर्गों और प्यारे भाईयो! ये सूरः मोमिनून की शुरू की चन्द आयतें हैं। जिनकी तफ़सीर का सिलसिला मैंने चन्द हफ़्ते पहले शुरू किया था। इन आयतों में बारी तआला ने मोमिनों की वे सिफ़ात बयान फ़रमाई हैं जो उनके लिये फ़लाह (दोनों जहान की कामयाबी) का सबब हैं और "फ़लाह" ऐसा जामे (सर्व व्यापी) लफ़्ज़ है जिसमें दीन

और दुनिया दोनों की कामयाबी आ जाती है। फ़लाह पाने वाले मोमिनों की पहली सिफ़त यह बयान फ़रमायीः

اَلَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ○

यानी वे मोमिन फ़लाह पाने वाले हैं जो अपनी नमाज़ों में ख़ुशू इख़्तियार करते हैं। इसकी कुछ तफ़सील पिछले बयानों में अर्ज़ कर चुका हूँ।

ख़ुशू के तीन दर्जे

पिछले जुमा को मैंने अर्ज़ किया था कि "ख़ुशू" हासिल करने के तीन दर्जे और तीन सीढ़ियाँ हैं। पहली सीढ़ी यह है कि जो अलफ़ाज़ ज़बान से अदा कर रहे हों उन अलफ़ाज़ की तरफ़ तवज्जोह हो। दूसरी सीढ़ी यह है कि उन अलफ़ाज़ के मायने की तरफ़ तवज्जोह हो। तीसरी सीढ़ी यह है कि इनसान नमाज़ इस ध्यान के साथ पढ़े जैसे वह अल्लाह तआला को देख रहा है। या कम से कम यह तसव्वुर बाँधे कि अल्लाह तआला मुझे देख रहे हैं।

इन आयतों में यह जो फ़रमाया कि वह मोमिन फ़लाह-याफ़्ता (कामयाबी हासिल करने वाले) हैं जो अपनी नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं। इससे इस बात की तंबीह की गई है कि सिर्फ़ नमाज़ पढ़ने पर बस न करो बल्कि नमाज़ पढ़ने के अन्दर ख़ुशू पैदा करने की भी कोशिश करो।

ख़्यालात आने की शिकायत

अक्सर लोग यह शिकायत बहुत ज़्यादा करते हैं कि जब नमाज़ पढ़ता हूँ तो मुझे ख़्यालात बहुत ज़्यादा आते हैं। भाई! इन ख़्यालात की वजह से परेशान होने की ज़रूरत नहीं। बल्कि इस सूरतेहाल के इलाज करने की तरफ़ तवोज्जह करनी चाहिये। परेशान होने से कोई काम नहीं बनता। असल बात यह है कि जो तकलीफ़ और नुक़्स है उसको दूर करने के रास्ते इख़्तियार किये जायें। इस तकलीफ़ और नुक़्स को

दूर करने के लिये रास्ते क्या हैं?

नमाज़ के मुक़द्दमात

पहला रास्ता यह है कि अल्लाह तआ़ला ने नमाज़ से पहले कई मुक़द्दमात क़ायम किये हैं। यानी नमाज़ तो असल मक़सूद है लेकिन इस नमाज़ से पहले ऐसे मुक़द्दमात (आरंभिक चीज़ें) और कुछ ऐसीं शुरूआ़ती चीज़ें रखी हैं जिनके वास्ते से इनसान असल नमाज़ तक पहुँचता है। वे सब मुक़द्दमात (आरंभिक चीज़ें) और शुरूआ़ती काम हैं। अगर उनको इनसान ठीक-ठीक अन्जाम दे दे तो इसकी वजह से ख़्यालात में कमी आयेगी।

नमाज़ का पहला मुक़द्दमा "तहारत"

नमाज़ के मुक़द्दमात (आरंभिक चीज़ों) में सबसे पहले अल्लाह तआ़ला ने "तहारत" रखी है। क्योंकि हर नमाज़ के लिये तहारत और पाकी हासिल करना ज़रूरी है। एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

مفتاح الصلاة الطهور

यानी नमाज़ की कुन्जी तहारत (पाकी) है।

दूसरी हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

لا تقبل الصلاة بغير طهور

यानी कोई नमाज़ तहारत के बग़ैर अल्लाह तआ़ला के यहाँ क़बूल नहीं।

तहारत की इब्तिदा इस्तिन्जा से

तहारत का सिलसिला "इस्तिन्जे" से शुरू होता है और इस्तिन्जा

करने को वाजिब क़रार दिया गया है, और इसके बारे में यह कहा गया है कि इनसान इस्तिन्जे के वक़्त तहारत हासिल करने का अच्छी तरह इत्मीनान हासिल करे। और अगर पेशाब के बाद क़तरे आने का ख़तरा हो तो उस वक़्त तक इनसान फ़ारिग़ न हो जब तक क़तरा आने का ख़तरा हो। मसाइल की किताबों में इसको "इस्तिब्रा" कहा गया है। क्योंकि अगर पाकी सही नहीं हुई और कपड़ों पर या जिस्म पर नजासत (नापाकी और गंदगी) के असरात बाक़ी रह गये तो उसके नतीजे में इनसान के ख़्यालात परेशान होते हैं।

नापाकी, ख़्यालात का सबब है

अल्लाह तआ़ला ने हर चीज़ के कुछ ख़्वास (विशेषतायें) बनाये हैं नापाकी की एक ख़ासियत यह है कि वह इनसान के दिल में नापाक और गन्दे ख़्यालात और शैतानी वस्वसों को पैदा करता है। लिहाज़ा नमाज़ का सबसे पहला तम्हीदी (आरंभिक) काम यह है कि नापाकी दूर करने का एहतिमाम किया जाये।

नमाज़ का दूसरा मुक़द्दमा "वुज़ू"

उसके बाद दूसरा तम्हीदी (आरंभिक) काम "वुज़ू" रखा है। यह वुज़ू भी बड़ी अ़जीब व ग़रीब चीज़ है। हदीस शरीफ़ में रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब इनसान वुज़ू करता है और वुज़ू में अपना चेहरा धोता है तो उसके नतीजे में आँखों से किये तमाम सग़ीरा (छोटे) गुनाह अल्लाह तआ़ला धो देते हैं।

इसी तरह जब इनसान हाथ धोता है तो अल्लाह तआ़ला हाथों से किये हुए सग़ीरा गुनाह धो देते हैं और जिस वक़्त वह पाँव धोता है तो अल्लाह तआ़ला उसके पाँवों से किये हुए गुनाह माफ़ फ़रमा देते हैं। और जो चार आज़ा (बदन के हिस्से) वुज़ू में धोये जाते हैं, आ़म तौर पर इनसान के यही चार बदनी हिस्से इनसान को गुनाह की तरफ़ ले जाते हैं। इन्हीं अंगों के ज़रिये गुनाह होते हैं। अल्लाह तआ़ला ने यह

इन्तिज़ाम फ़रमाया कि जब बन्दा नमाज़ के लिये मेरे दरबार में हाज़िर हो तो उससे पहले वह गुनाहों से पाक हो चुका हो। उसके हाथ, उसका चेहरा, उसका पाँव गुनाहों से पाक हो गया हो। अलबत्ता गुनाहों से मुराद सग़ीरा (छोटे) गुनाह हैं। कबीरा (बड़े) गुनाह बग़ैर तौबा के माफ़ नहीं होते।

वुज़ू से गुनाहों का धुल जाना

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अलैहि के बारे में मशहूर है कि जब कोई वुज़ू कर रहा होता था तो उसके वुज़ू के बहते हुए पानी में आपको गुनाहों की शक्लें नज़र आती थीं कि फ़लाँ गुनाह धुल कर जा रहा है। अल्लाह तआला ने आपको यह कश्फ़ अता फ़रमाया था। बहरहाल! अल्लाह तआला ने नमाज़ से पहले वुज़ू इसलिये रखा है कि उससे न सिर्फ़ यह कि ज़ाहिरी सफ़ाई हासिल हो, बल्कि बातिनी (अन्दरूनी) सफ़ाई और गुनाहों की सफ़ाई भी हासिल हो जाये।

कौनसे वुज़ू से गुनाह धुल जाते हैं

लेकिन वुज़ू से यह फ़ायदा उस वक़्त हासिल होता है जब आदमी सुन्नत के मुताबिक़ वुज़ू करे और उस तरह वुज़ू करे जिस तरह रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बयान फ़रमाया। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की आदत शरीफ़ा यह थी कि जब वुज़ू फ़रमाते तो क़िब्ले की तरफ़ मुँह करके वुज़ू फ़रमाते। यह वुज़ू के आदाब में से है। इसी तरह वुज़ू शुरू करते वक़्त "बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम" पढ़ा करते थे और वुज़ू के दौरान बातें नहीं करते थे। वुज़ू की तरफ़ ध्यान फ़रमाते।

वुज़ू की तरफ़ ध्यान

वुज़ू की तरफ़ ध्यान होने में सबसे आला बात यह है कि जब आदमी अपना चेहरा धोये तो इस तरफ़ ध्यान करे कि मेरे चेहरे के गुनाह धुल रहे हैं। जब आदमी हाथ धोये तो यह ध्यान करे कि हुज़ूरे

अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि वुज़ू में हाथ धोते वक़्त हाथ के गुनाह माफ़ होते हैं, तो इस वक़्त मेरे हाथ के गुनाह धुल रहे हैं। इसी तरह पानी इस्तेमाल करने में फ़ुज़ूलख़र्ची न करे। फ़ुज़ूल पानी न बहाये। जितने पानी की ज़रूरत है बस उतने पानी से वुज़ू करे। हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमायाः

إياك والسرف وان كنت على نهر جار

यानी पानी को फ़ुज़ूल बहाने से बचो। चाहे तुम किसी बहते दरिया पर क्यों न खड़े हो। अगर पानी का दरिया बह रहा है, तुम उस दरिया से जितनें पानी से भी वुज़ू करोगे तो इसके नतीजे में दरिया के पानी में कोई कमी नहीं आयेगी, इसके बावजूद फ़रमाया कि उस मौक़े पर भी बेजा पानी बहाने से बचो और फ़ुज़ूल पानी मत बहाओ।

वुज़ू के दौरान दुआयें

और वुज़ू के दौरान दुआयें करे। हदीस शरीफ़ में आता है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम जब वुज़ू फ़रमाते तो एक तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम कसरत से-

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु व अश्हदु अन्-न मुहम्मदन् अ़ब्दुहू व रसूलुहू

पढ़ा करते थे, और दूसरी यह दुआ पढ़तेः

अल्लाहुम्मग़्फ़िर् ली ज़म्बी व वस्सिअ् ली फ़ी दारी व बारिक् ली फ़ी रिज़्क़ी

और वुज़ू के बाद आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम यह पढ़तेः

अल्लाहुम्मज्अ़ल्नी मिनत्तव्वाबी-न वज्अ़ल्नी मिनल् मु-ततह्हिरीन

अगर आदमी इन आदाब के साथ वुज़ू करे तो ऐसे वुज़ू का ख़ास्सा यह है कि वे तरह-तरह के ख़्यालात जो आपके दिल व दिमाग़ में बसे हुए हैं, यह वुज़ू उनसे पाक करके अल्लाह तआ़ला की तरफ़ दिमाग़ को मुतवज्जह कर देता है।

वुज़ू में बातचीत करना

लेकिन हमारी ग़लती सबसे पहले वुज़ू से शुरू होती है। जब हम वुज़ू करने बैठे तो दुनिया की सारी ख़ुराफ़ात वुज़ू के दौरान चलती रहती हैं। बातचीत हो रही है, गपशप हो रही है। होश ही नहीं, लापरवाही की हालत में वुज़ू कर रहे हैं। बस जल्दी-जल्दी फ़र्ज़ को ज़िम्मे से उतारा और फ़ारिग़ हो गये।

इसका नतीजा यह होता है कि उस वुज़ू के वे फ़ायदे और फल हासिल नहीं होते। इसके बजाये अगर ध्यान के साथ और आदाब के साथ वुज़ू करे और वुज़ू के दौरान दुआयें पढ़ता रहे, इससे नमाज़ की पहली तम्हीद (आरंभिका) और पहला मुक़द्दमा दुरुस्त हो जायेगा।

नमाज़ का तीसरा मुक़द्दमा

"तहिय्यतुल्-वुज़ू वल्-मस्जिद"

नमाज़ का तीसरा मुक़द्दमा (आरंभिक चीज़) यह है कि जब वुज़ू करके मस्जिद में आओ तो मस्जिद में जमाअ़त से कुछ देर पहले पहुँच जाओ और तहिय्यतुल्-मस्जिद और तहिय्यतुल्-वुज़ू की नीयत से दो रकअ़त अदा करो। ये दो रकअ़त वाजिब या सुन्नते-मोअक्कदा नहीं हैं। लेकिन बड़ी फ़ज़ीलत वाली हैं। हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु तआ़ला अ़न्हु से फ़रमाया कि ऐ बिलाल: जब मैं मेराज पर गया और वहाँ अल्लाह तआ़ला ने मुझे जन्नत की सैर कराई तो मैंने तुम्हारे क़दमों की चाप अपने से आगे सुनी। जैसे बादशाह से आगे कोई बॉडीगार्ड चला करता है। यह बताओ कि तुम्हारा कौनसा अ़मल है जो तुम ख़ास तौर पर करते हो, जिसकी वजह से अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें यह मुक़ाम बख़्शा कि जन्नत में तुम्हें मेरा बॉडीगार्ड बना दिया। हज़रत बिलाल रज़ियल्लाहु अ़न्हु ने जवाब दिया कि या रसूलल्लाह

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम! और कोई अ़मल तो मुझे याद नहीं आ रहा है अलबत्ता एक बात है, वह यह कि जब से मैं इस्लाम लाया हूँ उस वक़्त से मैंने यह तय किया था कि जब भी वुज़ू करूँगा तो दो रक्अ़त उस वुज़ू से ज़रूर अदा करूँगा। चुनाँचे जब से मैं इस्लाम लाया हूँ तब से वुज़ू करता हूँ तो दो रक्अ़त नफ़िल तहिय्यतुल्-वुज़ू ज़रूर अदा करता हूँ। चाहे नमाज़ का वक़्त हो या न हो।

यह सुनकर जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि यही वह अ़मल है जिसकी वजह से अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें यह मुकाम अ़ता फ़रमाया।

तहिय्यतुल्-मस्जिद किस वक़्त पढ़े?

बहरहाल! हर वुज़ू के बाद दो रक्अ़त नफ़िल पढ़ने में दो मिनट ख़र्च होते हैं। लेकिन अल्लाह तआ़ला ने इसकी वजह से इतनी बड़ी फ़ज़ीलत अ़ता फ़रमाई। और मस्जिद में दाख़िल होने के बाद बैठने से पहले दो रक्अ़त तहिय्यतुल्-मस्जिद पढ़ना अफ़ज़ल है, अलबत्ता अगर आदमी भूलकर बैठ गया और बाद में याद आया तो उस वक़्त पढ़ ले। इसमें भी कोई हर्ज नहीं। लेकिन बेहतर यह है कि बैठने से पहले पढ़ ले। यह नमाज़ की तीसरी तम्हीद (आरंभिका) है।

नमाज़ का चौथा मुक़द्दमाः नमाज़ से पहले की सुन्नतें

नमाज़ का चौथा मुक़द्दमा (आरंभिक चीज़) यह है कि हर फ़र्ज़ नमाज़ से पहले कुछ रक्अ़तें सुन्नत मोअक्कदा (यानी जिनकी ताकीद आई हो) या ग़ैर-मोअक्कदा (यानी जिनकी ताकीद न आई हो) रखी गई हैं। जैसे फ़ज्र से पहले दो रक्अ़तें, ज़ोहर से पहले चार रक्अ़तें सुन्नत मोअक्कदा हैं और अ़स्र से पहले और इशा से पहले चार रक्अ़त सुन्नतें ग़ैर-मोअक्कदा रखी गई हैं। मग़रिब की नमाज़ को चूँकि जल्दी पढ़ने का हुक्म है इसलिये मग़रिब से पहले दो रक्अ़त पढ़ने की

इतनी फ़ज़ीलत नहीं है। लेकिन बाज़ रिवायात में इस वक़्त भी दो रकअतें साबित हैं। लिहाज़ा फ़र्ज़ नमाज़ से पहले जो नमाज़ें पढ़ी जा रही हैं वे तीसरी तम्हीद (आरंभिका) हैं।

चारों मुक़द्दमात पर अमल के बाद

ख़ुशू का हासिल होना

इन चारों मुक़द्दमात (आरंभिक चीज़ों) से गुज़रने के बाद जब फ़र्ज़ नमाज़ में शामिल होगा तो उसको वह शिकायत पेश नहीं आयेगी जो आम तौर पर लोगों को पेश आती है, कि जब हम नमाज़ के लिये खड़े होते हैं तो हमारा दिल कहीं होता है और दिमाग़ कहीं होता है, और ग़फ़लत की हालत में नमाज़ अदा होती है।

अज़ान और फ़र्ज़ नमाज़ के दरमियान जो पन्दरह मिनट या ज़्यादा का वक़्फ़ा (अंतराल) रखा जाता है यह वक़्फ़ा इसी लिये रखा जाता है ताकि इस वक़्फ़े के दौरान इनसान ये तम्हीदात (नमाज़ से पहले करने वाले काम) पूरी करे। यानी इत्मीनान से वुज़ू करे, फिर तहिय्यतुल्-वुज़ू और तहिय्यतुल्-मस्जिद इत्मीनान से अदा करे और फिर नमाज़ से पहले की सुन्नतें अदा करें।

इन सब तम्हीदात (आरंभिकाओं) के बाद जब फ़र्ज़ नमाज़ के लिये खड़ा होगा तो इन्शा-अल्लाह तआ़ला ख़ुशू यक्सूई और अल्लाह तआ़ला की तरफ़ तवज्जोह हासिल होगी। इन तम्हीदात में चन्द मिनट ख़र्च होते हैं। लेकिन इनकी वजह से हमारी नमाज़ें दुरुस्त हो जायेंगी और उसके नतीजे में दुनिया व आख़िरत की कामयाबी हासिल हो जायेगी।

ख़्यालात की परवाह मत करो

उसके बाद यह भी अर्ज़ कर दूँ कि इन तम्हीदात (शुरूआती

कामों) को अन्जाम देने के बाद फिर भी फ़र्ज़ नमाज़ में ख़्यालात आते हैं तो इस सूरत में बिल्कुल घबराना नहीं चाहिये। अगर वे ख़्यालात ग़ैर-इख़्तियारी तौर पर आ रहे हैं तो अल्लाह तआला के यहाँ माफ़ हैं। बाज़ लोग इन ख़्यालात की वजह से उस नमाज़ की नाक़द्री करना शुरू कर देते हैं। चुनाँचे बहुत से लोग यह कहते हैं कि हमारी नमाज़ क्या है? हम तो टक्करें मारते हैं। बहुत से लोग यह कहते हैं कि हमारी नमाज़ बिल्कुल बेकार है। इसलिये कि उसमें तो ख़्यालात बहुत आते हैं और खुशू बिल्कुल नहीं होता।

इन सज्दों की क़द्र करो

याद रखिये! ये सब नाक़द्री की बातें हैं और अल्लाह तआला को ये बातें पसन्द नहीं। अरे यह तो देखो कि अल्लाह तआला के फ़ज़्ल व करम से नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ तो हुई। बारगाहे इलाही में सज्दा करने की तौफ़ीक़ तो मिली। पहले इस तौफ़ीक़ और नेमत पर शुक्र अदा करो कि उनके दरबार में आकर नमाज़ अदा कर ली। न जाने कितने लोग हैं जो इस नेमत से मेहरूम हैं। अगर हम भी मेहरूम हो गये होते तो कितनी बड़ी मेहरूमी की बात होती। अल्लाह तआला ने अपने दरबार में हाज़िरी की जो तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी यह कोई मामूली नेमत नहीं।

क़बूल हो कि न हो फिर भी एक नेमत है
वह सज्दा जिसको तेरे आस्ताँ से निस्बत है

तेरे आस्ताने पर सर टेकने का एक ज़ाहिरी मौक़ा जो मिल गया यह भी बहुत बड़ी नेमत है। लिहाज़ा इस पर शुक्र अदा करो। अलबत्ता अपनी तरफ़ से जो कोताही हुई है और खुशू हासिल नहीं हुआ, ख़्यालात आते रहे, इस पर इस्तिग़फ़ार (अल्लाह से माफ़ी तलब) करो।

नमाज़ के बाद के कलिमात

हज़रत अबू बक्र सिद्दीक़ रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि इनसान

हर फ़र्ज़ नमाज़ के बाद दो काम कर ले- एक यह कि "अल्हम्दु लिल्लाह" कहे और दूसरे "अस्तग़िफ़रुल्लाह" कहे। अल्हम्दु लिल्लाह के ज़रिये इस बात पर शुक्र कि या अल्लाह! आपने अपने दरबार में हाज़िरी की और नमाज़ पढ़ने की तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी। और "अस्तग़िफ़रुल्लाह" इस बात पर कि या अल्लाह! आपने तौफ़ीक़ अता फ़रमा दी थी, लेकिन मैं इस नमाज़ का हक़ अदा नहीं कर सका और जैसी नमाज़ पढ़नी चाहिये थी वैसी नमाज़ न पढ़ सका। मैं इस पर इस्तिग़फ़ार करता हूँ।

हदीस में आता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम हर नमाज़ का सलाम फैरने के बाद तीन बार "अस्तग़िफ़रुल्लाह, अस्तग़िफ़रुल्लाह, अस्तग़िफ़रुल्लाह" पढ़ा करते थे। हालाँकि नमाज़ पढ़ी है, कोई गुनाह नहीं किया। लेकिन इस बात पर इस्तिग़फ़ार किया करते थे कि या अल्लाह! जैसी नमाज़ आपकी शान के मुताबिक़ पढ़नी चाहिये थी वैसी नमाज़ हम नहीं पढ़ सके। इस वजह से इस्तिग़फ़ार कर रहे हैं।

ख़ुलासा

बहरहाल! इस नमाज़ की नाक़द्री भी न करो और अपने को अच्छा समझने और घमण्ड में भी मुब्तला न हो। अल्लाह तआला ने जो तौफ़ीक़ दी है उस पर शुक्र अदा करो, और जो कोताही हुई है उस पर इस्तिग़फ़ार करो और अपनी ताक़त की हद तक इस नमाज़ को बेहतर बनाने की फ़िक्र जारी रखो, और सारी उम्र ऐसा करते रहे तो उम्मीद है कि अल्लाह तआला अपनी रहमत से क़बूल फ़रमा लेंगे।

अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल से इस पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰہِ رَبِّ الْعٰلَمِیْنَ۝

बिस्मिल्लाहिर्रह्मानिर्रहीम

बुराई का बदला अच्छाई से दो

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْعٰدُوْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۷)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

तम्हीद

पिछले चन्द जुमों से सूरः मोमिनून की शुरू की आयतों का बयान चल रहा है। इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने मोमिनों की उन

सिफ़ात को बयान किया है जो उनकी दुनिया व आख़िरत की फ़लाह और कामयाबी की सबब हैं। लिहाज़ा अगर मुसलमान चाहते हैं कि उनको दुनिया व आख़िरत की कामयाबी हासिल हो तो उनके लिए उन सिफ़ात का एहतिमाम करना ज़रूरी है जो इन आयतों में बयान की गयी हैं। उनमें से पहली सिफ़त जो इन आयात में बयान की गयी है वह "नमाज़ में ख़शू इख़्तियार करना" है। इसका मुफ़स्सल (विस्तृत) बयान अल्हम्दु लिल्लाह हो चुका है।

मोमिनों की दूसरी सिफ़त

दूसरी सिफ़त या दूसरा अमल जो इन आयतों में बयान किया गया है, वह है:

وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ۝

यानी कामयाब होने वाले मोमिन वे हैं जो बेकार चीज़ों से बचते हैं और किनारा करते हैं। आयते करीमा के दो मतलब हो सकते हैं एक मतलब यह है कि अगर कोई शख़्स उनके साथ बेहूदा गुफ़्तगू करे या बेहूदा मामला करे तो उसका जवाब तुर्की-ब-तुर्की देने के बजाए उससे किनारा कर लेते हैं और अपने आपको बेकार की बातों से और बेहूदा कामों से बचाते हैं।

हज़रत शाह इस्माईल शहीद का वाक़िआ

मैंने अपने वालिद माजिद रहमतुल्लाहि अ़लैहि से हज़रत शाह इस्माईल शहीद रहमतुल्लाहि अ़लैहि का वाक़िआ सुना। ऐसी बुज़ुर्ग हस्ती कि क़रीब के गुज़रे ज़माने में उसकी नज़ीर मिलनी मुश्किल है। शाही ख़ानदान के शहज़ादे थे। अल्लाह तआ़ला के दीन को बुलन्द करने के लिए निकल पड़े और क़ुर्बानियाँ दीं।

एक बार दिल्ली की जामा मस्जिद में ख़िताब फ़रमा रहे थे। ख़िताब (तक़रीर) के दौरान भरे मजमे में एक शख़्स खड़ा हुआ और

कहने लगा (अल्लाह की पनाह) हमने सुना है कि आप हराम की औलाद हैं। इतने बड़े आलिम और शहज़ादे को एक बड़े मजमे में यह गाली दी और वह मजमा भी मोतकिदों का था।

मेरे वालिद साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि हम जैसा कोई आदमी होता तो उसको सज़ा देता, अगर वह सज़ा न भी देता तो उसके मोतकिद उसकी तिक्का-बोटी कर देते। वरना कम से कम उसको तुर्की-ब-तुर्की यह जवाब तो दे ही देते कि तू हरामी, तेरा बाप हरामी। लेकिन हज़रत मौलाना शाह इस्माईल शहीद रहमतुल्लाहि अलैहि जो पैग़म्बराना दावत के हामिल (वाहक) थे, उन्होंने जवाब में फ़रमायाः

"आपको ग़लत इत्तिला मिली है। मेरी माँ के निकाह के गवाह तो आज भी दिल्ली में मौजूद हैं।"

उस गाली को एक मसला बना दिया लेकिन गाली का जवाब गाली से नहीं दिया।

तुर्की-ब-तुर्की जवाब मत दो

लिहाज़ा ताने का जवाब ताने से न दिया जाये। अगरचे शरीअत में तुम्हें यह हक़ हासिल है कि जैसी दूसरे शख़्स ने तुम्हें गाली दी है, तुम भी वैसी ही गाली उसे दे दो। लेकिन हज़राते अंबिया अलैहिमुस्सलाम और उनके वारिसों (यानी दीन के आलिमों) ने इन्तिक़ाम का यह हक़ कभी इस्तेमाल नहीं फ़रमाया बल्कि हमेशा माफ़ कर देने और दरगुज़र कर देने का शेवा (तरीक़ा और चलन) रहा है और अंबिया अलैहिमुस्सलाम के वारिसों का भी यही शेवा रहा है।

इन्तिक़ाम के बजाये माफ़ करो

अरे भाई! अगर किसी ने तुम्हें गाली दे दी तो तुम्हारा क्या बिगड़ा? तुम्हारी कौनसी आख़िरत ख़राब हुई? बल्कि तुम्हारे तो दर्जों में

इज़ाफ़ा हुआ। अगर तुम इन्तिक़ाम (बदला) नहीं लोगे बल्कि माफ़ कर दोगे तो अल्लाह तबारक व तआला तुम्हें माफ़ कर देंगे। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इरशाद फ़रमाते हैं कि जो शख़्स दूसरे की ग़लती को माफ़ कर दे तो अल्लाह तआला उसको उस दिन माफ़ फ़रमायेंगे जिस दिन वह माफ़ी का सबसे ज़्यादा मोहताज होगा, यानी क़ियामत के दिन। लिहाज़ा इन्तिक़ाम लेने की फ़िक्र छोड़ दो, माफ़ कर दो और दरगुज़र कर दो।

बुज़ुर्गों की विभिन्न शानें

एक बुज़ुर्ग से किसी ने सवाल किया कि हज़रत हमने सुना है कि औलिया-ए-किराम की शानें अजीब व ग़रीब होती हैं, किसी का कोई रंग है, किसी का कोई रंग है और किसी की कोई शान है। मेरा दिल चाहता है कि उन औलिया-ए-किराम की मुख़्तलिफ़ शानें देखूँ कि वे क्या शानें होती हैं। उन बुज़ुर्ग ने उनसे फ़रमाया कि तुम किस चक्कर में पड़ गये, औलिया और बुज़ुर्गों की शानें देखने की फ़िक्र में मत पड़ो बल्कि अपने काम में लगो। उन साहिब ने ज़िद की कि नहीं! मैं ज़रा देखना चाहता हूँ कि दुनिया में कैसे-कैसे बुज़ुर्ग होते हैं।

उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि अगर तुम देखना ही चाहते हो तो ऐसा करो कि दिल्ली में फ़लाँ मस्जिद में चले जाओ, वहाँ तुम्हें तीन बुज़ुर्ग अपने ज़िक्र व अज़कार में मशग़ूल नज़र आयेंगे, तुम जाकर हर एक की पुश्त पर एक मुक्का मार देना। फिर देखना कि औलिया-ए-किराम (अल्लाह वालों) की शानें क्या होती हैं।

चुनाँचे वह साहिब गये, वहाँ जाकर देखा तो वाक़ई तीन बुज़ुर्ग बैठे हुए ज़िक्र में मशग़ूल हैं। उन्होंने जाकर पहले बुज़ुर्ग को पीछे से मुक्का मार दिया तो उन्होंने पलटकर देखा तक नहीं बल्कि अपने ज़िक्र व वज़ीफ़ों में मशग़ूल रहे। जब दूसरे बुज़ुर्ग को मुक्का मारा तो उन्होंने भी पलटकर मुक्का मार दिया और फिर अपने काम में मशग़ूल हो

गये। जब तीसरे बुज़ुर्ग को मुक्का मारा तो उन्होंने पलटकर उनका हाथ सहलाना शुरू कर दिया कि आपको चोट तो नहीं लगी।

उसके बाद यह शख़्स उन बुज़ुर्ग के पास वापस आये जिन्होंने इसको भेजा था। उन बुज़ुर्ग ने उनसे पूछा कि क्या हुआ? उन्होंने बताया कि बड़ा अजीब किस्सा हुआ। जब मैंने पहले बुज़ुर्ग को मुक्का मारा तो उन्होंने पलटकर मुझे देखा भी नहीं और जब दूसरे बुज़ुर्ग को मुक्का मारा तो उन्होंने भी पलटकर मुझे मुक्का मार दिया, और जब तीसरे बुज़ुर्ग को मुक्का मारा तो उन्होंने पलटकर मेरा हाथ सहलाना शुरू कर दिया।

उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि अच्छा यह बताओ कि जिन्होंने तुम्हें मुक्का मारा था उन्होंने ज़बान से भी कुछ कहा था? उन साहिब ने बताया कि ज़बान से तो कुछ नहीं कहा, बस मुक्का मारा और फिर अपने काम में मश्गूल हो गये।

मैं अपना वक़्त बदला लेने में क्यों ज़ाया करूँ

उन बुज़ुर्ग ने फ़रमाया कि अब सुनो! पहले बुज़ुर्ग जिन्होंने बदला नहीं लिया, उन्होंने यह सोचा कि मैं अपना वक़्त बदला लेने में क्यों ज़ाया करूँ। अगर इसने मुझे मुक्का मारा तो मेरा क्या बिगड़ गया, अब मैं पीछे मुडूँ और यह देखूँ कि किसने मारा है और फिर उसका बदला लूँ। जितना वक़्त इसमें ख़र्च होगा वह वक़्त मैं अल्लाह तआला के ज़िक्र में क्यों न ख़र्च कर दूँ।

पहले बुज़ुर्ग की मिसाल

उन पहले बुज़ुर्ग की मिसाल ऐसी है जैसे एक शख़्स को बादशाह ने बुलाया और उससे कहा कि तुम मेरे पास आओ, मैं तुम्हें आलीशान इनाम दूँगा। अब वह शख़्स उस इनाम के शौक़ में दौड़ता हुआ बादशाह के महल की तरफ़ जा रहा है। वक़्त कम रह गया है

और उसको वक़्त पर पहुँचाता है।

रास्ते में एक शख़्स ने उसको मुक्का मार दिया, अब यह शख़्स उस मुक्का मारने वाले से उलझेगा या अपना सफ़र जारी रखेगा कि मैं जल्द से जल्द किसी तरह बादशाह के पास पहुँच जाऊँ? ज़ाहिर है कि उस मुक्का मारने वाले से नहीं उलझेगा बल्कि वह तो इस फ़िक्र में रहेगा कि मैं किसी तरह जल्द से जल्द बादशाह के पास पहुँच जाऊँ और जाकर उससे इनाम वसूल करूँ। इसी तरह यह बुज़ुर्ग उस मुक्का मारने वाले से नहीं उलझे बल्कि अपने ज़िक्र में मशग़ूल रहे, ताकि वक़्त ज़ाया न हो।

दूसरे बुज़ुर्ग का अन्दाज़

दूसरे बुज़ुर्ग जिन्होंने बदला ले लिया, उन्होंने यह सोचा कि शरीअत ने यह हक़ दिया है कि जितनी ज़्यादती कोई शख़्स तुम्हारे साथ करे, उतनी ज़्यादती तुम भी उसके साथ कर सकते हो। उससे ज़्यादा नहीं कर सकते। अब तुमने उनको एक मुक्का मारा तो उन्होंने भी तुम्हें एक मुक्का मार दिया। तुमने ज़बान से कुछ नहीं कहा तो उन्होंने भी ज़बान से कुछ नहीं कहा।

बदला लेना भी ख़ैरख़्वाही है

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि बाज़े बुज़ुर्गों से यह जो नक़ल किया गया है कि उन्होंने अपने साथ होने वाली ज़्यादती का बदला ले लिया, यह बदला लेना भी दर हक़ीक़त उस शख़्स की ख़ैरख़्वाही (भला चाहने) की वजह से होता है। इसलिए कि बाज़े औलिया-अल्लाह का यह हाल होता है कि अगर कोई शख़्स उनको तकलीफ़ पहुँचाये या उनकी शान में कोई गुस्ताख़ी करे और वे सब्र कर जायें तो उनके सब्र के नतीजे में वह शख़्स तबाह व बरबाद हो जाता है।

हदीसे कुदसी में अल्लाह तआ़ला फ़रमाते हैं:

من عادیٰ لی ولیاً فقد آذنتہ بالحرب.

जो शख़्स मेरे किसी वाली से दुश्मनी करे, उसके लिए मेरी तरफ़ से ऐलाने जंग है।

बहुत सी बार अल्लाह तआ़ला अपने प्यारों के साथ की हुई ज़्यादती पर ऐसा अ़ज़ाब नाज़िल फ़रमाते हैं कि उस अ़ज़ाब से अल्लाह तआ़ला हिफ़ाज़त फ़रमाये। क्योंकि उस वली का सब्र उस शख़्स पर पड़ जाता है। इसी वजह से अल्लाह वाले कई बार अपने साथ की हुई ज़्यादती का बदला ले लेते हैं ताकि उसका मामला बराबर हो जाये, कहीं ऐसा न हो कि अल्लाह का अ़ज़ाब उस पर नाज़िल हो जाये।

अल्लाह तआ़ला क्यों बदला लेते हैं?

हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि फ़रमाते हैं कि अगर किसी शख़्स को इस बात पर इश्काल (शुब्हा और एतिराज़) हो कि अल्लाह तआ़ला का यह अ़जीब मामला है कि औलिया-अल्लाह तो इतने शफ़ीक़ होते हैं कि वे अपने ऊपर की हुई ज़्यादती का बदला नहीं लेते, लेकिन अल्लाह तआ़ला अ़ज़ाब देने पर तुले हुए हैं कि अगर बदला न लिया जाये तो वह ज़रूर अ़ज़ाब देंगे। इसका मतलब यह हुआ कि औलिया-अल्लाह की शफ़क़त (मेहरबानी और रहमदिली) अल्लाह तआ़ला की शफ़क़त और रहमत के मुक़ाबले में ज़्यादा हो गयी।

फिर इसका जवाब देते हुए फ़रमाया कि बात दर असल यह कि शेरनी को अगर कोई छेड़ दे तो वह शेरनी नज़र-अन्दाज़ कर दे जाती है और बदला नहीं लेती और उस पर हमला नहीं करती, लेकिन अगर कोई जाकर उस शेरनी के बच्चों को छेड़ दे तो फिर शेरनी उसको बरदाश्त नहीं करती बल्कि छेड़ने वाले पर हमला कर देती है।

इसी तरह अल्लाह तआ़ला की शान में लोग गुस्ताख़ियाँ करते हैं, कोई शिर्क कर रहा है, कोई अल्लाह तआ़ला के वजूद का इनकार कर

रहा है, मगर अल्लाह तआला अपने तहम्मुल (बरदाश्त) से उसको दरगुज़र फ़रमा देते हैं, लेकिन औलिया-अल्लाह (अल्लाह के वली) जो अल्लाह तआला के प्यारे हैं, उनकी शान में गुस्ताख़ी करना अल्लाह तआला को बरदाश्त नहीं होता, इसलिए यह गुस्ताख़ी इनसान को तबाह कर देती है।

लिहाज़ा जहाँ-कहाँ यह नक़ल किया गया है कि किसी अल्लाह के वली ने बदला ले लिया, वह बदला लेना उसकी ख़ैरख़्वाही के लिए होता है, क्योंकि अगर बदला न लिया तो न मालूम अल्लाह तआला का क्या अ़ज़ाब उस पर नाज़िल हो जायेगा।

तीसरे बुज़ुर्ग का अन्दाज़

जहाँ तक तीसरे बुज़ुर्ग का ताल्लुक़ है जिन्होंने तुम्हारे हाथ सहलाना शुरू कर दिया था। उनको अल्लाह तआला ने अपनी मख़्लूक़ पर रहमत और शफ़क़त का वस्फ़ (ख़ूबी और सिफ़त) अ़ता फ़रमाया है, इसलिए उन्होंने पलटकर हाथ सहलाना शुरू कर दिया।

पहले बुज़ुर्ग का तरीक़ा सुन्नत था

लेकिन असल तरीक़ा सुन्नत का वह है जिसको पहले बुज़ुर्ग ने इख़्तियार फ़रमाया। इसलिए कि अगर किसी ने तुम्हें नुक़सान पहुँचाया है तो मियाँ! कहाँ तुम उससें बदला लेने के चक्कर में पड़ गये, क्योंकि अगर तुम बदला ले लोगे तो तुम्हें क्या फ़ायदा मिल जायेगा? बस इतना ही तो होगा कि सीने की आग ठंडी हो जायेगी, लेकिन अगर तुम उसको माफ़ कर दोगे और दरगुज़र कर दोगे तो सीने की आग क्या बल्कि जहन्नम की आग भी ठंडी हो जायेगी। इन्शा-अल्लाह, अल्लाह तआला जहन्नम की आग से निजात अ़ता फ़रमायेंगे।

माफ़ करना अज्र व सवाब सबब है

आजकल हमारे घरों में, ख़ानदानों में, मिलने जुलने वालों में, दिन

रात यह मसाइल पेश आते रहते हैं कि फ़लाँ ने मेरे साथ यह कर दिया और फ़लाँ ने यह कर दिया। अब उससे बदला लेने की सोच रहे हैं, दूसरों से शिकायत करते फिर रहे हैं, उसको ताना दे रहे हैं, दूसरों से उसकी बुराई और ग़ीबत कर रहे हैं, हालाँकि ये सब गुनाह के काम हैं। लेकिन अगर तुम माफ़ कर दो और दरगुज़र कर दो तो तुम बड़ी फ़ज़ीलत और सवाब के हक़दार बन जाओगे। कुरआन करीम में अल्लाह तआ़ला का इरशाद है:

وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ إِنَّ ذٰلِكَ لَمِنْ عَزْمِ الْأُمُوْرِ.

जिसने सब्र किया और माफ़ कर दिया बेशक यह बड़े हिम्मत के कामों में से है।

दूसरी जगह इरशाद फ़माया कि:

اِدْفَعْ بِالَّتِيْ هِيَ اَحْسَنُ فَإِذَا الَّذِيْ بَيْنَكَ وَبَيْنَهٗ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهٗ وَلِيٌّ حَمِيْمٌ .

दूसरे की बुराई का बदला अच्छाई से दो, इसका नतीजा यह होगा कि जिनके साथ अ़दावत (दुश्मनी) है, वह सब तुम्हारे मुरीद हो जायेंगे। लेकिन उसके साथ-साथ यह भी इरशाद फ़रमाया:

وَمَا يُلَقّٰهَا اِلَّا الَّذِيْنَ صَبَرُوْا وَمَا يُلَقّٰهَا اِلَّا ذُوْ حَظٍّ عَظِيْمٍ ○

यानी यह अ़मल उन्हीं को नसीब होता है जिनको अल्लाह तआ़ला सब्र की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाते हैं और यह दौलत बड़े नसीब वाले को हासिल होती है।

हज़राते अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम का अन्दाज़े जवाब

हज़राते अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम का तरीक़ा यह है कि वे ताना नहीं देते, यहाँ तक कि अगर कोई सामने वाला शख़्स ताना भी दे तो भी जवाब में ये हज़रात ताना नहीं देते।

ग़ालिबन हज़रत हूद अ़लैहिस्सलाम की क़ौम का वाक़िआ़ है कि उनकी क़ौम ने उनसे कहा कि:

اِنَّا لَنَرٰكَ فِيْ سَفَاهَةٍ وَّاِنَّا لَنَظُنُّكَ مِنَ الْكٰذِبِيْنَ○

नबी से कहा जा रहा है कि हमारा यह ख़्याल है कि तुम आला दर्जे के बेवक़ूफ़ हो, अहमक़ हो और हम तुम्हें झूटों में से समझते हैं। तुम झूटे मालूम होते हो। वे अंबिया अलैहिमुस्सलाम जिन पर हिक्मत (अक़्लमन्दी व समझदारी) और सिद्क़ (सच्चाई) क़ुर्बान हैं, उनके बारे में ये शब्द कहे जा रहे हैं। लेकिन दूसरी तरफ़ जवाब में पैग़म्बर फ़रमाते हैं:

يٰقَوْمِ لَيْسَ بِىْ سَفَاهَةٌ وَّلٰكِنِّىْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○

ऐ क़ौम! मैं बेवक़ूफ़ नहीं हूँ बल्कि मैं अल्लाह रब्बुल-आलमीन की तरफ़ से एक पैग़ाम लेकर आया हूँ।

एक और पैग़म्बर से कहा जा रहा है कि:

اِنَّا لَنَرٰكَ فِىْ ضَلٰلٍ مُّبِيْنٍ ○

हम तुम्हें देख रहे हैं कि तुम गुमराही में पड़े हुए हो।

जवाब में पैग़म्बर फ़रमाते हैं:

يٰقَوْمِ لَيْسَ بِىْ ضَلٰلَةٌ وَّلٰكِنِّىْ رَسُوْلٌ مِّنْ رَّبِّ الْعٰلَمِيْنَ ○

ऐ क़ौम! मैं गुमराह नहीं हूँ बल्कि मैं अल्लाह रब्बुल्-आलमीन की तरफ़ से पैग़म्बर बनकर आया हूँ।

रह्मतुल्लिल्-आलमीन का अन्दाज़

नबी करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम जिनको रह्मतुल्लिल्-आलमीन बनाकर भेजा गया, उन पर पत्थरों की बारिश हो रही है, घुटने ख़ून से लहूलुहान हो रहे हैं, लेकिन ज़बान पर ये शब्द जारी हैं:

اَللّٰهُمَّ اهْدِ قَوْمِىْ فَاِنَّهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ○

ऐ अल्लाह! मेरी इस क़ौम को हिदायत अता फ़रमा, क्योंकि यह जाहिल है और इसको हक़ीक़त का पता नहीं है। इस वजह से मेरे साथ यह सुलूक कर रही है।

अंबिया अलैहिमुस्सलाम कभी किसी बुराई का बदला बुराई से नहीं

देते, गाली का बदला गाली से नहीं देते। वे मक्का वाले जिन्होंने मक्के में रहने वाले सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम की ज़िन्दगी अज़ाब कर दी थी, उन सहाबा-ए-किराम को तपती हुई रेत पर लिटाया जा रहा है, पत्थर की सिलें उनके सीने पर रखी जा रही हैं, उनका बायकाट किया जा रहा है, उनका खाना-पानी बन्द किया जा रहा है, उनके कत्ल के मन्सूबे बनाये जा रहे हैं। १३ साल तक हुज़ुरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम और सहाबा-ए-किराम रज़ियल्लाहु अन्हुम को ज़ुल्म की चक्की में पीसा, लेकिन उसी शहर मक्का में फ़त्हे-मक्का के मौक़े पर जब हुज़ुरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम फ़ातेह (विजयी) बनकर दाख़िल हुए तो उस मौक़े का नक़्शा खींचते हुए हज़रत अनस रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि मैं देख रहा हूँ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ऊँट पर सवार होकर फ़ातेह बनकर मक्का मुकर्रमा में इस शान से दाख़िल हो रहे हैं कि आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की गर्दन झुकी हुई है। कोई दूसरा फ़ातेह होता तो उसकी गर्दन तनी हुई होती, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की गर्दन झुकी हुई है और आँखों से आँसू जारी हैं और ज़बान मुबारक पर ये आयतें जारी हैं:

اِنَّا فَتَحْنَا لَكَ فَتْحًا مُّبِيْنًا .... (سورۂ فتح آیت ۱)

यानी हमने आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को खुली फ़तह अता फ़रमाई।

आम माफ़ी का ऐलान

और उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने आम माफ़ी का ऐलान कर दिया कि जो शख़्स हथियार डाल दे वह अमन में है। जो शख़्स अपने घर का दरवाज़ा बन्द कर ले उसको भी अमन है। जो शख़्स हरम शरीफ़ में दाख़िल हो जाये उसको भी अमन है। जो शख़्स अबू सुफ़ियान के घर में दाख़िल हो जाये उसको भी अमन है। फिर

आपने तमाम मक्के वालों को जमा करके फ़रमायाः

لاتثریب علیکم الیوم وانتم الطلقاء.

आज के दिन तुम पर कोई मलामत नहीं और तुम सब आज़ाद हो।

यह सुलूक आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन लोगों के साथ किया जो आपके ख़ून के प्यासे थे।

इन सुन्नतों पर भी अ़मल करो

बहरहाल! अंबिया अ़लैहिमुस्सलाम की सुन्नत यह है कि बुराई का जवाब बुराई से मत दो, गाली का जवाब गाली से मत दो, बल्कि अपने मुक़ाबिल (सामने वाले) के साथ एहसान करो। हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ज़िन्दगी के जितने तरीक़े हैं वे सब सुन्नत हैं, हमने सिर्फ़ चन्द ज़ाहिरी चीज़ों का नाम सुन्नत रख लिया है- मिसाल के तौर पर दाढ़ी रख लेना, ख़ास तरीक़े का लिबास पहन लेना। जितनी सुन्नतों पर भी अ़मल की तौफ़ीक़ हो जाये, वह अल्लाह तआ़ला की नेमत है, लेकिन सुन्नतें सिर्फ़ इनके अन्दर सीमित नहीं, बल्कि यह भी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की सुन्नत है कि बुराई का जवाब बुराई से न दो, गाली का जवाब गाली से न दो। अगर इस सुन्नत पर अ़मल हो जाये तो ऐसे शख़्स के बारे में क़ुरआन शरीफ़ का इरशाद है।

وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ اِنَّ ذٰلِكَ لَمِنْ عَزْمِ الْاُمُوْرِ.

जिस शख़्स ने सब्र किया और माफ़ कर दिया तो बेशक यह बड़े हिम्मत के कामो में से है।

यह बड़ी हिम्मत की बात है कि आदमी को गुस्सा आ रहा है और ख़ून खोल रहा है, उस वक़्त आदमी ज़ब्त करके हदों पर क़ायम रहे और सामने वाले को माफ़ कर दे और रास्ता बदल दे। क़ुरआन करीम का इरशाद है:

وَإِذَا مَرُّوْا بِاللَّغْوِ مَرُّوْا كِرَامًا

यानी जो बेकार और बेहूदा बातों से एक तरफ़ रहने वाले हैं।

इस सुन्नत पर अ़मल करने से दुनिया जन्नत बन जाये

आप हज़रात ज़रा सोचिये कि अगर हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की यह सुन्नत हासिल हो जाये तो फिर दुनिया में कोई झगड़ा बाक़ी रहेगा? सारे झगड़े, सारे फ़सादात, सारी अ़दावतें, सारी दुश्मनियाँ इस वजह से हैं कि आज इस सुन्नत पर अ़मल नहीं है। अगर अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से इस सुन्नत पर अ़मल की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमा दें तो यह दुनिया जो आज झगड़ों की वजह से जहन्नम बनी हुई है, जिसमें अ़दावतों की आग सुलग रही है, नबी करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इस सुन्नत पर अ़मल करने के नतीजे में जन्नत बन जाये। गुल-व-गुलज़ार बन जाये।

जब तकलीफ़ पहुँचे तो यह सोच लो

जब भी आपको किसी से तकलीफ़ पहुँचे तो यह सोचो कि मैं बदला लेने के किस चक्कर में पड़ूँ। हटाओ इसको और अल्लाह-अल्लाह करूँ और उसको माफ़ कर दूँ। असल में होता यह है कि एक शख़्स ने आपके साथ ज़्यादती कर दी, आपने उससे ज़्यादा ज़्यादती कर दी। अब दूसरा शख़्स उस ज़्यादती का बदला लेगा और फिर आप उससे बदला लेंगे। इस तरह अ़दावतों (दुश्मनियों) का एक असीम (जिसकी कोई सीमा न हो) सिलसिला शुरू हो जायेगा जिसकी कोई इन्तिहा नहीं। लेकिन आख़िरकार तुम्हें किसी मर्हले पर हार माननी पड़ेगी और उस झगड़े को ख़त्म करना होगा। लिहाज़ा तुम पहले दिन ही माफ़ करके झगड़ा ख़त्म कर दो।

चालीस साल की जंग का सबब

ज़माना-ए-जाहिलिय्यत (१) में एक लम्बी जंग हुई है जो "जंगे बसूस" कहलाती है। उस जंग की शुरूआत इस तरह हुई कि एक शख़्स की मुर्ग़ी का बच्चा था, वह किसी दूसरे शख़्स के खेत में चला गया और वहाँ जाकर उसने पौधे ख़राब कर दिये। बस इस पर लड़ाई शुरू हो गयी। उन दोनों के क़बीले और ख़ानदान वाले आ गये, पहले लाठियाँ निकलीं और फिर तलवारें निकल आयीं। फिर यह लड़ाई चालीस साल तक जारी रही। जब बाप का इन्तिक़ाल होता तो वह अपने बेटे को वसीयत कर जाता कि बेटा! और सब काम कर लेना लेकिन मेरे क़ातिलों को माफ़ न करना। सिर्फ़ एक मुर्ग़ी के बच्चे की वजह से चालीस साल तक लड़ाई चलती रही। अगर पहले दिन ही क़ुरआन करीम की इस आयतः

وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ٥

यानी कामयाब होने वाले मोमिन वे हैं जो बेकार चीज़ों से बचते हैं और किनारा करते हैं।

पर अमल कर लेते तो यह लड़ाई उसी दिन ख़त्म हो जाती। अल्लाह तआला अपने फ़ज़्ल व करम से यह बात हमारे दिलों में उतार दे और हमें इस पर अमल करने की हिम्मत और हौसला अता फ़रमा दे। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ٥

(१) हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के नबी बनकर तशरीफ़ लाने से पहले के ज़माने को ज़माना-ए-जाहिलिय्यत कहते हैं चूँकि वह ज़माना और उस वक़्त का समाज बुराइयों और ख़राबियों से भरा हुआ था। **मुहम्मद इमरान क़ासमी**

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

ज़िन्दगी के ये लम्हात बहुत क़ीमती हैं

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِفُرُوْجِهِمْ حٰفِظُوْنَ ○ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْمَامَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُوْمِيْنَ ○ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْعٰدُوْنَ ○ (سورۂ مؤمنون آیت:۱-۷)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

तम्हीद

पिछले चन्द जुमों से सूरः मोमिनून की शुरू की आयतों का बयान चल रहा है। इन आयतों में अल्लाह तआला ने मोमिनों की उन

सिफ़तों को बयान फ़रमाया है जो उनकी दुनिया और आख़िरत में फ़लाह और कामयाबी का ज़रिया हैं। इसलिए अगर मुसलमान यह चाहते हैं कि उनको दुनिया और आख़िरत की कामयाबी हासिल हो जाये तो उनको ये सिफ़तें अपने अन्दर पैदा करना ज़रूरी हैं जो सिफ़तें इन आयतों में बयान की गयी हैं। उनमें से पहली सिफ़त "नमाज़ में ख़ुशू इख़्तियार करना" है। इसका तफ़सीली बयान अल्हम्दु लिल्लाह पिछले चन्द जुमों में हो चुका।

आयत का एक मतलब

दूसरी सिफ़त जो इन आयतों में बयान की गयी है यह है:

وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○

यानी फ़लाह पाने वाले मोमिन वे हैं जो बेकार और बेहूदा कामों से अलग रहते हैं। किनारा कशी इख़्तियार करते हैं। इस आयते करीमा के दो मतलब हो सकते हैं। एक यह कि अगर कोई शख़्स तुम्हारे साथ बेहूदा गुफ़्तगू करे या बेहूदा मामला करे तो तुम तुर्की-ब-तुर्की उसका जवाब न दो। गाली का जवाब गाली से न दो। बल्कि उससे किनारा कर लो और उसको माफ़ कर दो। इसकी तफ़सील पिछले जुमे में अर्ज़ कर दी थी।

आयत का दूसरा मतलब

इस आयते करीमा का दूसरा मतलब यह है कि फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले मोमिन वे हैं जो फ़ुज़ूल कामों से बचते हैं। यानी ऐसे कामों से बचते हैं जिनमें न दुनिया का कोई फ़ायदा है और न आख़िरत का कोई फ़ायदा है। "लग्व" के मायने हैं वह काम जिसका कोई फ़ायदा नहीं है बल्कि वह काम फ़ुज़ूल है। अगर कोई काम ऐसा है जिसका फ़ायदा आख़िरत में है तो यह बहुत अच्छी बात है, सुब्हानल्लाह। और अगर कोई काम ऐसा है जिसका फ़ायदा दुनिया में है, तो वह भी ठीक

है। लेकिन ऐसा काम जिसका फ़ायदा न दुनिया में है और न आख़िरत में है, ऐसे काम को "लग्व और फ़ुज़ूल" कहते हैं।

काम से पहले सोचो

इस आयते करीमा ने यह बता दिया कि मोमिन को चाहिए कि वह जो भी काम करने जा रहा है, उसके बारे में पहले से यह सोचे कि इसका कोई फ़ायदा दुनिया या आख़िरत में होगा या नहीं? अगर कोई फ़ायदा है तो बेशक वह काम कर ले, लेकिन अगर कोई फ़ायदा नहीं है तो बिना वजह अपने वक़्त और समय को उस बेकार और फ़ुज़ूल काम में बरबाद न करे।

ज़िन्दगी बड़ी क़ीमती है

वजह उसकी यह है कि अल्लाह तबारक व तआ़ला ने हमें और आपको जो ज़िन्दगी अ़ता फ़रमाई है, इसका एक-एक लम्हा बड़ा क़ीमती है और एक-एक लम्हा अल्लाह तआ़ला की अमानत है। ये लम्हात हमें अल्लाह तआ़ला ने इसलिए दिये हैं ताकि हम इन लम्हात को दुनिया या आख़िरत के किसी मुफ़ीद काम में लगायें। अगर हम इन लम्हात को फ़ुज़ूल और बे-फ़ायदा कामों में ख़र्च कर रहे हैं तो यह अल्लाह तआ़ला की दी हुई ज़िन्दगी की नाक़द्री और नाशुक्री है। इसलिए फ़रमाया कि अपने आपको बे-फ़ायदा कामों में मत लगाओ और उनमें अपना वक़्त ज़ाया मत करो।

फ़ुज़ूल बहस व मुबाहसा

मिसाल के तौर पर बहुत से लोग फ़ुज़ूल बहसों में उलझते रहते हैं जिनका कोई हासिल और नतीजा नहीं। दो चार आदमी कहीं बैठ गये तो किसी विषय पर बहस शुरू हो गयी। अब एक शख़्स अपने मौक़िफ़ पर दलील पेश कर रहा है और दूसरा शख़्स अपने मौक़िफ़ पर दलील पेश कर रहा है और उस बहस व मुबाहसे के अन्दर अपना वक़्त

ज़ाया कर रहे हैं। हालाँकि अगर इस बहस का तसफ़िया भी हो जाये तो भी न दुनिया का कोई फ़ायदा हासिल होगा और न आख़िरत का कोई फ़ायदा हासिल होगा। एक मोमिन का यह काम नहीं कि वह अपने वक़्त को फ़ुज़ूल बहसों में बरबाद करे।

आजकल हमारे समाज में फ़ुज़ूल बहसों का रिवाज बहुत बढ़ गया है। कोई भी मसला उठा दिया और उसमें दो फ़रीक़ बन गये और बहस शुरू हो गयी। हालाँकि वह मसला ऐसा है कि अगर उसका तसफ़िया भी हो जाये तो दुनिया व आख़िरत का कोई फ़ायदा हासिल नहीं होगा।

एक सबक़ लेने वाला वाक़िआ

हकीमुल्-उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली साहिब थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने एक सबक़-आमोज़ वाक़िआ लिखा है कि हज़रत मिर्ज़ा मज़हर जाने जानाँ शहीद रहमतुल्लाहि अ़लैहि जो बड़े ऊँचे दर्जे के औलिया-अल्लाह में से थे। दिल्ली में रहते थे। अल्लाह तआ़ला ने उनको बड़ा ऊँचा मुक़ाम अ़ता फ़रमाया था। साथ में बड़े नाज़ुक मिज़ाज भी थे, उनकी नाज़ुक-मिज़ाजी के बड़े क़िस्से मशहूर हैं।

एक बार दो तालिब-इल्मों के दिल में ख़्याल पैदा हुआ कि हज़रत मिर्ज़ा मज़हर जाने जानाँ बड़े दर्जे के औलिया-अल्लाह में से हैं, हम उनकी ख़िदमत में जायें और उनसे बैअ़त हों और उनसे इस्लाही ताल्लुक़ क़ायम करें। चुनाँचे ये दोनों तालिब-इल्म अपने शहर "बल्ख़" से जो उस वक़्त तुर्किस्तान का हिस्सा था, वहाँ से सफ़र करके दिल्ली पहुँचे। दिल्ली की जिस मस्जिद में हज़रत मिर्ज़ा साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि रहते थे, उस मस्जिद में गये और वुज़ू करना शुरू किया। हज़रत मिर्ज़ा साहिब भी कहीं क़रीब थे, अलबत्ता ये दोनों तालिब-इल्म हज़रत मिर्ज़ा साहिब को पहचानते नहीं थे।

वुज़ू के दौरान एक तालिब इल्म ने दूसरे से पूछा कि यह हौज़

बड़ा है या हमारी बल्ख़ की मस्जिद का हौज़ बड़ा है? दूसरे तालिब इल्म ने कहा कि मुझे यह बड़ा मालूम होता है। पहले तालिब-इल्म ने कहा कि नहीं! बल्ख़ की मस्जिद का हौज़ बड़ा है। इस पर दोनों के दरमियान बहस शुरू हो गयी। एक कहता कि बल्ख़ वाला हौज़ बड़ा है और दूसरा कहता कि दिल्ली वाला हौज़ बड़ा है और दलीलें देनी शुरू कर दीं। और वुज़ू भी करते रहे लेकिन वुज़ू ख़त्म हो गया और कोई फ़ैसला नहीं हुआ।

फ़ुज़ूल कामों का शौक़ है

फिर उन दोनों ने नमाज़ पढ़ी और नमाज़ के बाद हज़रत मिर्ज़ा साहिब की ख़िदमत में हाज़िर हुए। हज़रत ने पूछा कि कैसे आना हुआ? उन्होंने जवाब दिया कि हज़रत! हम आप से बैअ़त होने और इस्लाही ताल्लुक़ क़ायम करने के लिए आये हैं। हज़रत मिर्ज़ा साहिब ने फ़रमाया कि बैअ़त का मामला तो बाद में होगा पहले यह बताओ कि यह फ़ैसला हुआ या नहीं कि दिल्ली का हौज़ बड़ा है या बल्ख़ का हौज़ बड़ा है? अब वे दोनों बड़े शर्मिन्दा हुए और कहा कि हज़रत! फ़ैसला तो हुआ नहीं। फ़रमाया कि अच्छा ऐसा करो कि पहले यहाँ का हौज़ नापो और फिर वापस जाकर बल्ख़ का हौज़ नापो और इस मसले का तसफ़िया करो। बैअ़त की बात बाद में करना।

आप दोनों की इस बहस से एक बात तो यह मालूम हुई कि आप दोनों को फ़ुज़ूल कामों में मशग़ूल रहने का बड़ा शौक़ है। फ़र्ज़ करो कि अगर यह पता भी चल गया कि बल्ख़ का हौज़ बड़ा है या दिल्ली का हौज़ बड़ा है तो इससे दुनिया व आख़िरत में क्या फ़ायदा हासिल होगा? तुमने इस फ़ुज़ूल बहस में अपने आपको लगा रखा है।

बे-तहक़ीक़ बात कहना

दूसरी बात यह मालूम हुई कि आप दोनों के अन्दर तहक़ीक़ और एहतियात नहीं है। बग़ैर नापे हुए तुम में से एक ने यह दावा कर दिया

कि यहाँ का हौज़ बड़ा है और दूसरे ने यह दावा कर दिया कि वहाँ का हौज़ बड़ा है। हालाँकि तुम में से किसी को यक़ीनी इल्म हासिल नहीं है और फिर भी आपस में बहस करनी शुरू कर दी। ये दोनों बातें एक मोमिन की शान के ख़िलाफ़ हैं। मोमिन की शान यह है:

وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ٥

मोमिन वे हैं जो फ़ुज़ूल और बेकार बहस से परहेज़ करते हैं।

शरीअ़त के हुक्म में तहक़ीक़ करना

यहाँ तक फ़रमाया गया कि जिस चीज़ के बारे में शरीअ़त ने कोई ख़ास हुक्म नहीं दिया बल्कि उसके बारे में शरीअ़त ने छूट दी है तो उसके अन्दर अतिरिक्त तहक़ीक़ में पड़ना भी पसन्द नहीं किया गया। इसलिए कि शरीअ़त ने जब आ़म हुक्म दिया है और उसके लिए कोई ख़ास हुक्म मुक़र्रर नहीं किया तो ख़्वाह-मख़्वाह उसकी फ़िक्र में पड़ना और उसके अन्दर बहस करना कोई अ़क़्लमन्दी का काम नहीं।

इमाम अबू हनीफ़ा का ख़ूबसूरत जवाब

हज़रत इमाम अबू हनीफ़ा रहमतुल्लाहि अ़लैहि के पास एक साहिब आये और कहा कि एक मसला पूछना है। इमाम साहिब ने पूछा कि क्या मसला है? उन साहिब ने कहा कि मसला यह है कि मेरे घर के क़रीब एक नहर है, मैं उस नहर में नहाने के लिए जाता हूँ। जब मैं उस नहर में दाख़िल होता हूँ तो नहर में दाख़िल होते वक़्त मुझे अपना मुँह पश्चिम की तरफ़ करना चाहिए या पूरब की तरफ़ करना चाहिए? यानी क़िब्ले की तरफ़ करूँ या दूसरी तरफ़ करूँ? इमाम साहिब ने जवाब दिया कि तुम अपना मुँह अपने कपड़ों की तरफ़ कर लिया करो कि कोई तुम्हारे कपड़े लेकर न भाग जाये।

इमाम साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि का मक़सद यह बतलाना था कि जब शरीअ़त ने तुम्हारे ऊपर कोई पाबन्दी नहीं लगाई कि नहाते वक़्त

अपना मुँह पश्चिम की तरफ़ करो या पूरब की तरफ़ करो, तो फिर ख़्वाह-मख़्वाह अपने को पाबन्द करना अक्लमन्दी का काम नहीं।

बनी इस्राईल का गाय के बारे में सवालात करना

कुरआन करीम की सूरः बक़रह् में यह वाक़िआ आता है कि बनी इस्राईल से कहा गया कि अल्लाह तआ़ला के नाम पर एक गाय ज़िबह करो। कोई कैद और कोई शर्त नहीं लगाई। अब सीधी सी बात यह थी कि वह कोई भी गाय ज़िबह कर देते तो हुक्म पर अ़मल हो जाता। लेकिन बनी इस्राईल ने सवालात शुरू कर दिये कि वह गाय कैसी होनी चाहिए? उसका रंग कैसा होना चाहिए? उसकी खाल कैसी होनी चाहिए? वह गाय स्त्री लिंग की हो या पुरुष लिंग की हो? जब उन्होंने सवालात करके खुद अपने ऊपर पाबन्दियाँ आयद करना शुरू कीं तो अल्लाह तआ़ला ने भी बता दिया कि गाय ऐसी हो। इन सिफ़ात की हामिल (वाहक) हो और उसका रंग पीला हो। अब उस ज़माने में पीले रंग की गाय मिलती नहीं थी, तलाश करके थक गये, आख़िरकार बड़ी मुश्किल से एक साहिब के पास वह गाय मिल गयी फिर उसको ज़िबह किया। कुरआन करीम उनके बारे में फ़रमाता है:

فَذَبَحُوْهَا وَمَا كَادُوْا يَفْعَلُوْنَ (سورۃ البقرۃ: آیت ۷۱)

यानी आख़िर में जाकर उन्होंने वह गाय ज़िबह की, वरना क़रीब था कि वे ज़िबह न कर पाते। इसलिए कि उन्होंने ख़्वाह-मख़्वाह अपने ऊपर पाबन्दियाँ आयद कर ली थीं।

ज़्यादा सवालात मत करो

कुरआन करीम का इरशाद है:

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَسْئَلُوْا عَنْ اَشْيَآءَ اِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ

ऐ ईमान वालो! ऐसी चीज़ों के बारे में सवालात मत करो कि अगर तुमसे ज़ाहिर कर दी जायें तो तुम्हारे लिए नागवारी का सबब

हो। लिहाज़ा ख़्वाह-मख़्वाह ऐसी चीज़ों के पीछे पड़ने का कोई फ़ायदा नहीं।

बेकार के सवालात की भरमार

मेरे पास लोगों के बहुत से फ़ोन आते हैं और मसाइल पूछते हैं। इस हद तक तो ठीक है कि हलाल, हराम या जायज़ और नाजायज़ का मसला पूछ लिया। लेकिन बहुत सी बार सवाल करने वाले बिल्कुल फ़ुज़ूल सवाल करते हैं।

मिसाल के तौर पर एक साहिब ने एक बार फ़ोन किया और पूछा कि अस्हाबे-कहफ़ का जो कुत्ता था उसका रंग क्या था? और यह सवाल भी उस वक़्त किया जब कि रात को सोने का वक़्त था। मैंने उनसे पूछा कि आपको कुत्ते का रंग मालूम करने की ज़रूरत कैसे पेश आयी? जवाब में कहा कि हम चन्द दोस्त बैठे हुए थे तो हमारे दरमियान यह बहस चल पड़ी। उस बहस के तसफ़िये के लिए आप से सवाल कर रहा हूँ।

मैंने उनसे कहा कि अगर तुम्हें पता चल जाये कि उस कुत्ते का रंग काला था या सफ़ेद था तो उसके नतीजे में तुम्हें दुनिया या आख़िरत का कौनसा फ़ायदा हासिल हो जायेगा? ये फ़ुज़ूल बातें हैं जिनका आप से न क़ब्र में सवाल होगा और न हश्र में सवाल होगा।

बहुत से लोग मज़हब और दीन के नाम पर ऐसी बहसें शुरू कर देते हैं और फिर उस पर आपस में मुनाज़रे हो रहे हैं। किताबें लिखी जा रही हैं। मज़मून लिखे जा रहे हैं और एक दूसरे पर तन्क़ीद हो रही है।

"यज़ीद" के बारे में सवाल

या मिसाल के तौर पर लोग यह सवाल करते हैं कि "यज़ीद" जहन्नमी है या जन्नती है? फ़ासिक़ है या नहीं? अरे भाई! अगर तुम्हें पता भी चल जाये कि यज़ीद फ़ासिक़ नहीं तो कौनसी तुम्हें ऐसी बात

मालूम हो जायेगी जिसके बारे में आख़िरत में तुमसे सवाल होगा कि यज़ीद फ़ासिक़ था या नहीं? एक मज्लिस में मेरे वालिद माजिद हज़रत मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब से किसी ने सवाल किया कि यज़ीद फ़ासिक़ था या नहीं? वालिद साहिब ने जवाब में फ़रमाया कि भाई! मैं यज़ीद के बारे में क्या बताऊँ, मुझे तो अपने बारे में फ़िक्र है कि मैं फ़ासिक़ हूँ या नहीं? जिस शख़्स को अपनी फ़िक्र पड़ी हुई हो वह दूसरे के बारे में क्या फ़िक्र करे? कुरआन करीम का इरशाद है:

تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَّا كَسَبْتُمْ وَلَا تُسْئَلُوْنَ عَمَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ٥

ये लोग हैं जो गुज़र गये। उनके आमाल उनके साथ हैं तुम्हारे आमाल तुम्हारे साथ हैं। तुमसे उनके आमाल के बारे में सवाल नहीं किया जायेगा।

लिहाज़ा वे आमाल जो ज़िन्दगी में अन्जाम देने हैं, जिनके नतीजे में जन्नत और जहन्नम का फ़ैसला होने वाला है। जो हलाल व हराम हैं और जायज़-नाजायज़ हैं, उनकी फ़िक्र करो, फ़ुज़ूल बहसों में अपने वक़्त को ज़ाया करना मोमिन का काम नहीं।

एक लम्हे में जहन्नम से जन्नत में पहुँचना

ज़िन्दगी का एक-एक लम्हा और एक-एक मिनट इतना क़ीमती है कि अगर तुम चाहो तो एक मिनट के अन्दर अपने आपको जन्नतुल् फ़िर्दौस का हक़दार बना लो। अगर एक इनसान एक मिनट को सही इस्तेमाल करे तो एक मिनट के अन्दर जहन्नम से निकल कर जन्नत में पहुँच जाये। एक सत्तर साल का काफ़िर अगर सच्चे दिल से यह कलिमा पढ़ ले:

اَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَشْهَدُ اَنَّ مُحَمَّدًا رَّسُوْلُ اللّٰهِ

अश्हदु अल्ला इला-ह इल्लल्लाहु
व अश्हदु अन्-न मुहम्मदर्रसूलुल्लाह

तो वह एक मिनट में जहन्नम से निकल कर जन्नत में पहुँच गया। एक बड़ा गुनाहगार जिसने हज़ारों लाखों गुनाह कर लिए लेकिन एक बार सच्चे दिल से कहे कि ऐ अल्लाह! मैं अपनी सारी पिछली ज़िन्दगी से तौबा करता हूँ। सारे गुनाहों से तौबा करता हूँ। जिस लम्हे में उसने तौबा कर ली, उसी लम्हे में वह अल्लाह की रहमत से जन्नत में पहुँच गया। अगर एक लम्हे के अन्दर आपने "सुब्हानल्लाह" कह दिया या "अल्हम्दु लिल्लाह" कह दिया तो हदीस शरीफ़ में आता है कि ये कलिमात इनसान के आमाल की तराज़ू को भर देते हैं।

ज़िन्दगी बहुत बड़ी नेमत है

ये सब चीज़ें अभी नज़र नहीं आ रही हैं, लेकिन जब ये आँखें बन्द होंगी और इनसान दूसरी दुनिया में पहुँचेगा तो उस वक़्त पता चलेगा कि यह ज़िन्दगी कितनी कीमती थी। लिहाज़ा जो लम्हात तुम सही काम में ख़र्च करके उसके ज़रिये जन्नत के हीरे-जवाहिरात कमा सकते हो, उन लम्हात को तुम ठीकरों और पत्थरों में ज़ाया कर रहे हो? ज़िन्दगी का एक-एक लम्हा अल्लाह तबारक व तआ़ला की नेमत है। इसी वजह से हदीस शरीफ़ में फ़रमाया कि मौत की तमन्ना मत करो, इसलिए कि तुम्हें क्या मालूम कि अगर तुम्हें ज़िन्दगी के और लम्हात मयस्सर आ जायें तो उन लम्हात में न जाने किस नेकी की तौफ़ीक़ हो जाये जो तुम्हारा बेड़ा पार कर दे। इस वजह से यह मत कहो कि या अल्लाह! मैं मर जाऊँ। अल्लाह तआ़ला ने जो ज़िन्दगी दी है, यह बड़ी अ़ज़ीम नेमत है। इस नेमत को सही इस्तेमाल करने की कोशिश करो। इस नेमत को फ़ुज़ूल बहसों में और फ़ुज़ूल कामों में ख़र्च करना मुनासिब नहीं।

मज्लिसें मत जमाओ

इसी में यह बात भी दाख़िल है कि फ़ुज़ूल मज्लिस जमाना और गप-शप करना और उसमें घन्टों गुज़ार देना अच्छा अ़मल नहीं। बल्कि

इस बात की कोशिश करो कि एक-एक लम्हा अल्लाह तआ़ला की रिज़ा में ख़र्च हो। हाँ! दुनिया के फ़ायदे के जो काम हैं, उनको करने से भी अल्लाह तआ़ला ने मना नहीं फ़रमाया। वे दुनिया के फ़ायदे के काम करो, अगर नीयत सही हो तो वे दुनिया के काम भी दीन बन जायेंगे। अगर अल्लाह तआ़ला हमारा तरीक़ा दुरुस्त कर दे और हमारी नीयत दुरुस्त कर दे तो वे काम जिनको हम दुनिया के काम कहते हैं, वे भी आख़िरत के काम बन जायेंगे।

लेकिन ऐसे काम जिनका न दुनिया में कोई फ़ायदा है और न आख़िरत में कोई फ़ायदा है, उनसे बचो।

नुस्ख़ा-ए-अक्सीर

अगर यह नुस्ख़ा हम पल्ले बाँध लें, जिस पर अ़मल करने का आसान तरीक़ा यह है कि जो काम हम करने जायें, एक लम्हे के लिए पहले यह सोच लें कि इस काम से कोई फ़ायदा दुनिया या आख़िरत का होगा नहीं? अगर फ़ायदा हो तो बेशक वह काम कर लें और अगर फ़ायदा न हो तो उस काम के पीछे न पड़ें। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से और अपनी रहमत से क़ुरआन करीम की इस आयत पर अ़मल करने की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ○

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

ज़कात की अहमियत और उसका निसाब

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِيَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ٥ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ٥ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ٥ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ٥ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ٥ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ٥ (سورۃ مؤمنون آیت:۱-۴)

آمنت باللّٰه صدق اللّٰه مولانا العظیم وصدق رسوله النبی الکریم ونحن علی ذلك من الشاهدین والشاکرین والحمد للّٰه رب العالمین ٥

तम्हीद

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! पिछले चन्द जुमों से फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले मोमिनों की सिफ़तों का बयान चल रहा है। उनमें से पहली सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि फ़लाह पाने वाले मोमिन वे हैं जो अपनी नमाज़ों में ख़ुशू इख़्तियार करने वाले हैं। दूसरी सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि जो बेकार और बेहूदा कामों से दूर रहने वाले हैं। इन दोनों सिफ़ात का तफ़सीली बयान पिछले जुमों में हो चुका। फ़लाह

पाने वाले मोमिनों की तीसरी सिफ़त यह बयान फ़रमाई कि:

وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ٥

यानी फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले मोमिन वे हैं जो ज़कात अदा करने वाले हैं।

ज़कात के दो मायने

मुफ़स्सिरीन (कुरआन की व्याख्या करने वालों) ने इस आयते करीमा के दो मतलब बयान फ़रमाये हैं। एक यह कि इससे मुराद फ़र्ज़ ज़कात की अदायगी है। और दूसरा मतलब बाज़े मुफ़स्सिरीन ने यह बयान फ़रमाया है कि यहाँ "ज़कात" के वह मशहूर मायने मुराद नहीं हैं बल्कि इसके मायने हैं "अपने अख़्लाक़ को पाक-साफ़ करना"। अ़रबी भाषा में "ज़कात" के मायने हैं "किसी भी चीज़ को गन्दगी से, नापाकी से और नजासत से पाक करना"। ज़कात को भी ज़कात इसलिए कहा जाता है कि वह इनसान के माल को पाक कर देती है। जिस माल की ज़कात न दी जाये वह माल गन्दा और नापाक है।

बहरहाल! बाज़े हज़रात ने फ़रमाया कि इस आयत में ज़कात के मायने हैं "अपने अख़्लाक़ को पाक करना" बुरे अख़्लाक़ से अपने आपको बचाना। लेकिन यह काम कि अपने आपको अच्छे अख़्लाक़ से सुसज्जित किया जाये और बुरे अख़्लाक़ से बचाया जाये, यह एक अ़मल चाहता है। इसी वजह से इस आयत में फ़रमाया:

وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ٥

यानी जो लोग अपने आपको बुरे अख़्लाक़ से बचाने के अ़मल से गुज़रते हैं और अपने अख़्लाक़ को पाक कर लेते हैं।

बहरहाल! इस आयते करीमा की ये दो तफ़सीरें हैं।

ज़कात की अहमियत

आज इस आयत के मशहूर मायने के एतिबार से तफ़सीर अ़र्ज़

करता हूँ। यानी वे लोग जो ज़कात अदा करते हैं। हर मुसलमान जानता है कि "ज़कात" इस्लाम के पाँच सतूनों में से एक सतून है और अर्कान और फ़राइज़ में से है। और जिस तरह नमाज़ फ़र्ज़ है, इसी तरह ज़कात भी फ़र्ज़ है। कुरआन करीम ने बेशुमार जगहों पर ज़कात को नमाज़ के साथ मिलाकर बयान फ़रमाया है। चुनाँचे फ़रमायाः

وَاَقِیْمُوا الصَّلٰوۃَ وَاٰتُوا الزَّکٰوۃَ.

नमाज़ क़ायम करो और ज़कात अदा करो।

इन आयतों के ज़रिये इस तरफ़ इशारा फ़रमाया कि जिस तरह नमाज़ की अदायगी इनसान के लिए फ़र्ज़ और ज़रूरी है, इसी तरह ज़कात की अदायगी भी इनसान के लिए उतने ही दर्जे में फ़र्ज़ और ज़रूरी है। नमाज़ अगर बदनी इबादत है जिसको इनसान अपने जिस्म के ज़रिये अदा करता है तो ज़कात एक माली इबादत है जिसको इनसान अपने माल से अदा करता है।

ज़कात अदा न करने पर वईद

इसके छोड़ने पर कुरआन व हदीस में बेशुमार वईदें (अज़ाब की धमकी और डाँट) आयी हैं। चुनाँचे कुरआन करीम में अल्लाह तआला ने इरशाद फ़रमायाः

وَالَّذِیْنَ یَکْنِزُوْنَ الذَّھَبَ وَالْفِضَّۃَ وَلَا یُنْفِقُوْنَھَا فِیْ سَبِیْلِ اللّٰہِ فَبَشِّرْھُمْ بِعَذَابٍ اَلِیْمٍ ۝ یَوْمَ یُحْمٰی عَلَیْھَا فِیْ نَارِ جَھَنَّمَ فَتُکْوٰی بِھَا جِبَاھُھُمْ وَجُنُوْبُھُمْ وَظُھُوْرُھُمْ ھٰذَا مَا کَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِکُمْ فَذُوْقُوْا مَا کُنْتُمْ تَکْنِزُوْنَ ۝

यानी जो लोग सोने और चाँदी का ज़ख़ीरा करके जमा करके रखते हैं और अल्लाह तआला के रास्ते में उसको ख़र्च नहीं करते, यानी जहाँ अल्लाह तआला ने ख़र्च करने का हुक्म दिया है, वहाँ ख़र्च

नहीं करते। जैसे ज़कात की अदायगी और सदक़ा-ए-फ़ित्र की अदायगी और क़ुर्बानी करने का जो हुक्म दिया है, और इसी तरह दूसरे ग़रीबों और मिस्कीनों की मदद करने का जो हुक्म दिया है, इन अहकाम पर अमल नहीं करते तो ऐसे लोगों को दर्दनाक अ़ज़ाब की ख़ुशख़बरी सुना दीजिए कि उनको दर्दनाक अ़ज़ाब होने वाला है।

फिर अगली आयत में उस अ़ज़ाब की तफ़सील बयान फ़रमाई कि जिस माल को और सोने चाँदी को उन्होंने जमा किया था, उसको जहन्नम की आग में तपाया जायेगा और फिर उनकी पेशानियाँ (माथा) उस माल से दाग़ी जायेंगी, जैसे लोहे को आग पर गरम किया जाता है और वह अंगारा बन जाता है, इसी तरह उनके माल और सोने-चाँदी को जहन्नम की आग पर गरम किया जायेगा और जब वह आग पर अंगारे की तरह बन जायेगा तो उसके बाद उनकी पेशानियाँ उससे दाग़ी जायेंगी और उनके पहलू (करवट) और पुश्तें दाग़ी जायेंगी और उनसे यह कहा जायेगा कि यह वह माल है जो तुमने अपने पास जमा करके रखा था। आज तुम उस माल का मज़ा चखो जो तुमने जमा करके रखा था। यह कितनी सख़्त वईद (अ़ज़ाब की धमकी) है जो अल्लाह तआ़ला ने ज़कात अदा न करने वालों के लिए बयान फ़रमाई। इससे पता चला कि यह ज़कात कितना बड़ा और अहम फ़रीज़ा है।

ज़कात के फ़ायदे

अल्लाह तआ़ला ने यह ज़कात का फ़रीज़ ऐसा रखा है कि इसका असल मक़सद तो अल्लाह तआ़ला के हुक्म की तामील है, लेकिन इसके फ़ायदे भी बेशुमार हैं। एक फ़ायदा यह है कि जो बन्दा ज़कात अदा करता है, अल्लाह तआ़ला उसको माल की मुहब्बत से महफ़ूज़ रखता है। चुनाँचे जिसके दिल में माल की मुहब्बत होगी, वह कभी ज़कात नहीं निकालेगा। क्योंकि कन्जूसी और माल की मुहब्बत इनसान की बदतरीन कमज़ोरी है और उसका इलाज अल्लाह तआ़ला ने ज़कात

के ज़रिये फ़रमाया है।

ज़कात का दूसरा फ़ायदा यह है कि उसके ज़रिये बेशुमार ग़रीबों को फ़ायदा पहुँचता है। मैंने एक बार अन्दाज़ा लगाया कि अगर हमारे मुल्क के तमाम लोग ठीक-ठीक ज़कात निकालें और उस ज़कात को सही जगह पर ख़र्च करें तो यक़ीनन इस मुल्क से ग़रीबी का ख़ात्मा हो सकता है। लेकिन हो यह रहा है कि बहुत से लोग ज़कात निकालते ही नहीं, और जो बहुत से लोग ज़कात निकालते हैं तो वे ठीक-ठीक नहीं निकालते, बल्कि अन्दाज़े से हिसाब-किताब के बग़ैर निकाल देते हैं। और फिर वे उसको सही जगह पर ख़र्च करने का एहतिमाम नहीं करते। इस ज़कात का मसरफ़ (ख़र्च करने की जगह) डायरेक्ट ग़रीब लोग हैं, इसलिए शरीअ़त ने ज़कात को बड़े-बड़े आ़म फ़ायदे के कामों पर ख़र्च करने की इजाज़त नहीं दी। लेकिन लोग इस मसले की परवाह नहीं करते और ज़कात को अनेक जगहों पर ख़र्च कर लेते हैं, जिसका नतीजा यह है कि ज़कात से ग़रीबों को जो फ़ायदा पहुँचना चाहिए था उनको नहीं पहुँच रहा। अगर ठीक-ठीक करके सही जगह पर ज़कात ख़र्च की जाये तो चन्द ही साल में मुल्क की काया पलट सकती है।

ज़कात अदा न करने के कारण

लेकिन यह ज़कात जितना बड़ा फ़रीज़ा है और जितने बेशुमार इसके फ़ायदे हैं, उतनी ही इसकी तरफ़ से हमारे समाज में ग़फ़लत और लापरवाही बरती जा रही है। चुनाँचे बहुत से लोग इस वजह से ज़कात अदा नहीं करते कि उनके दिलों में इस्लाम के फ़राइज़, वाजिबात और अर्कान की अहमियत ही नहीं है। जो पैसा आ रहा है आने दो, ग़नीमत है और उसको अपने अलल्ले-तलल्ले में ख़र्च करते रहो। अल्लाह तआ़ला हर मुसलमान को ऐसा बनने से महफ़ूज़ रखे, आमीन।

कुछ लोग ऐसे हैं जो यह सोचते हैं कि हम तो दीनी कामों के

लिए पैसे देते रहते हैं, कभी किसी काम के लिए और कभी किसी काम के लिए। लिहाज़ा हमारी ज़कात तो ख़ुद-ब-ख़ुद निकल रही है। अब अलग से ज़कात निकालने की क्या ज़रूरत है?

मसाइल से नावाक़फ़ियत

बाज़े लोग वे हैं जिनको पता ही नहीं कि ज़कात किस वक़्त फ़र्ज़ होती है। वे लोग ज़कात के अहकाम से नावाक़िफ़ हैं। उनको यह भी मालूम नहीं कि ज़कात किस शख़्स पर फ़र्ज़ होती है। इसका नतीजा यह है कि वे लोग यह समझते हैं कि हमारे ज़िम्मे ज़कात फ़र्ज़ ही नहीं है, हालाँकि उन पर ज़कात फ़र्ज़ है। वे ऐसा इसलिए समझ रहे हैं कि उनको सही मसला मालूम नहीं कि किस शख़्स पर ज़कात फ़र्ज़ होती है। इसके नतीजे में वे लोग ज़िन्दगी भर ज़कात की अदायगी से मेहरूम रहते हैं।

ज़कात का निसाब

ख़ूब समझ लें कि शरीअ़त ने ज़कात का एक निसाब मुक़र्रर किया है। जिस शख़्स के पास वह निसाब मौजूद होगा उस पर ज़कात फ़र्ज़ हो जायेगी। और वह निसाब साढ़े बावन तौले चाँदी है। बाज़ार में साढ़े बावन तौले चाँदी की क़ीमत मालूम कर ली जाये। आजकल के लिहाज़ से उसकी क़ीमत तक़रीबन छह हज़ार रुपये बनती है। लिहाज़ा शरीअ़त का हुक्म यह है कि अगर किसी शख़्स के पास छह हज़ार रुपये नक़द हों या सोने की शक्ल में हों या चाँदी की शक्ल या तिजारत के माल की शक्ल में हों, उस शख़्स पर ज़कात फ़र्ज़ हो जाती है। बशर्ते कि ये रुपये उसकी असली ज़रूरतों से ज़ायद हों, यानी रोज़मर्रा की ज़रूरियात और अपने बीवी बच्चों पर ख़र्च करने की ज़रूरत से फ़ालतू हों। अलबत्ता अगर किसी शख़्स पर क़र्ज़ है तो जितना क़र्ज़ है, वह उस ज़कात के निसाब से निकाला जायेगा।

मिसाल के तौर पर यह देखा जाये कि यह रक़म जो हमारे पास है, अगर उसको कर्ज़ अदा करने में ख़र्च कर दी जाये तो बाक़ी कितनी रक़म बचेगी। अगर बाक़ी छह हज़ार रुपये या उससे ज़्यादा न बचे तो फिर ज़कात वाजिब नहीं, और अगर छह हज़ार रुपये या उससे ज़ायद बचे तो ज़कात वाजिब होगी।

ज़रूरत से क्या मुराद है?

बाज़े लोग यह समझते हैं कि हमारे पास छह हज़ार रुपये तो हैं, मगर वे हमने अपनी बेटी की शादी के लिए रखे हैं और शादी ज़रूरत में दाख़िल है, लिहाज़ा उस रक़म पर ज़कात वाजिब नहीं। यह ख़्याल ग़लत है। इसलिए कि ज़रूरत से मुराद ज़िन्दगी की रोज़मर्रा की खाने पीने की ज़रूरत मुराद है।

यानी अगर वह उन रुपयों को ख़र्च कर देगा तो उसके पास खाने पीने के लिए कुछ नहीं बचेगा। अपने बीवी बच्चों को खिलाने के लिए कुछ बाक़ी नहीं रहेगा। लेकिन जो रक़म दूसरे मन्सूबों के लिए रखी है, जैसे बेटियों की शादी करनी है या मकान बनाना है या गाड़ी ख़रीदनी है और उसके वास्ते रक़म जमा करके रखी है तो वह रक़म ज़रूरत से ज़ायद है, उस पर ज़कात वाजिब है।

ज़कात से माल कम नहीं होता

बाज़े लोग यह कहते हैं कि हमने तो ये पैसे बेटी की शादी के लिए रखे हैं। अब अगर उसमें से ज़कात अदा करेंगे तो वह रक़म कम हो जायेगी। यह कहना दुरुस्त नहीं है। इसलिए कि ज़कात तो बहुत मामूली सी यानी ढाई फ़ीसद अल्लाह तआला ने फ़र्ज़ फ़रमायी है यानी एक हज़ार पर पच्चीस रुपये फ़र्ज़ किये हैं, लिहाज़ा अगर किसी के पास छह हज़ार रुपये हैं तो उस पर सिर्फ़ डेढ़ सौ रुपये ज़कात फ़र्ज़ होगी जो बहुत मामूली मात्रा है। और फिर अल्लाह तआला ने

यह निज़ाम ऐसा बनाया है कि जो बन्दा अल्लाह तआला के हुक्म की तामील करते हुए ज़कात अदा करता है तो उसके नतीजे में वह मुफ़लिस नहीं होता बल्कि ज़कात अदा करने के नतीजे में माल में बरकत होती है और अल्लाह तआला उसको और ज़्यादा अता फ़रमाते हैं। हदीस शरीफ़ में जनाब रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने एक ख़ूबसूरत जुमला इरशाद फ़रमाया है कि:

مانقصت صدقة من مال

यानी कोई सदक़ा और कोई ज़कात किसी माल में कमी नहीं करती। मतलब यह है कि इनसान ज़कात की मद में जितना ख़र्च करता है, अल्लाह तआला उसको उतना ही माल और अता फ़रमाते हैं और कम से कम यह तो होता ही है कि जितना माल मौजूद है, उसमें अल्लाह तआला इतनी बरकत अता फ़रमाते हैं कि वह काम जो हज़ारों में निकलना चाहिए था, सैकड़ों में निकल जाता है।

माल जमा करने और गिनने की अहमियत

आज हमारी दुनिया माद्दा-परस्ती (भौतिकवाद) की दुनिया है। इस माद्दा-परस्ती की दुनिया में हर काम का फ़ैसला गिनती से किया जाता है। हर वक़्त इनसान यह गिनता रहता है कि मेरे पास कितने पैसे हैं, कितने पैसे आये और कितने पैसे चले गये। जिसको कुरआन करीम में इस तरह बयान फ़रमाया है कि:

جَمَعَ مَالًا وَّعَدَّدَهٗ

यानी माल जमा करता है और गिनता रहता है।

लिहाज़ा आज गिनती का दौर है, यह देखते हैं कि कितनी गिनती बढ़ी और कितनी घट गयी। लेकिन कोई अल्लाह का बन्दा यह नहीं देखता कि ज़कात अदा करने के नतीजे में घटने के बावजूद अल्लाह तआला ने उस थोड़े से माल में कितना काम निकाल दिया। और अगर ज़कात अदा न करने के नतीजे में गिनती बढ़ गयी तो उस बढ़े हुए

माल के नतीजे में कितनी बे-बरकती आ गयी, कितने मसाइल खड़े हो गये और कितनी मुसीबतों का सामना हो गया। यह अल्लाह तआ़ला का निज़ाम है कि जो बन्दा ज़कात अदा करता है, उसके माल में कमी नहीं होती।

फ़रिश्ते की दुआ़ के हक़दार कौन?

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इरशाद फ़रमाया कि अल्लाह तआ़ला की तरफ़ से एक फ़रिश्ता मुक़र्रर है जो लगातार यह दुआ़ करता रहता है कि:

اَللّٰهُمَّ اَعْطِ مُنْفِقًا خَلَفًا وَمُمْسِكًا تَلَفًا

ऐ अल्लाह! जो शख़्स अल्लाह तआ़ला की राह में ख़र्च करने वाला हो और जो सद्क़ा व ख़ैरात करने वाला हो, उसको उसके माल का दुनिया ही में बदला अ़ता फ़रमाये। आख़िरत में उसको अ़ज़ीम सवाब मिलना ही है लेकिन वह फ़रिश्ता दुआ़ करता है: ऐ अल्लाह! उसको दुनिया में भी बदला अ़ता फ़रमाइये।

और जो शख़्स अपना माल खींच कर और छुपाकर रखता है ताकि मुझे ख़र्च न करना पड़े, ऐ अल्लाह! उसके माल पर बरबादी डालिये और उसके माल को हलाक फ़रमाये।

लिहाज़ा यह सोचना कि हमने तो फ़लाँ मक़सद के लिए यह पैसे रखे हैं और वह मक़सद भी ज़रूरी है, वह मक़सद बेटी की शादी है, घर बनाना है, गाड़ी ख़रीदनी है। अगर हमने ज़कात दे दी तो वे पैसे कम हो जायेंगे, यह ख़्याल दुरुस्त नहीं, बल्कि अगर तुमने ज़कात दे दी और उसके ज़रिये देखने में कुछ कमी भी आ गयी तो यह कमी तुम्हें कोई नुक़सान नहीं पहुँचायेगी बल्कि उसके बदले में अल्लाह तआ़ला और दे देंगे, और जो माल बचा है, उसमें बरकत अ़ता फ़रमायेंगे। और ज़कात अदा करने की वजह से इन्शा-अल्लाह तुम्हारे काम नहीं रुकेंगे।

ज़कात की वजह से कोई शख़्स फ़क़ीर नहीं होता

आज तक किसी शख़्स का काम ज़कात अदा करने की वजह से नहीं रुका, बल्कि मैं चुनौती के साथ कहता हूँ कि कोई शख़्स आज तक ज़कात अदा करने की वजह से मुफ़लिस (ग़रीब) नहीं हुआ। कोई शख़्स एक मिसाल भी पेश नहीं कर सकता कि कोई शख़्स ज़कात अदा करने की वजह से मुफ़लिस हो गया हो।

लिहाज़ा यह जो लोगों में मशहूर है कि जो रक़म हज के लिए रखी हुई हो, उस पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं, यह बात ग़लत है। कोई रक़म किसी भी मक़सद के लिए रखी है और वह रक़म तुम्हारी रोज़मर्रा की ज़रूरतों से फ़ालतू और ज़ायद है तो उस पर ज़कात वाजिब है।

ज़ेवर पर ज़कात फ़र्ज़ है

अगर किसी शख़्स के पास नक़द रक़म तो नहीं है उसके पास ज़ेवर की शक्ल में सोना या चाँदी है तो उस पर भी ज़कात वाजिब है। अक्सर घरों में इतना ज़ेवर होता है जो ज़कात के निसाब की निर्धारित मात्रा को पहुँच जाता है। लिहाज़ा जिसकी मिल्कियत में वह ज़ेवर है, चाहे वह शौहर हो या बीवी हो या बेटा और बेटी हो, उस पर ज़कात वाजिब है। अगर शौहर की मिल्कियत में है तो बीवी पर ज़कात वाजिब है।

आजकल मिल्कियत का मामला भी साफ़ नहीं होता और यह मालूम नहीं होता कि यह ज़ेवर किसकी मिल्कियत है? शरीअत ने इस बात का हुक्म दिया है कि हर बात साफ़ और वाज़ेह होनी चाहिए। लिहाज़ा यह बात भी वाज़ेह (स्पष्ट) होनी चाहिए कि यह ज़ेवर किसकी मिल्कियत है? शौहर की मिल्कियत है या बीवी की मिल्कियत है? अगर अब तक वाज़ेह नहीं थी तो अब वाज़ेह (स्पष्ट) कर लो कि किसकी मिल्कियत है? जिसकी मिल्कियत है उस पर ज़कात वाजिब है।

शायद आप पर ज़कात फ़र्ज़ हो

बहरहाल! ज़कात के निसाब के बारे में यह शरीअ़त का दस्तूर है, अगर इसको सामने रखते हुए देखा जाये तो यह नज़र आयेगा कि बहुत से लोगों पर ज़कात फ़र्ज़ है, मगर वे यह समझ रहे हैं कि हम पर ज़कात फ़र्ज़ नहीं है। इस वजह से वे लोग ज़कात के फ़रीज़े की अदायगी से मेहरूम रहते हैं।

यह ज़कात के निसाब से संबन्धित मुख़्तसर मसला था, अगर ज़िन्दगी बाक़ी रही तो तफ़सील इन्शा-अल्लाह अगले जुमा में अ़र्ज़ करूँगा।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَآ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ٥

बिस्मिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम

ज़कात के चन्द अहम मसाइल

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ نَحْمَدُهٗ وَنَسْتَعِيْنُهٗ وَنَسْتَغْفِرُهٗ وَنُؤْمِنُ بِهٖ وَنَتَوَكَّلُ عَلَيْهِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَيِّئَاتِ اَعْمَالِنَا. مَنْ يَّهْدِهِ اللّٰهُ فَلَا مُضِلَّ لَهٗ وَمَنْ يُّضْلِلْهُ فَلَا هَادِىَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنْ لَّآ اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَحْدَهٗ لَاشَرِيْكَ لَهٗ وَاَشْهَدُ اَنَّ سَيِّدَنَا وَنَبِيَّنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ، صَلَّى اللّٰهُ تَعَالٰى عَلَيْهِ وَعَلٰٓى اٰلِهٖ وَاَصْحَابِهٖ وَبَارَكَ وَسَلَّمَ تَسْلِيْمًا كَثِيْرًا. اَمَّابَعْدُ!

فَاَعُوْذُ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطٰنِ الرَّجِيْمِ ○ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ ○ قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُوْنَ ○ الَّذِيْنَ هُمْ فِيْ صَلَاتِهِمْ خٰشِعُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُوْنَ ○ وَالَّذِيْنَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فٰعِلُوْنَ ○ (سورۃ مؤمنون آیت:۱-۴)

آمنت بالله صدق الله مولانا العظيم وصدق رسوله النبى الكريم ونحن على ذلك من الشاهدين والشاكرين والحمد لله رب العالمين ○

तम्हीद

मोहतरम बुज़ुर्गो और प्यारे भाईयो! पिछले चन्द जुमों से इन आयतों पर बयान हो रहा है। इन आयतों में अल्लाह तआ़ला ने फ़लाह (कामयाबी) पाने वाले मोमिनों की सिफ़तें बयान फ़रमाई हैं। उनमें से दो सिफ़तों का तफ़सीली बयान हो चुका। तीसरी सिफ़त का बयान चल रहा है कि फ़लाह पाने वाले मोमिन वे हैं जो ज़कात अदा करते हैं। ज़कात की अहमियत और ज़कात अदा न करने पर वईद (डाँट और अज़ाब की चेतावनी) और ज़कात के निसाब के बारे में पिछले जुमा को तफ़सील से अ़र्ज़ कर दिया था। आज ज़कात के बारे

में चन्द मसाइल बयान करने का इरादा है जिनकी जानकारी न होने की वजह से हम लोग इस फ़रीज़े को सही तरीक़े पर अदा नहीं कर रहे हैं।

निसाब के मालिक पर ज़कात वाजिब है

यहाँ यह मसला भी याद रखना चाहिए कि अल्लाह तआला ने हर इनसान को उसकी मिल्कियत का मुकल्लफ़ (ज़िम्मेदार) बनाया है। हर इनसान पर उसकी मिल्कियत के हिसाब से अहकाम जारी होते हैं। मिसाल के तौर पर अगर बाप साहिबे निसाब है तो उस पर ज़कात उसकी मिल्कियत के हिसाब से वाजिब है, अगर बेटा भी साहिबे निसाब है तो बेटे पर उसके माल की ज़कात वाजिब है। अगर शौहर साहिबे निसाब है और बीवी भी साहिबे निसाब (यानी निसाब की मात्रा की मालिक) है तो शौहर पर उसके माल की ज़कात वाजिब है और बीवी पर उसके माल की ज़कात वाजिब है। हर एक की मिल्कियत का अलग-अलग एतिबार है।

बाप की ज़कात बेटे के लिए काफ़ी नहीं

बाज़े लोग यह समझते हैं कि घर का जो बड़ा और मुखिया है, चाहे वह बाप हो या शौहर हो, अगर उसने ज़कात निकाल दी तो सब की तरफ़ से ज़कात अदा हो गयी। अब घर के दूसरे व्यक्ति को ज़कात अदा करने की ज़रूरत नहीं। यह बात दुरुस्त नहीं। इसलिए कि जिस तरह बाप के नमाज़ पढ़ लेने से बेटे की नमाज़ अदा नहीं होती बल्कि बेटे को अपनी नमाज़ अलग पढ़नी होगी, और जिस तरह शौहर के नमाज़ पढ़ लेने से बीवी की नमाज़ अदा नहीं होती बल्कि बीवी को अपनी नमाज़ अलग पढ़नी होगी, इसी तरह ज़कात का हुक्म यह है कि घर के अन्दर जो शख़्स भी साहिबे निसाब (ज़कात के निसाब की मात्रा में माल का मालिक) है, चाहे वह बाप है, बेटा है, बेटी है, बीवी

है, शौहर है, सब पर अपनी-अपनी मिल्कियत के हिसाब से अलग-अलग ज़कात वाजिब होगी।

माल पर साल गुज़रने का मसला

एक और मसला जिसमें लोगों को अधिकतर ग़लत-फ़हमी रहती है, वह मसला यह है कि ज़कात उस वक़्त फ़र्ज़ होती है जब माल पर साल गुज़र जाये। साल गुज़रने से पहले ज़कात फ़र्ज़ नहीं होती। आम तौर पर लोग इस मसले का यह मतलब समझते हैं कि हर-हर माल पर अलग-अलग साल गुज़रना ज़रूरी है, हालाँकि यह मतलब नहीं है, बल्कि साल गुज़रने का मतलब यह है कि आदमी सारे साल साहिबे निसाब (ज़कात की मात्रा में माल का मालिक) रहे।

मसलन् किसी शख़्स के पास रमज़ान मुबारक की पहली तारीख़ को दस हज़ार रुपये आ गये। अब यह शख़्स साहिबे निसाब हो गया, अब अगर साल के अक्सर हिस्से में इसके पास उनमें से छह हज़ार रुपये मौजूद रहे हैं या छह हज़ार रुपये की मालियत का ज़ेवर रहा है, या तिजारत का माल रहा है तो वह साहिबे निसाब है।

अगर दरमियान साल में उसके पास और रुपये आ गये तो उस पर अलग से मुकम्मल साल का गुज़रना ज़रूरी नहीं है, बल्कि अगले रमज़ान की पहली तारीख़ को जितनी रक़म या ज़ेवर या माले तिजारत होगा, उस पर ज़कात वाजिब होगी।

दो दिन पहले आने वाले माल में ज़कात

मिसाल के तौर पर रमज़ान की पहली तारीख़ से दो दिन पहले उसके पास दस हज़ार रुपये और आ गये तो अब रमज़ान की पहली तारीख़ को उस दस हज़ार रुपये में भी ज़कात वाजिब हो जायेगी। उस पर अलग से साल गुज़रना ज़रूरी नहीं है, क्योंकि वह शख़्स पूरे साल साहिबे निसाब रहा है। इसलिए अगर दरमियान में कोई इज़ाफ़ा हो जाये तो उन पर अलग से साल गुज़रना ज़रूरी नहीं।

ज़कात किन चीज़ों में फ़र्ज़ होती है?

एक मसला यह है कि किन चीज़ों में ज़कात फ़र्ज़ होती है? जकात इन चीज़ों में फ़र्ज़ होती है:-

१: नक़द रुपया, चाहे बैंक में हो या घर पर हो। उस पर ज़कात फ़र्ज़ है।

२: सोने चाँदी और ज़ेवर पर भी ज़कात फ़र्ज़ है। चाहे ज़ेवर इस्तेमाल हो रहा हो या यूँ ही रखा हुआ हो। और वह ज़ेवर जिसकी मिल्कियत में होगा उसी पर ज़कात फ़र्ज़ होगी। इस मामले में भी हमारे समाज में बड़ी बद-नज़्मी (अनियमितता) पायी जाती है।

घर में औरत के पास जो ज़ेवर होता है, उसके बारे में यह वाज़ेह (स्पष्ट) नहीं होता कि यह किसकी मिल्कियत है। क्या वह औरत की मिल्कियत है या शौहर की मिल्कियत है? शरई एतिबार से इसको वाज़ेह करना ज़रूरी है।

ज़ेवर किसकी मिल्कियत होगा?

मसलन् शादी के मौक़े पर औरत को जो ज़ेवर चढ़ाया जाता है, उसमें से कुछ ज़ेवर लड़की वालों की तरफ़ से चढ़ाया जाता है और कुछ ज़ेवर लड़के वालों की तरफ़ से चढ़ाया जाता है। उसका क़ायदा यह है कि जो ज़ेवर लड़की वालों की तरफ़ से चढ़ाया जाता है, वह सौ फ़ीसद लड़की की मिल्कियत होता है और लड़की ही पर उसकी ज़कात फ़र्ज़ है। और जो ज़ेवर लड़के वालों की तरफ़ से चढ़ाया जाता है, वह दुल्हन की मिल्कियत नहीं होता बल्कि वह एक तरह से पहनने के लिये दिया जाता है, उसका मालिक लड़का होता है। लिहाज़ा उस ज़ेवर की ज़कात भी उसी पर फ़र्ज़ होगी। अलबत्ता अगर लड़का अपनी बीवी से यह कह दे कि मैंने तुम्हें यह ज़ेवर दे दिया, तुम इसकी मालिक हो, तो अब ज़ेवर औरत की मिल्कियत में आ जायेगा और उसकी ज़कात औरत ही पर फ़र्ज़ होगी।

लिहाज़ा इसको वाज़ेह (स्पष्ट) करने की ज़रूरत है कि घर में जो ज़ेवर है वह किसकी मिल्कियत है? इसकी वज़ाहत न होने की वजह से बाद में झगड़े भी पैदा हो जाते हैं।

ख़ुलासा यह है कि जो ज़ेवर शौहर की मिल्कियत है, उसकी ज़कात शौहर पर फ़र्ज़ होगी, और जो ज़ेवर औरत की मिल्कियत है, उसकी ज़कात औरत पर फ़र्ज़ है।

ज़ेवर की ज़कात अदा करने का तरीक़ा

ज़ेवर की ज़कात अदा करने का तरीक़ा यह है कि ज़ेवर का वज़न कर लिया जाये, चूँकि ज़कात सोने के वज़न पर फ़र्ज़ होती है, इसलिए अगर ज़ेवर में मोती लगे हुए हैं या कोई और धात उसके अन्दर शामिल है तो वह वज़न में शामिल नहीं होगा। लिहाज़ा ख़ालिस सोना देखा जाये कि उस ज़ेवर में कितना सोना है? फिर उस वज़न को किसी जगह लिखकर महफ़ूज़ कर लिया जाये कि फ़लाँ ज़ेवर का इतना वज़न है। फिर जिस तारीख़ में ज़कात का हिसाब किया जाये मसलन् रमज़ान शरीफ़ की पहली तारीख़ को ज़कात की तारीख़ मुक़र्रर की हुई है तो अब रमज़ान शरीफ़ की पहली तारीख़ को बाज़ार से सोने की क़ीमत मालूम की जाये कि आज बाज़ार में सोने की क्या क़ीमत है? क़ीमत मालूम करने के बाद इसका हिसाब निकाला जाये कि किस ज़ेवर में कितनी मालियत का सोना है, उस मालियत पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात निकाली जाये।

मसलन् अगर उस सोने की मालियत एक हज़ार रुपये है तो उस पर पच्चीस रुपये ज़कात वाजिब होगी और अगर दो हज़ार है तो पचास रुपये वाजिब होगी, और अगर चार हज़ार रुपये है तो सौ रुपये ज़कात वाजिब होगी।

इस तरह हिसाब करके ढाई फ़ीसद ज़कात अदा कर दी जाये। सोने की क़ीमत उस दिन की मोतबर होगी जिस दिन आप ज़कात का

हिसाब कर रहे हैं, जिस दिन आपने सोना ख़रीदा था उस दिन की क़ीमत मोतबर नहीं होगी।

तिजारत के माल में ज़कात

तीसरी चीज़ जिसमें ज़कात फ़र्ज़ होती है, वह तिजारत का माल है। मसलन् किसी शख़्स ने कोई दुकान खोली हुई है, अब उस दुकान में जितना माल रखा है, उसकी क़ीमत लगाई जायेगी और क़ीमत इस तरह लगाई जायेगी कि अगर उसका पूरा सामान आज एक साथ फ़रोख़्त किया जाये तो उसकी क्या क़ीमत लगेगी। बस क़ीमत का ढाई फ़ीसद ज़कात में अदा करना होगा।

कम्पनी के शेयरों में ज़कात

अगर किसी शख़्स ने किसी कम्पनी के शेयर ख़रीदे हुए हैं तो वे शेयर भी तिजारत के माल में दाख़िल हैं। लिहाज़ा उन शेयरों की जो बाज़ारी क़ीमत है, उस क़ीमत का ढाई फ़ीसद ज़कात के तौर पर अदा करना होगा। आजकल कम्पनियाँ ख़ुद शेयरों की ज़कात काट लेती हैं, लेकिन वे कम्पनियाँ शेयरों की असल क़ीमत पर ज़कात काटती हैं, बाज़ारी क़ीमत पर नहीं काटतीं। (१)

मिसाल के तौर पर एक कम्पनी के शेयर की असल क़ीमत दस रुपये है और बाज़ार में उसकी क़ीमत पचास रुपये है। अब कम्पनी तो दस रुपये के हिसाब से ज़कात काट लेगी लेकिन दरमियान में चालीस रुपये का जो फ़र्क़ है, उसकी ज़कात शेयर के मालिक को ख़ुद अदा करनी ज़रूरी है।

(१) यह पाकिस्तान की बात है कि वहाँ की कम्पनियाँ शेयरों की असल क़ीमत के हिसाब से ज़कात की रक़म काटकर हुकूमत के ज़कात फ़ण्ड में जमा कर देती हैं। मुहम्मद इमरान क़ासमी

मकान या प्लाट में ज़कात

अगर किसी शख़्स ने कोई मकान या प्लाट फ़रोख़्त करने की नीयत से ख़रीदा है, यानी इस नीयत से ख़रीदा है कि मैं इस प्लाट को फ़रोख़्त करके इससे नफ़ा कमाऊँगा, तो उस मकान और प्लाट की मालियत में भी ज़कात वाजिब होगी। लेकिन अगर किसी शख़्स ने कोई मकान या प्लाट फ़रोख़्त करने की नीयत से नहीं ख़रीदा बल्कि रिहाईश की नीयत से ख़रीदा है या इस नीयत से ख़रीदा है कि मैं इस मकान को किराये पर देकर इससे आमदनी हासिल करूँगा तो इस सूरत में मकान की मालियत पर ज़कात वाजिब नहीं होगी। अलबत्ता जो किराया आयेगा वह नक़्दी में शामिल होकर उस पर ढाई फ़ीसद के हिसाब से ज़कात अदा की जायेगी।

कच्चे माल में ज़कात

बहरहाल! बुनियादी तौर पर तीन चीज़ों में ज़कात वाजिब होती है:

१: नक़्दी

२: ज़ेवर

३: तिजारत का माल।

माले तिजारत में ख़ाम (कच्चा) माल भी शामिल होगा। मसलन् अगर किसी कम्पनी के अन्दर ख़ाम माल (कच्चा माल) पड़ा हुआ है तो ज़कात का हिसाब जिस दिन किया जायेगा, उस दिन उस ख़ाम माल की क़ीमत लगाकर उसकी ज़कात भी अदा करनी ज़रूरी होगी, और जो माल तैयार है, उसपर भी ज़कात वाजिब होगी।

बेटे की तरफ़ से बाप का ज़कात अदा करना

लेकिन अगर ज़कात घर के तीन अफ़राद (व्यक्तियों) पर अलग अलग फ़र्ज़ है और उनमें कोई एक दूसरे को इजाज़त दे दे कि मैं आपको इजाज़त देता हूँ कि आप मेरी तरफ़ से ज़कात अदा कर दें।

फिर वह दूसरा शख़्स उसकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दे, चाहे अपने पैसों से अदा कर दे तब भी ज़कात अदा हो जायेगी।

मिसाल के तौर पर एक शख़्स के तीन बेटे बालिग़ हैं और तीनों साहिबे निसाब हैं, यानी तीनों बेटों की मिल्कियत में साढ़े बावन तौले चाँदी की क़ीमत के बराबर क़ाबिले ज़कात माल मौजूद है, लिहाज़ा तीनों बेटों में से हर एक पर अलग-अलग ज़कात फ़र्ज़ है, और बाप पर साहिबे निसाब होने की वजह से अलग ज़कात फ़र्ज़ है। लेकिन अगर बाप अपने बेटों की तरफ़ से ज़कात अदा करना चाहे तो कर सकता है, शर्त यह है कि बेटों की तरफ़ से इजाज़त हो। इजाज़त के बाद अगर बाप उनकी तरफ़ से ज़कात अदा कर दे तो उनकी ज़कात अदा हो जायेगी।

बीवी की तरफ़ से शौहर का ज़कात अदा करना

इसी तरह अगर शौहर भी साहिबे निसाब है और बीवी भी साहिबे निसाब है, क्योंकि उसके पास इतना ज़ेवर है जो ज़कात के निसाब की मात्रा या उससे ज़्यादा है। लेकिन बीवी के पास ज़कात अदा करने के लिए पैसे नहीं हैं। अब वह बीवी शौहर को ज़कात अदा करने पर मजबूर तो नहीं कर सकती लेकिन अगर शौहर यह कहे कि तुम्हारी ज़कात मैं अदा कर देता हूँ और बीवी उसको इजाज़त दे दे और फिर शौहर अपने पैसों से उसकी ज़कात अदा कर दे तो बीवी की ज़कात भी अदा हो जायेगी। अलबत्ता अगर शौहर बख़ील है और बीवी की तरफ़ से ज़कात अदा करने पर आमादा नहीं होता, तब भी बीवी पर अपने माल की ज़कात अदा करना फ़र्ज़ होगा, चाहे ज़कात की अदायगी के लिए उसको अपना ज़ेवर ही क्यों न बेचना पड़े।

ज़ेवर की ज़कात न निकालने पर वईद

हदीस शरीफ़ में आता है कि एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम घर में तशरीफ़ लाये। हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु

अन्हा को देखा तो उनके हाथ की उंगलियों में चाँदी की अंगूठियाँ नज़र आईं। आपने उनसे पूछा कि ये अंगूठियाँ कहाँ से आईं? हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैंने ये कहीं से हासिल की हैं, इसलिए कि ये मुझे अच्छी लग रही थीं।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उनसे पूछा कि क्या तुम इसकी ज़कात निकालती हो? हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा ने अर्ज़ किया या रसूलल्लाह! मैंने इसकी ज़कात नहीं निकाली, आपने फ़रमाया कि अगर तुम यह चाहती हो कि इसके बदले तुम्हें आख़िरत में आग की अंगूठियाँ पहनायी जायें तो बेशक इसकी ज़कात न निकालो। लेकिन अगर आग की अंगूठियाँ पहनने से बचना है तो इसकी ज़कात अदा करो।

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने ज़ेवर की ज़कात के बारे में इतनी ताकीद फ़रमायी है, लिहाज़ा औरतों को ज़ेवर की ज़कात अदा करने का बहुत एहतिमाम करना चाहिए बशर्ते कि वह ज़ेवर उनकी मिल्कियत में हो।

औरत की मिल्कियत में ज़ेवर होने का मतलब यह है कि वह ज़ेवर या तो उसने अपने पैसों से ख़रीदा हो या किसी ने उसको हदिये (तोहफ़े वग़ैरह) में दिया हो, या वह शादी के मौक़े पर अपनी माँ के घर से लायी हो, या शौहर वह ज़ेवर मेहर के तौर पर बीवी की मिल्कियत में दे दे।

मसलन् मेहर पचास हज़ार रुपये था और शादी के मौक़े पर शौहर की तरफ़ से ज़ेवर चढ़ाया गया, लेकिन चूँकि उस वक़्त कोई वज़ाहत शौहर ने नहीं की थी, इसलिए वह ज़ेवर शौहर की मिल्कियत में था। अब अगर वह शौहर यह कह दे कि मैंने शादी के मौक़े पर जो ज़ेवर चढ़ाया है, वह मैं तुम्हें मेहर के तौर पर देता हूँ। यह तुम्हारा मेहर का हिस्सा है तो इस सूरत में उस ज़ेवर के ज़रिये मेहर अदा हो जायेगा और औरत उस ज़ेवर की मालिक बन जायेगी।

अब उस ज़ेवर की ज़कात बीवी पर फ़र्ज़ होगी, शौहर पर फ़र्ज़ नहीं होगी। अब बीवी को इख़्तियार है कि जो चाहे करे, चाहे ख़ुद पहने या फ़रोख़्त कर दे या किसी को दे दे। शौहर को इजाज़त नहीं कि वह बीवी को इन कामों से रोके, इसलिए कि वह ज़ेवर अब उसकी मिल्कियत में आ चुका है।

बहरहाल! हर चीज़ का यही हुक्म है कि जो शख़्स जिस चीज़ का मालिक है, उसकी ज़कात भी उसी पर फ़र्ज़ होगी। अलबत्ता अगर दूसरा शख़्स उसकी इजाज़त से अपने पास से उसकी तरफ़ से ज़कात दे दे तो ज़कात अदा हो जायेगी। मसलन् बीवी की तरफ़ से शौहर दे दे या औलाद की तरफ़ से बाप दे दे, बशर्ते कि इजाज़त हो, बग़ैर इजाज़त के ज़कात अदा नहीं होगी, इसलिए कि यह उसका अपना फ़रीज़ा है।

आज हमारे समाज में ज़कात के मसाइल से नावाक़फ़ियत बहुत बढ़ी हुई है। इसकी वजह से यह हो रहा है कि बहुत से लोग ज़कात अदा करते हैं, लेकिन बहुत सी बार वह ज़कात सही तरीक़े से अदा नहीं होती और उसके नतीजे में ज़कात अदा न होने का वबाल सर पर रहता है। इसलिए ख़ुदा के लिए ज़कात के बुनियादी मसाइल को सीख लें, यह कोई ज़्यादा मुश्किल काम नहीं। क्योंकि इनसान के पास जितने असासे (संपत्तियाँ) हैं, उनमें से सिर्फ़ तीन चीज़ों पर ज़कात वाजिब होती है- एक सोने चाँदी पर, दूसरे नक़द रुपये पर और तीसरे तिजारत के सामान पर। यानी हर वह चीज़ जो फ़रोख़्त करने की नीयत से ख़रीदी गयी हो, उस पर ज़कात वाजिब है।

इनके अलावा घर के अन्दर जो इस्तेमाल की चीज़ें हैं- मसलन् घर का फ़र्नीचर, गाड़ी, रहने का मकान, इस्तेमाल के बरतन वग़ैरह, इन पर ज़कात नहीं। अलबत्ता घर में या बैंक में जो रक़म रखी है या घर में जो ज़ेवर और सोना चाँदी है, या कोई मकान या प्लाट फ़रोख़्त करने की नीयत से ख़रीदा है, तो उन पर ज़कात वाजिब है। लेकिन

अगर रहने के लिए मकान ख़रीदा है तो उस पर ज़कात वाजिब नहीं।

बहरहाल! ज़कात की अदायगी का मामला आसान है, ज़्यादा मुश्किल नहीं है, लेकिन ज़रा सा समझ लेने की ज़रूरत है।

अल्लाह तआला हम सबको दीन के इस सतून को सही समझने की भी तौफ़ीक़ अता फ़रमाये और इसकी ठीक-ठीक अदायगी की भी तौफ़ीक़ अता फ़रमाये। आमीन।

وَاٰخِرُ دَعْوَانَا اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ۝